आसन प्राणायाम मुद्रा बंध



स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

आसन
प्राणायाम
मुद्रा
बंध

आसन प्राणायाम

मुद्रा बंध

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर द्वारा आयोजित नौ-मासिक योग शिक्षक प्रशिक्षण सत्र (१९६७-६८) एवं त्रिवर्षीय संन्यास सत्र (१९७०-७३) की अवधि में दिए गये प्रवचनों का सार

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर (बिहार)

आस्ट्रेलियन, बेल्जियम, जर्मन, डेनिश व फ्रेंच संस्करण १९७३
तृतीय संस्करण १९७३
स्पेनिश संस्करण १९७५
चतुर्थ संस्करण १९७६
पंचम संस्करण १९७९
षष्ठम् संस्करण १९८६
सप्तम संस्करण १९९०
अष्टम संस्करण १९९२
नवम् संस्करण १९९५
दशम संस्करण १९९६
एकादश संस्करण १९९७
द्वादश संस्करण १९९८
त्रयोदश संस्करण २०००
चतुर्दश संस्करण २००१
पंचदश संस्करण २००३
षष्ठदश संस्करण २००४

ISBN:81–85787-52-2

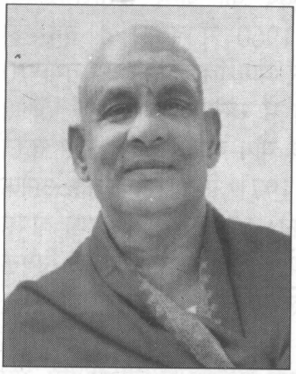
प्रकाशक :

स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती
अवैतनिक सचिव
बिहार योग विद्यालय
गंगा दर्शन, मुंगेर (बिहार)

मुद्रक :

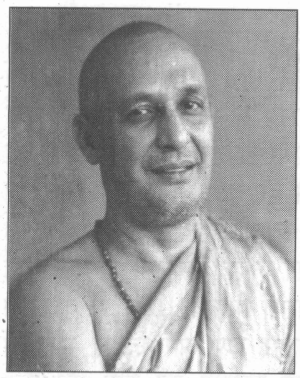
भार्गव ऑफसेट्स, मच्छोदरी, वाराणसी

स्वामी शिवानन्द सरस्वती



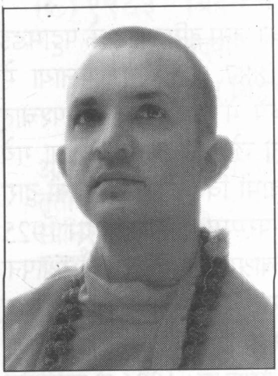
स्वामी शिवानन्द का जन्म तमिलनाडु के पट्टामडई में 8 सितम्बर 1887 को हुआ। मलाया में चिकित्सक के रूप में कार्य करने के पश्चात् वे चिकित्सा कार्य छोड़कर ऋषिकेश आ गये तथा 1924 में स्वामी विश्वानन्द सरस्वती द्वारा दशनामी संन्यास-परम्परा में दीक्षित हुए। 1925 में उन्होंने सत्य सेवाश्रम औषधालय की स्थापना की। सम्पूर्ण भारत वर्ष में भ्रमण करते हुए लोगों को योगाभ्यास तथा आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करने की प्रेरणा दी। 1936 में ऋषिकेश में दिव्य जीवन संघ की स्थापना की। 1945 में शिवानन्द आयुर्वेदिक फार्मेसी, 1948 में योग वेदान्त अरण्य अकादमी तथा 1957 में शिवानन्द नेत्र चिकित्सालय की स्थापना की। योग स्वास्थ्य तथा आध्यात्मिक जीवन पर दो सौ से भी अधिक पुस्तकों का प्रणयन किया।

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती



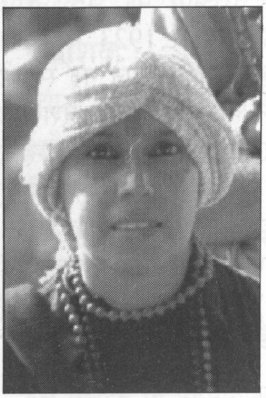
स्वामी सत्यानन्द सरस्वती का जन्म उत्तर प्रदेश के अल्मोड़ा ग्राम में 1923 में हुआ। 1943 में उन्हें ऋषिकेश में अपने गुरु स्वामी शिवानन्द के दर्शन हुए और उन्होंने दशनामी संन्यास पद्धति अपना ली। 1955 में उन्होंने परिव्राजक रूप में भ्रमण करने के लिए शिवानन्द आश्रम छोड़ दिया। तत्पश्चात् 1956 में उन्होंने अन्तरराष्ट्रीय योग मित्र मण्डल एवं 1963 में बिहार योग विद्यालय की स्थापना की। अगले 20 वर्षों तक वे योग के अग्रणी प्रवक्ता के रूप में विश्व भ्रमण करते रहे। अस्सी से अधिक ग्रन्थों के प्रणेता स्वामीजी ने ग्राम्य-विकास की भावना से 1987 में दातव्य संस्था 'शिवानन्द मठ' की एवं योग पर वैज्ञानिक शोध की दृष्टि से योग शोध संस्थान की स्थापना की। 1988 में अपने मिशन से अवकाश ले, क्षेत्र संन्यास अपनाकर सार्वभौम दृष्टि से परमहंस संन्यासी का जीवन अपना लिया है।

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती



स्वामी निरंजनानन्द का जन्म छत्तीसगढ़ के राजनाँदगाँव में 1960 में हुआ। 4 वर्ष की अवस्था में बिहार योग विद्यालय आये तथा 10 वर्ष की अवस्था में संन्यास परम्परा में दीक्षित हुए। आश्रमों एवं योग केन्द्रों का विकास करने के लिए उन्होंने 1971 से 11 वर्षों तक अनेक देशों की-यात्रा की। 1983 में उन्हें भारत बापस बुलाकर बिहार योग विद्यालय का अध्यक्ष नियुक्त किया गया। अगले 11 वर्षों तक उन्होंने गंगादर्शन, शिवानन्द मठ तथा योग शोध संस्थान के विकास-कार्य को दिशा दी। 1990 में वे परमहंस-परम्परा में दीक्षित हुए और 1993 में परमहंस सत्यानन्द के उत्तराधिकारी के रूप में उनका अभिषेक किया गया। 1993 में ही उन्होंने अपने गुरु के संन्यास की स्वर्ण-जयन्ती के उपलक्ष्य में एक विश्व योग सम्मेलन का आयोजन किया। 1994 में उनके मार्गदर्शन में योग-विज्ञान के उच्च अध्ययन के संस्थान, बिहार योग भारती की स्थापना हुई।

स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती



स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती का जन्म चन्द्रनगर (प० बंगाल) में 24 मार्च 1953 को हुआ था। दिल्ली विश्वविद्यालय से स्नातक की डिग्री प्राप्त करने के पश्चात् एयर इण्डिया में सेवा प्रारम्भ की एवं सारे विश्व में दूर-दूर तक यात्रायें कीं। 22 वर्ष की उम्र में स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के मार्गदर्शन एवं दिशा निर्देशों से उन्हें संन्यास मार्ग ग्रहण करने की प्रेरणा मिली। 1981 से वे अपने गुरु के साथ लगातार देश और विदेश में यात्रा करती रहीं। स्वामी सत्संगी की योग एवं तन्त्र परम्परा में एवं आधुनिक विज्ञान एवं दर्शनों में गहरी पैठ है। आज के युग में एक ऐसी महिला संन्यासिनी शायद ही मिलें, जिन्हें व्यावहारिक एवं आधुनिक दृष्टि के साथ-साथ प्राचीन आध्यात्मिक परम्पराओं पर पूर्ण अधिकार हो।

रिखिया में शिवानन्द मठ के कार्यकलापों का वे प्रभावी मार्गदर्शन करती हैं तथा रिखिया पंचायत के कमजोर, असुविधाग्रस्त एवं उपेक्षित वर्ग के लिए अथक कार्य करती हैं।

विषय सूची

भूमिका

अनेक लोग आसनों का संबंध शक्तिशाली शारीरिक व्यायाम या शरीर को मांसल बनाने वाली प्रक्रियाओं से जोड़ते हैं। यह धारणा पूर्णतः गलत है। आसन न तो शरीर को झटके के साथ हिलाने-डुलाने के लिए बनाये गये हैं और न अनावश्यक मांसपेशियों को बढ़ाने के लिए ही उनकी रचना की गयी है। उन्हें व्यक्ति के विभिन्न स्वरूप, अवस्था या विभिन्न स्तरों के अंग-विन्यास ही माना जाना चाहिए।

अपनी अंतरात्मा के साथ एकाकार होने के अनुभव को 'योग' कहते हैं। यह 'एकता' जड़ और चेतन के द्वैतभाव को परम तत्व में मिला देने से प्राप्त होती है।

'आसन' शरीर की वह स्थिति है जिसमें आप अपने शरीर और मन के साथ शांत, स्थिर एवं सुख से रह सकें।

पातंजलि रचित प्राचीन ग्रंथ 'योगसूत्र' में योगासनों की संक्षिप्त परिभाषा दी गई है – 'स्थिरं सुखं आसनम्' ।

अतः इस संदर्भ में कहा जा सकता है कि आसनों का अभ्यास बिना कष्ट के एक ही स्थिति में अधिक से अधिक समय तक बैठने की क्षमता को बढ़ाने के लिये किया जाता है– उदाहरणार्थ ध्यान के समय ।

आसनों का अभ्यास स्वास्थ्य-लाभ एवं उपचार के लिए भी किया जा सकता है। मांसपेशियों में साधारण खिंचाव, आंतरिक अंगों की मालिश एवं सम्पूर्ण स्नायुओं में सुव्यवस्था आने से अभ्यासी के स्वास्थ्य में अद्भुत सुधार होता है। असाध्य रोगों में लाभ एवं उनका पूर्णरूपेण निराकरण भी योगाभ्यासों के माध्यम से किया जा सकता है।

अन्य स्वास्थ्य प्रणालियों की तुलना में योगासन

शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक व्यक्तित्व के विकास में भी आसनों का विशेष महत्व है जबकि अन्य शुद्ध व्यायामों का प्रभाव केवल शरीर की मांसपेशियों एवं हड्डियों पर ही होता है। शारीरिक व्यायाम शीघ्रतापूर्वक एवं अधिक श्वास-प्रश्वास की क्रिया के साथ किया जाता है। नट के प्रदर्शन, शरीर को पुष्ट करने वाले व्यायाम, भार उठाने वाली प्रणालियाँ स्वस्थ व्यक्तियों में मांस के विकास हेतु उपयुक्त हैं। विकसित मांसपेशियों के लिये अधिक भोजन और रक्त-आपूर्ति की आवश्यकता पड़ती है। परिणामतः हृदय को अधिक

कार्य करना पड़ता है तथा श्वास-प्रश्वास प्रणाली का कार्य भी अपेक्षाकृत बढ़ जाता है। इस प्रकार प्राण शक्ति का ह्रास होता है। इन व्यायामों के अभ्यासोपरान्त एक युवक अपने को पूर्ण स्वस्थ एवं शक्तिशाली अनुभव कर सकता है, परन्तु बढ़ती उम्र के साथ उसके विभिन्न अंगों की कार्य प्रणाली मंद पड़ जाती है। हड्डियों के संधि-स्थल में स्थित कोमल अस्थियों के अधिक प्रयोग के कारण शरीर के विभिन्न अंगों की लोच समाप्त होने लगती है और गठिया आदि की समस्यायें उत्पन्न होने लगती हैं। असामान्य रूप से विकसित मांसपेशियाँ अपना सुदृढ़ आकार खोकर ढीली पड़ने लगती हैं, उनमें स्थित तंतु चर्बी के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं। शरीर-गठन के अभ्यासों का त्याग कर देने पर युवावस्था में बढ़ी हुई मांसपेशियों के स्थान पर तेजी से चर्बी बढ़ने लगती है।

श्रमसाध्य व्यायाम तथा वजन उठाने वाले अभ्यास और शरीर गठन की अन्य विधियाँ प्रत्येक व्यक्ति के लिये उपयोगी नहीं होतीं। बीमार या दुर्बल व्यक्ति इनका अभ्यास नहीं कर सकता। वृद्ध या बच्चे निश्चित रूप से इनका अभ्यास नहीं कर सकते।

क्या आसन इनसे भिन्न हैं? हाँ, आसन इनसे पूर्णतः भिन्न हैं तथा अधिक लाभप्रद भी हैं। आसनों का अभ्यास आराम से, धीरे-धीरे व एकाग्रता के साथ किया जाता है। इस प्रकार बाह्य एवं आंतरिक दोनों ही संस्थानों पर प्रभाव पड़ता है। अतः स्नायुमंडल, अंतःस्रावी ग्रंथियाँ और आंतरिक अंग तथा मांसपेशियाँ सुचारु रूप से कार्य करने लगती हैं। इन आसनों का प्रभाव शरीर एवं मन पर पड़ता है जिससे अनेक दुर्बलताओं से मुक्ति मिलती है। इनका अभ्यास स्वस्थ, अस्वस्थ, युवा, वृद्ध सभी कर सकते हैं। एकाग्रता एवं ध्यान के लिए ये बहुत उपयोगी हैं। वास्तव में व्यायाम की अन्य विधियाँ शरीर में विषैले पदार्थों की वृद्धि करती हैं जबकि योगासनों का अभ्यास इनकी मात्रा को न्यून करता है।

अब आप स्वयं से प्रश्न कीजिये– 'यदि आसनों में व्यक्तित्व के प्रत्येक पहलू को प्रभावित करने की क्षमता है तो मैं शारीरिक व्यायाम की अन्य विधियों का अभ्यास क्यों कर रहा हूँ?'

सामान्य लाभ

शारीरिक : आसनों से शरीर की सबसे महत्वपूर्ण 'अन्तःस्रावी ग्रन्थि प्रणाली' नियंत्रित एवं सुव्यवस्थित होती है। परिणामतः समस्त ग्रंथियों से

उचित मात्रा में रस का स्राव होने लगता है। इसका सुप्रभाव हमारे शारीरिक स्वास्थ्य के साथ-साथ जीवन के प्रति हमारे मानसिक दृष्टिकोण पर भी पड़ता है। यदि किसी एक ग्रन्थि का भी कार्य ठीक से संचालित न हो तो इसका कुप्रभाव स्वास्थ्य पर स्पष्ट दिखाई देता है। अतः यह बहुत महत्वपूर्ण विषय है कि इस प्रणाली को सुचारु रूप से संचालित रखा जाये। रोग-पीड़ित अंगों को निरोग कर, पुनर्जीवित कर सामान्य कार्य के योग्य बनाया जा सकता है।

मांसपेशियाँ, हड्डियाँ, स्नायुमंडल, ग्रंथि प्रणाली, श्वसन प्रणाली, उत्सर्जन प्रणाली, रक्त संचालन प्रणाली सभी एक-दूसरे से संबंधित हैं। वे एक-दूसरे की सहयोगी हैं, एक-दूसरे का विरोध नहीं कर सकतीं। आसन शरीर को लोचदार तथा परिवर्तित वातावरण के अनुकूल ढालने के योग्य बनाते हैं। पाचन क्रिया तीव्र हो जाती है। उचित मात्रा में पाचक रस तैयार होता है। अनुकंपी (sympathetic) तथा परानुकंपी (parasympathetic) तंत्रिका प्रणालियों में संतुलन आ जाता है। फलस्वरूप इनके द्वारा नियंत्रित आंतरिक अंगों के कार्य में संतुलन आता है।

सारांशतः हम कह सकते हैं कि आसनों के अभ्यास से शारीरिक स्वास्थ्य बना रह सकता है तथा अस्वस्थ शरीर को सक्रिय एवं रचनात्मक कार्य करने की प्रेरणा मिलती है।

मानसिक : आसन मन को शक्तिशाली बनाता है और दुख-दर्द सहन करने की शक्ति प्रदान करता है। दृढ़ता और एकाग्रता की शक्ति विकसित करता है। आसनों के नियमित अभ्यास से मस्तिष्क शक्तिशाली एवं संतुलित बना रहता है। बिना विचलित हुए आप शान्त मन से संसार के दुख, चिन्ताओं एवं समस्याओं का सामना कर सकेंगे। कठिनाइयाँ पूर्ण मानसिक स्वास्थ्य हेतु सीढ़ियाँ बन जाती हैं। आसनों का अभ्यास व्यक्ति की सुप्त शक्तियों को जागृत करता है। उसमें आत्मविश्वास आता है, व्यवहार तथा कार्यों से वह दूसरों को प्रेरणा देने लगता है।

आध्यात्मिक : आसन राजयोग के अष्टांग मार्ग का तृतीय सोपान है। इस दृष्टि से इसका कार्य समाधि की ओर अग्रसर करने वाले उच्च यौगिक अभ्यास – प्रत्याहार, धारणा, ध्यान आदि के लिये शरीर को स्थिर बनाना है। हठयोग का गहन संबंध शरीर को उच्च आध्यात्मिक प्रक्रिया के लिये तैयार करने से है। इसमें आसनों द्वारा शरीर शुद्धि को विशेष महत्व दिया गया है। *हठयोग प्रदीपिका तथा घेरण्ड संहिता* जैसे प्राचीन ग्रंथों में इनका विस्तृत

वर्णन मिलता है। अतः हम कह सकते हैं कि आसन स्वयं आध्यात्मिक अनुभव भले ही न करा सकें परन्तु वे आध्यात्मिक मार्ग का एक सोपान हैं। कुछ लोगों का भ्रम है कि आसन केवल शारीरिक क्रियायें हैं तथा आध्यात्मिक मार्ग में उन्नति से उनका कोई सम्बन्ध नहीं है। यह धारणा पूर्णतः गलत है क्योंकि आसनों में दक्षता प्राप्त किये बिना आध्यात्मिक शक्ति का जागरण असम्भव है।

क्या आधुनिक व्यक्ति के लिये आसन उपयोगी हैं?

हाँ, निश्चित रूप से। इस आधुनिक युग में हमारा जीवन पूर्णतः मशीनों पर निर्भर करता है। हमारी खाने की आदतें, हमारे रहने का रंग-ढंग बिल्कुल कृत्रिम है। हमारा जीवन प्रकृति से बहुत दूर हट चुका है और अनेक रूपों में उसने अपने प्राकृतिक सौन्दर्य को खो दिया है। हमारा भोजन बनावटी रसायनों का मिश्रण रह गया है, जो धीरे- धीरे लेकिन निश्चित रूप से हमारे शरीर एवं व्यक्तित्व पर घातक प्रभाव डालता है। योगासनों का अभ्यास हमें पुनः अपना प्राकृतिक स्वास्थ्य और सौन्दर्य प्रदान कर सकता है।

शारीरिक आराम और इन्द्रिय सुख के लिये आधुनिक मनुष्य के पास अनेक सुविधायें हैं। वह कार्यालय में काम करता है, मोटे-मोटे फोम के गद्दों पर सोता है, हर जगह कार से यात्रा करता है, मनोरंजन के लिये सिनेमा या रात्रि-क्लबों में जाता है और आधुनिक जीवन के नकारात्मक प्रभावों पर काबू पाने के लिये शान्ति और विश्राम की खोज में नींद की गोलियाँ तथा अन्य प्रकार की दवाइयाँ लेता है। लेकिन शान्ति, विश्राम और सुख के बजाय उसे अनेक प्रकार के शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक तनावों का सामना करना पड़ता है। समाज की दुश्चिन्ताओं और कुंठाओं के भार से मुक्त होने का उसे कोई रास्ता नहीं मिलता। क्या ऐसा कोई उपाय है जिससे उसे आराम मिल सके? हाँ, योगाभ्यास के द्वारा। योगासनों के अभ्यास से वह आधुनिक सभ्य जीवन के रोग– जैसे कब्ज, गठिया, जकड़न, निराशा, कुण्ठा, तनाव आदि से अपने आप को मुक्त कर सकता है। आसनों के अभ्यासी जीवन के उत्तरदायित्वों एवं समस्याओं का सामना करने के लिये अपने में अधिक शक्ति और स्फूर्ति पायेंगे। पारिवारिक एवं सामाजिक सम्बन्ध स्वतः अधिक सामंजस्यपूर्ण हो जायेंगे।

वैज्ञानिक आविष्कारों के इस आधुनिक युग में जीवन को आराममय

बनाने के असंख्य साधन हैं, परंतु बिरले लोग ही इस विलास-सामग्री का आनन्द ले पाते हैं। यद्यपि यह बात एकदम उल्टी लगती है, किन्तु है सत्य। बहुत से लोगों के पास धन है लेकिन वे वास्तव में निर्धनों की-सी जिन्दगी जीते हैं। जीवन उनके लिये नीरस हो गया है। उसे भोगने की शक्ति वे खो चुके हैं। जीवन के इस नीरस और निर्जीव ढंग को आसनों द्वारा सुधारा जा सकता है। आसनों के अभ्यास से आप एक नये जीवन का अनुभव करेंगे। आप पहले की अपेक्षा अधिक शक्ति का अनुभव करेंगे। जीवन के प्रति एक व्यापक दृष्टिकोण उत्पन्न होगा और दूसरों की समस्याओं को आप अधिक सरलतापूर्वक समझ सकेंगे। धीरे- धीरे 'विश्व बन्धुत्व' की भावना जागृत होने लगेगी।

वे व्यक्ति जो अपने मस्तिष्क को शुद्ध करके विचार-शक्ति को बढ़ा सकेंगे, उनमें अन्तर्दृष्टि विकसित होने लगेगी। जो अपनी रोजी-रोटी मेहनत-मजदूरी करके कमाते हैं, वे भी दिन भर की थकान और तनावों से छुटकारा पाकर अपने आप को स्वस्थ रख सकते हैं।

आजकल बहुत से लोग, विशेषतः युवा व्यक्तियों ने अपने जीवन में कुछ अर्थ और व्यवस्था खोजने के लिये मादक पदार्थों जैसे एल. एस. डी., गाँजा, भाँग, शराब आदि का प्रयोग करना शुरू कर दिया है। ऐसे लोग जीवन का अर्थ समझ सकें, इसके लिए योग (आसनों सहित) ही एक उचित मार्ग है। यह अनुभव करते हुए कि मादक द्रव अपने प्रभाव में सीमित हैं, वे उनसे छुटकारा भी पा सकेंगे। योग का नियमित अभ्यास उन्हें अंतिम लक्ष्य तक ले जायेगा जिसके परे कोई लक्ष्य नहीं है।

ऐतिहासिक एवं पौराणिक आधार

शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक संस्कृति के रूप में योगासनों का इतिहास समय की अनन्त गहराइयों में छुपा हुआ है। मानव जाति के प्राचीनतम साहित्य वेदों में इनका उल्लेख मिलता है। वेद आध्यात्मिक ज्ञान के भण्डार हैं। उनके रचयिता अपने समय के महान् आध्यात्मिक व्यक्ति थे। कुछ लोगों का ऐसा भी विश्वास है कि योग विज्ञान वेदों से भी प्राचीन है।

हड़प्पा और मोहनजोदड़ो (जो अब पाकिस्तान में हैं) में पुरातत्व-विभाग द्वारा की गई खुदाई में अनेक ऐसी मूर्तियाँ मिली हैं जिनमें शिव और पार्वती (उनकी आध्यात्मिक जीवन संगिनी) को विभिन्न योगासनों में अंकित किया गया है। ये भग्नावशेष प्राग्वैदिक युग के लोगों के निवास स्थान रहे हैं। अतः सिन्ध उपमहाद्वीप में आर्य सभ्यता के प्रसार के पूर्व निश्चित रूप से

उनका अस्तित्व था।

परम्परा और धार्मिक पुस्तकों के अनुसार आसनों सहित योग विद्या की खोज शिवजी ने की। उन्होंने सभी आसनों की रचना की और अपनी प्रथम शिष्या पार्वती को उन्होंने सिखलाया। ऐसा कहा जाता है कि प्रारंभ में ८४,००,००० आसन थे जो ८४,००,००० योनियों का प्रतिनिधित्व करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति को जन्म-मरण के चक्र से मुक्त होने के पूर्व उनसे अवश्य गुजरना पड़ता है। ये आसन प्राणी की प्रारम्भिक अवस्था से मुक्त अवस्था तक के प्रगतिशील विकास का प्रतिनिधित्व करते हैं। ऐसा विश्वास किया जाता है कि एक जन्म से दूसरे जन्म की पूर्व निर्धारित प्रगति को एक ओर छोड़कर इन सभी आसनों को करते हुए व्यक्ति एक ही जीवन काल में इन सभी योनियों से गुजर कर आगे बढ़ सकता है।

शताब्दियों से इन आसनों के रूप में परिवर्तन एवं सुधार होता रहा है और महान् ऋषियों और योगियों ने इनकी संख्या कम कर दी है। अब ज्ञात आसनों की संख्या कुछ सौ ही रह गई है। इनमें से केवल चौरासी की विस्तृत व्याख्या हुई है और सामान्य रूप से आधुनिक व्यक्ति के लिये केवल तीस आसन ही उपयोगी समझे गये हैं।

शिवजी को परम चेतना का प्रतीक माना गया है मानो परम चेतना साक्षात् शिव के रूप में पृथ्वी पर उतरी हो। जब व्यक्ति की आत्मा सांसारिक बन्धनों से मुक्त होती है तब उसे शुद्ध चेतना का स्तर प्राप्त होता है। पार्वती को अखिल ब्रह्माण्ड की जननी माना गया है। वे परम ज्ञान की अवतार हैं। उनकी कृपा से व्यक्ति मुक्त होकर परम चेतना से एकाकार हो जाता है। ऐसा कहा जाता है कि अपने समस्त बच्चों के प्रति प्रेम और दया के कारण उन्होंने अपने गुप्त ज्ञान को तंत्र शास्त्र के रूप में दिया। वे तंत्र की प्रथम गुरु हैं। मातृ पक्ष हम सभी के अन्दर स्थित गुप्त शक्ति का प्रतिनिधित्व करता है। यह महान् शक्ति 'कुण्डलिनी' के नाम से भी जानी जाती है।

तंत्र दो शब्दों के योग से बना है– 'तनोति एवं त्रायति'। इन दो शब्दों का अर्थ क्रमशः *विस्तार* एवं *मुक्ति* है। अतः 'तंत्र' चेतना के विस्तार का विज्ञान है जिसके द्वारा हम उसे उसकी सीमाओं से मुक्त कर देते हैं। योग तंत्र की ही एक शाखा है, हम योग को तंत्र से पृथक नहीं कर सकते। दोनों की उत्पत्ति शिव और शक्ति से हुई है। चेतन और जड़ को एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता है। अग्नि और ताप की तरह दोनों ही एक-दूसरे के

पूरक हैं।

तंत्र साधारण लोगों के लिये एक मार्ग है जिस पर चलकर सांसारिक वस्तुओं के भोग की क्षमता रखते हुये वे अपने को सांसारिक सीमाओं और बन्धनों से मुक्त कर सकते हैं। तंत्र में सर्वप्रथम व्यक्ति को अपने शरीर और मन की सीमाओं को नाप लेना आवश्यक है। इसके बाद तंत्र ऐसी विधियों का निर्देश करता है जिससे भौतिक चेतना का दैवी चेतना में और फिर शुद्ध-मुक्त चेतना में विस्तार किया जाता है। शरीर, मन और चेतना को शुद्ध करने के लिये अनेक प्रकार के आसन, प्राणायाम, मुद्रा और बन्धों का अभ्यास किया जाता है। यह स्पष्ट है कि इस प्रकार योग की विधियों का मूल तंत्र में है।

ऐतिहासिक प्रमाण के आधार पर योगासनों के प्रथम व्याख्याकार महान योगी गोरखनाथ थे। इनके समय में योग-विज्ञान लोगों में अधिक लोकप्रिय नहीं था। गोरखनाथ जी ने अपने निकटतम शिष्यों को सभी आसन सिखाये। उस काल के योगी समाज से बहुत दूर पर्वतों और जंगलों में रहा करते थे। वहाँ वे एकान्त में तपस्या का जीवन व्यतीत करते थे। उनका जीवन प्रकृति पर आश्रित व बिल्कुल सादा एवं सरल था। जानवर ही योगियों के महान शिक्षक थे, क्योंकि जानवर सांसारिक समस्याओं एवं रोगों से मुक्त जीवन व्यतीत करते हैं। जानवरों को किसी डॉक्टर की आवश्यकता नहीं पड़ती और न ही इलाज के लिये उन्हें दवाएँ चाहिए। प्रकृति उनकी एक-मात्र सहायक है। योगी, ऋषि और मुनियों ने जानवरों की गति-विधियों पर बड़े ध्यान से विचार कर उनका अनुकरण किया। इस प्रकार वन के जीव-जन्तुओं के अध्ययन से योग की अनेक विधियों का विकास हुआ। क्या यह आश्चर्य की बात नहीं है कि योग रोग-उपचार की एक प्राकृतिक एवं प्रभावशाली प्रणाली है?

इस युग में योग सारे संसार में फैल रहा है। इसका ज्ञान हर एक की सम्पत्ति बन रहा है। आज डॉक्टर और वैज्ञानिक योग के अभ्यास की सलाह देते हैं। अब प्रत्येक व्यक्ति अनुभव कर रहा है कि योग केवल निर्जनवासी साधु-संन्यासियों के लिये ही नहीं, परंतु प्रत्येक व्यक्ति के लिये आवश्यक है।

आसनों का वर्गीकरण

साधारण तथा व्यस्त व्यक्ति के लिये इस पुस्तक में दिये हुए सभी आसनों को करना अत्यावश्यक तथा संभव नहीं है। अतः आसनों को तीन समूहों में विभक्त कर दिया गया है।

प्रारम्भिक समूह के आसन नये अभ्यासियों, दुर्बल तथा बीमार लोगों के लिये हैं जो कि कठिन आसनों को करने में असमर्थ हैं। ये आसन शरीर एवं मन को उच्च आसनों एवं ध्यानाभ्यासों हेतु उपयुक्त बनाने के लिये हैं। ये आसन किसी भी हालत में उन्नत आसनों से निकृष्ट नहीं हैं। ये शारीरिक स्वास्थ्य को भी बढ़ाते हैं। इस समूह में पवन-मुक्तासन, ध्यान के पूर्व करने वाले आसन तथा ध्यान के आसन हैं।

मध्यम समूह के आसन थोड़े कठिन हैं। ये उन लोगों के लिए हैं जो प्रारम्भिक समूह के आसनों को आसानी से कर सकते हैं। इस समूह में स्थिरता, एकाग्रता तथा श्वास-क्रिया के साथ एकीकरण करने वाले आसन हैं जैसे—' सूर्य नमस्कार, योगमुद्रा आदि।

उन्नत श्रेणी के आसन उन्हीं लोगों के लिए हैं जिन्होंने अपनी मांसपेशियों, नाड़ी-संस्थानों तथा मध्यम-वर्गीय आसनों पर दक्षता प्राप्त कर ली है। लोगों को इन आसनों को करने के लिये एकाएक उतावला नहीं होना चाहिये, बल्कि किसी योग शिक्षक की सहायता लेनी चाहिये।

इन तीनों समूहों के आसनों को उनके अभ्यास करने की गति के अनुसार पुनः दो भागों में विभक्त किया गया है।

गतिशील अभ्यास में वे आसन आते हैं जिनमें शरीर शक्ति के साथ गतिशील रहता है। वास्तव में ये व्यायाम हैं, फिर भी इस पुस्तक में हम इनका उल्लेख आसनों के रूप में करेंगे। यद्यपि 'आसन' शब्द का अर्थ ही 'स्थिर-स्थिति' है उनका उद्देश्य मांसपेशियों को विकसित करना अथवा व्यक्ति को हृष्ट-पुष्ट बनाना न होकर शरीर को लचीला बनाना, रक्त-संचार की गति को तीव्र करना, शरीर को गर्म रखना और शरीर के विभिन्न भागों में रुके हुए रक्त मे संचार लाना है। वे चमड़ी और मांसपेशियों को पुष्ट रखते हैं, फेफड़ों को शक्ति प्रदान करते हैं और पाचन व मल-निष्कासन प्रणालियों की गति को बढ़ा देते हैं। वे खास तौर से नए अभ्यासियों के लिये लाभप्रद हैं। सूर्य नमस्कार, पवनमुक्तासन समूह, गतिशील पश्चिमोत्तानासन, गतिशील भुजंगासन आदि गतिशील अभ्यासों के अन्तर्गत हैं।

स्थिर अभ्यासों को शरीर में बहुत ही कम या बिना गति के किया जाता है अक्सर कुछ या अधिक समय के लिये एक ही स्थिति में रहा जाता है। इनका उद्देश्य आंतरिक अंगों, ग्रन्थियों और मांसपेशियों की हल्की मालिश के साथ-साथ सम्पूर्ण शरीर के स्नायुओं को शिथिल करना होता है। वे मुख्य रूप से

मन को शान्त रखने से सम्बन्धित हैं और अभ्यासी को ध्यान जैसे उच्च अभ्यासों के लिये तैयार करते हैं। इनमें से कुछ प्रत्याहार की स्थिति लाने में विशेष रूप से उपयोगी हैं। कुछ शरीर को अचल और स्थिर बनाकर उसे ध्यान के लिये तैयार करते हैं। इन अभ्यासों में सामान्य रूप से श्वास-प्रश्वास की गति धीमी हो जाती है और अभ्यासी शरीर के किसी एक विशेष भाग के प्रति सचेत रहता है। अलग-अलग आसनों में शरीर के अलग-अलग भागों पर ध्यान रखा जाता है। इस पुस्तक के अधिकांश आसन इसी वर्ग के हैं जैसे – शीर्षासन, सर्वांगासन, पद्मासन आदि।

निर्देश एवं सावधानियाँ

आसनों को सीखना प्रारम्भ करने से पूर्व निम्नांकित निर्देशों एवं सावधानियों का अध्ययन भली-भाँति कर लेना चाहिये। यद्यपि कोई भी व्यक्ति आसन करना प्रारंभ कर सकता है लेकिन आसन प्रभावशाली एवं वास्तव में लाभकारी तभी हो सकते हैं जबकि उनके लिये उचित ढंग से तैयारियाँ की जायें।

आँतों को खाली रखना

आसनों का अभ्यास करने के पूर्व मूत्राशय और आँतें खाली कर ली जायें तो ठीक रहता है। अगर आपको कब्ज है तो दो-तीन गिलास हल्का नमकीन पानी पीकर हठयोग के अन्तर्गत शंखप्रक्षालन के खण्ड में दिये गये आसनों – ताड़ासन, तिर्यक्-ताड़ासन, कटि-चक्रासन, तिर्यक्-भुजंग आसन व उदराकर्षणासन का अभ्यास करें। इससे कब्ज में राहत मिलेगी। यदि आराम न मिले तो पवनमुक्तासन का क्रम अवश्य सहायक सिद्ध होगा। हाँ, आसनों से पूर्व प्रतिदिन मल-त्याग का एक निश्चित समय अवश्य बना लें। जोर न लगायें, बल्कि पूरे शरीर को ढीला छोड़ दें। कुछ सप्ताह के बाद आँतें स्वयं प्रतिदिन निश्चित समय पर मल-निष्कासन करने लगेंगी। जुलाब आदि से बचें, क्योंकि औषधियों के सेवन से आँतों की स्वाभाविक शक्ति शिथिल हो जाती है।

पेट को खाली रखना

आसन करते समय पेट अवश्य ही खाली रहना चाहिए। इसलिए भोजन लेने के तीन-चार घंटे बाद तक आसन नहीं करने चाहिए। यही कारण है कि प्रातः काल आसन करना उचित माना जाता है। इस समय निश्चित-रूप से पेट खाली रहता है।

धूप-स्नान

लंबे धूप-स्नान से शरीर का तापक्रम बढ़ जाता है, अतः धूप-स्नान के तुरन्त बाद आसन मत कीजिये।

श्वास-प्रश्वास

हमेशा नाक से श्वास लीजिये, जब तक कि इसके विपरीत कोई विशेष निर्देश न दिये गये हों। विवरण में जिस प्रकार निर्देश दिया गया हो, श्वास को उसी प्रकार आसनों के साथ जोड़िये।

कम्बल

आसनों के अभ्यास के लिये कम्बल को चार पर्तों में मोड़ कर प्रयोग कीजिये। ऐसे बिछावन का प्रयोग न करें जो मुलायम हो या जिसमें हवा भरी हो।

अभ्यास का स्थान

ऐसे खुले हुये हवादार कमरे में आसनों का अभ्यास कीजिये जहाँ का वातावरण शान्त हो। कमरे की हवा शुद्ध एवं ताजी होनी चाहिये ताकि श्वास के साथ आप स्वतंत्र रूप से ओषजन-वायु ले सकें। अभ्यास आप बाहर भी कर सकते हैं परन्तु आसपास का वातावरण सुहावना होना चाहिये – जैसे सुन्दर बाग। तेज हवा में व सर्दी और धुएँ-मिश्रित, बदबूदार, दूषित एवं गन्दी हवा-युक्त स्थान में अभ्यास न करें।

घर के साज-सामान, आग अथवा अन्य किसी ऐसी चीज के पास अभ्यास न करें जो आपके अभ्यासों में बाधक बने। अनेक दुर्घटनाएँ घट जाती हैं क्योंकि अभ्यासी ऐसी वस्तुओं की ओर गिर जाते हैं जो उन्हें स्वतंत्र रूप से भूमि पर गिरने से रोकती हैं; विशेषकर शीर्षासन आदि आसनों के अभ्यास काल में इस बात का ध्यान रखना चाहिये। अभ्यास बिजली के पंखे के नीचे न करें।

तनाव

आसन करते समय अनावश्यक जोर मत लगाइये। तनाव की स्थिति से बचिये। यद्यपि शुरू-शुरू में अभ्यासी अपनी मांसपेशियों को कड़ी पायेंगे, परन्तु कुछ ही सप्ताह के नियमित अभ्यास के दौरान यह अनुभव करके उन्हें आश्चर्य होगा कि उनकी मांसपेशियाँ धीरे-धीरे, लेकिन निश्चित रूप से लचीली हो रही हैं और फिर उच्च आसनों को करने में किसी प्रकार से कठिनाई नहीं होगी।

आयु-सीमा

आसन विभिन्न आयु के स्त्री-पुरुषों द्वारा किये जा सकते हैं। योग के दरवाजे सभी के लिये खुले हैं और सभी इससे लाभ उठा सकते हैं। 'योग-माँ' के हृदय में अपने सभी बच्चों के लिये समान स्नेह है; चाहे वे विवेकी हों या अज्ञानी, धनी हों या निर्धन। योग के लिये वे सभी बराबर हैं; उनकी जाति, धर्म, वर्ण या राष्ट्रीयता कुछ भी हो।

सीमाएँ

वे लोग जो पेट में छाले, टी.बी., आँत उतरने जैसे दीर्घ व स्थायी रोगों से पीड़ित हैं अथवा जिनकी हड्डी टूट गयी हो, उन्हें आसनों का अभ्यास प्रारम्भ करने से पूर्व किसी योग-शिक्षक अथवा डॉक्टर से सलाह लेनी चाहिये। यदि कोई व्यक्ति यह अनुभव करे कि किसी कारणवश उसे आसन नहीं करना चाहिये तो उसे विशेषज्ञ की सलाह लेनी चाहिये।

अभ्यास का समय

भोजन के बाद के समय को छोड़कर आसनों को कभी भी किया जा सकता है। वैसे सभी यौगिक अभ्यासों को करने का सबसे उत्तम समय प्रातः चार से छः बजे है। संस्कृत में इस समय को ब्रह्म-मुहूर्त कहा गया है। यह समय उच्च-यौगिक अभ्यासों हेतु अत्यन्त उपयुक्त एवं ग्रहणशील है। इस समय वातावरण शुद्ध, शान्त व सौर-किरणों से परिपूर्ण रहता है। पेट और आँतों की गतिविधियाँ रुक चुकी होती हैं, मन के चेतन-स्तर पर कोई गहरी छाप नहीं होती और पूरे दिन की तैयारी में विचारों से शून्य रहता है।

संभवतः अभ्यासी को शाम की अपेक्षा इस समय मांसपेशियाँ अधिक कड़ी लगें। वैसे नियमित और लगन से किये गये अभ्यास से मांसपेशियाँ इतनी लचीली हो जायेंगी कि यदि कभी शाम को आसन किये जायें तो शरीर तुलनात्मक रूप से रबर का एक टुकड़ा सा लगेगा।

क्रम

सर्वप्रथम आसन, फिर प्राणायाम और अन्त में ध्यान करें। विशेष आसन क्रम के अभ्यास के लिए योग शिक्षक से सलाह लें।

शारीरिक चेतना

आप जब भी आसन करें, उन्हें बहुत धीरे-धीरे करें और पूरे शरीर के प्रति सचेत रहें। यदि आप दर्द या सुख का अनुभव करें तो बिना किसी प्रतिक्रिया के इस भावना के प्रति केवल सचेत एवं जागरूक रहें। इस प्रकार आपमें एकाग्रता एवं सहनशक्ति विकसित होगी।

वस्त्र

आसन करते समय ढीले, हल्के और आरामदायक वस्त्र धारण करना अधिक सुविधाजनक रहता है। अभ्यास प्रारम्भ करने से पूर्व चश्मा, कलाई-घड़ी, आभूषण आदि उतार देने चाहिये।

स्नान

अच्छा होगा कि आसनों से पूर्व शीतल जल से स्नान कर लें। यह आसनों के प्रभाव को बहुत बढ़ा देगा।

शिथिलीकरण

आसन करने के पहले और बाद में शवासन करें। शरीर को अधिक से अधिक ढीला एवं तनावरहित छोड़ने पर ध्यान दें। यदि आसनों के अभ्यास के मध्य में आप थकान का अनुभव करें तो शवासन कर लें। शवासन बड़ा सरल प्रतीत होता है, परन्तु इसे उचित ढंग से पूर्ण शिथिलीकरण के साथ करना बड़ा कठिन है।

भोजन

आसनों के अभ्यासियों के लिये भोजन के कोई विशेष नियम नहीं हैं, परन्तु उनके लिये यह अधिक हितकर होगा कि वे प्राकृतिक खाद्य-पदार्थ ग्रहण करें और तर्क-संगत मध्यम मार्ग अपनायें। लोकप्रिय एवं सामान्य राय के विपरीत योग यह नहीं कहता कि आप शाकाहारी हो जायें; यद्यपि योग की उच्च अवस्थाओं में अभ्यासी को शाकाहारी होने की सलाह भी दी जाती है। एक योग-अभ्यासी के लिये उचित सलाह यही है कि वह आधा पेट भोजन से भर ले, एक चौथाई पानी से भरे और शेष एक चौथाई खाली छोड़ दे। अपनी भूख शान्त करने के लिए तो पर्याप्त भोजन लेना चाहिए; लेकिन इतना अधिक नहीं कि भारीपन और सुस्ती का अनुभव होने लगे। दो दृष्टिकोण हैं– क्या आप जीने के लिए खा रहे हैं अथवा खाने के लिये जी रहे हैं ?

यदि आसन आध्यात्मिक प्रगति को ध्यान में रखते हुए किये जा रहे हैं तो अभ्यासी को ऐसे भोजन से बचना चाहिये जो पाचन-प्रणाली में अम्लता या वायु उत्पन्न करे।

यदि किसी विशेष रोग से पीड़ित हैं तो भोजन-संबंधी सावधानियाँ उस रोग विशेष के अनुसार बरती जानी चाहिए। इस संबंध में विशेषज्ञ से राय अवश्य ही लेना चाहिए।

आसनों का त्याग

यदि आसन के दौरान शरीर के किसी अंग में अत्यधिक पीड़ा होती है तो उस आसन का अभ्यास तुरन्त बंद कर किसी जानकार से आवश्यक

सलाह ली जाये। यदि किसी आसन में अत्यधिक कष्ट या बेचैनी हो तो उस स्थिति में अधिक देर न रुकिये, आसन समाप्त कर दीजिये।

बिपरीत आसन

यदि आँतों में वायु, अत्यधिक उष्णता या रक्त अत्यधिक अशुद्ध हो तो सिर के बल किये जाने वाले आसन न किये जायें। विषैले तत्व मस्तिष्क में पहुँचकर उसे क्षति न पहुँचा सकें, इसके लिये यह सावधानी बहुत महत्वपूर्ण है।

१

प्रारम्भिक आसन समूह

पवनमुक्तासन

पवन का अर्थ वायु, *मुक्त* का अर्थ छुटकारा एवं *आसन* का अर्थ शरीर की एक विशेष स्थिति है। अतः पवनमुक्तासन ऐसे अभ्यासों का समूह है जो शरीर से वात निकालने में मदद करते हैं।

अभ्यास के इस क्रम को प्रतिदिन आसन-कार्यक्रम के प्रारम्भ में जोड़ों को ढीला एवं मांसपेशियों को लचीला करने के लिये किया जाना चाहिये। ये नये अभ्यासियों, दुर्बल, बीमार, हृदय के रोगियों, उच्च रक्त-चाप वालों एवं उन व्यक्तियों के लिये है जिनका शरीर अन्य आसनों के लिये कड़ा और बेलोचदार है।

पवनमुक्तासन का समूह बड़ा सरल है फिर भी वे शरीर के कफ, पित्त और वात को नियमित करने में बड़े प्रभावशाली हैं।

हमारा मतलब पेट व आँतों में बनने वाली वायु ही नहीं है बल्कि वह वायु भी है जो शरीर के प्रत्येक जोड़ में बनती है; क्योंकि शरीर में गलत रासायनिक प्रतिक्रियाओं के कारण गठिया का दर्द और कड़ापन प्रारम्भ हो जाता है। अम्ल व पित्त से मतलब पाचन में सहायक रसों से ही नहीं, बल्कि 'यूरिक अम्ल' से भी है जिसे शरीर से निरन्तर निकलते रहना चाहिये। अधिक अम्ल बनने से शरीर के कुछ अंगों में ठीक ढंग से कार्य करने में अवरोध उत्पन्न होने लगता है।

पवनमुक्तासन का अभ्यास शरीर से वायु और अम्ल निकालने में सहायक सिद्ध होगा; विशेषतः जोड़ों से। ये अभ्यास अशक्त, दुर्बल, बीमारी के बाद स्वास्थ्य-लाभ चाहने वालों एवं उन लोगों के लिये उपयोगी हैं जिन्हें अपने शरीर व उसके विभिन्न अंगों को हिलाने-डुलाने में कठिनाई होती है। बीमारी और लम्बे विश्राम के बाद मांसपेशियों को नये सिरे से काम करने की आदत डालने के लिये इन अभ्यासों को किया जा सकता है। मांसपेशियों के सभी प्रकार के रोगों से छुटकारा दिलाने में भी ये प्रभावशाली हैं।

पवनमुक्तासन के क्रम को दो प्रमुख समूहों में विभाजित किया गया है–गठिया निरोधक समूह और वायु (वात) निरोधक समूह। इन दोनों समूहों को पुस्तक में दिये गये क्रमानुसार करना चाहिए।

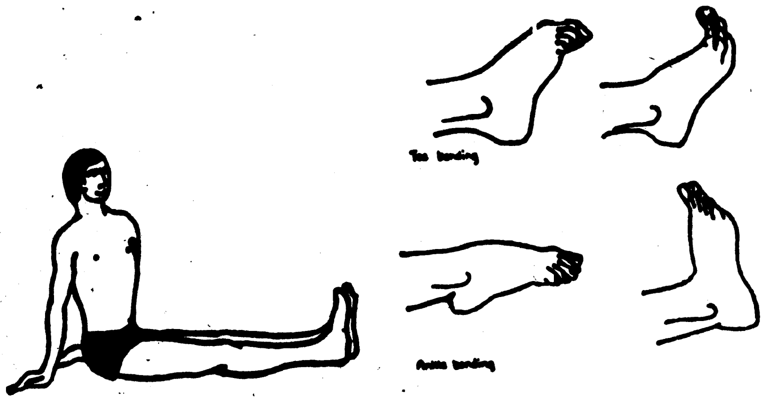
गठिया निरोधक अभ्यास

इन अभ्यासों का शरीर के विभिन्न जोड़ों एवं अंगों पर लाभकारी प्रभाव पड़ता है। यद्यपि ये बड़े सरल लगते हैं परन्तु अभ्यासी पर इनका बड़ा सूक्ष्म प्रभाव पड़ता है। अभ्यास के इस समूह को संस्कृत में 'सूक्ष्म-व्यायाम' भी कहते हैं।

पवनमुक्तासन प्रारम्भ करने से पूर्व अपने आपको शारीरिक और मानसिक रूप से तनावरहित स्थिति में लाने के लिये शवासन का अभ्यास करें। पीठ के बल लेट जायें। पैरों के बीच थोड़ा फासला छोड़ दें। हाथ कमर के दोनों ओर तथा हथेलियाँ ऊपर की ओर चित रखें। अपने सभी जोड़ों एवं मांसपेशियों को ढीला छोड़ने का प्रयास कीजिए। सभी प्रकार के तनावों से मुक्त हो जाइये। अपने शरीर का अनुभव कीजिए; श्वास-प्रश्वास के प्रति जागरूक रहिये। ध्यान रहे कि आप शिथिलीकरण का अभ्यास कर रहे हैं। बिना किसी प्रयास के श्वास का प्रवाह स्वतः और सामान्य रूप से होता रहे। अपनी श्वासों को गिनिये। श्वास-गणना के अभ्यास के दौरान किसी भी प्रकार के विचारों को दबाइये नहीं। भावनात्मक रूप से प्रभावित हुए बिना उन्हें साक्षीभाव से देखते जाइये। आपका मुख्य लक्ष्य शिथिलीकरण है। सम्पूर्ण शरीर और मन को पूरा ढीला छोड़ दीजिये। कुछ समय के लिए अपनी समस्त चिन्ताओं, आशंकाओं एवं सांसारिक समस्याओं को भूल जाइए।

कुछ क्षणों के बाद अपने शरीर का अनुभव करते हुए हाथों और पैरों को धीरे-धीरे हिलाते हुए उठ बैठिये। अब आप शारीरिक और मानसिक रूप से पवनमुक्तासन प्रारम्भ करने के लिए तैयार हैं।

पैरों की अंगुलियाँ और टखने मोड़ना



अभ्यास १ एवं २

अभ्यास १ : पैरों की अंगुलियाँ मोड़ना

विधि

अपने पैरों को शरीर की सीध में सामने फैला कर बैठ जाइये।

अपने हाथों के सहारे थोड़ा पीछे की ओर झुक जाइये।

हाथ सीधे रखिये, कोहनियाँ मोड़िये नहीं।

पैरों की अंगुलियों के प्रति जागरूक रहिये।

पंजों को कड़ा रखते हुए अंगुलियों को धीरे-धीरे आगे-पीछे मोड़िये।

इस क्रिया की १० आवृत्तियाँ कीजिये।

अभ्यास २ : टखने मोड़ना

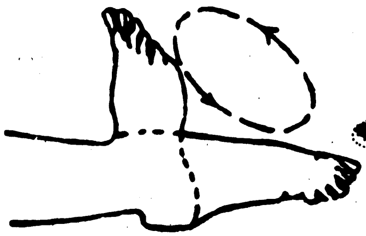
विधि

अभ्यास १ की मूल स्थिति में बैठे रहिए।

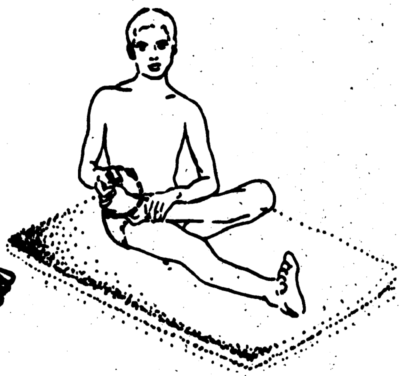
टखनों को जोड़ों से झुकाते हुए दोनों पंजों को जितना संभव हो सके, उतना आगे-पीछे मोड़िये।

१० बार दोहराइये।

टखने को वृत्ताकार और उसकी धुरी पर घुमाना



अभ्यास ३



अभ्यास ४

अभ्यास ३ : टखने को वृत्ताकार घुमाना

विधि

अभ्यास १ की मूल स्थिति में बैठे रहिये।

पैरों को सीधे रखते हुए उनके बीच में कुछ फासला छोड़ दीजिये।

एड़ी को जमीन पर रखते हुए दाहिने पंजे को टखने से दायीं ओर तथा फिर बायीं ओर वृत्ताकार घुमाइये।

१० बार दोहराइये।

इसी अभ्यास को बाएँ पंजे से कीजिये।

दोनों पंजों को एक साथ वृत्ताकार घुमाते हुए इसी अभ्यास को दोहराइये।

अभ्यास ४ : टखने को उसकी धुरी पर घुमाना

विधि

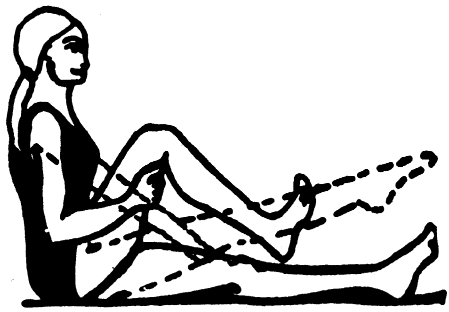
मूल स्थिति में आ जाइये।

दाहिना टखना बायीं जाँघ पर रखिये।

बाएँ हाथ की सहायता से दाहिना पंजा पहले दाहिनी ओर से तथा फिर बायीं ओर से वृत्ताकार घुमाइये। ऐसा १० बार कीजिये।

यही क्रिया बाएँ पंजे से कीजिये।

घुटने को मोड़ना व उसकी धुरी पर वृत्ताकार घुमाना



अभ्यास ५

अभ्यास ५ः घुटने को मोड़ना

विधि

मूल स्थिति में आइये।

दाहिने पैर को घुटने से मोड़िये और दोनों हाथों को दाहिनी जाँघ के नीचे बाँध लीजिये।

हाथों को दाहिनी जाँघ के नीचे घुटने के समीप रखते हुए एड़ी को बिना जमीन से स्पर्श किये हुए दाहिने पैर को सीधा कीजिये।

फिर दाहिने पैर को घुटने से जितना संभव हो सके, उतना मोड़ते हुए एड़ी दाहिने नितम्ब के पास लाइये।

१० बार दोहराइये।

इसी प्रकार बाएँ पैर से कीजिये।

अभ्यास ५ः (प्रकारान्तर) घुटने को उसकी धुरी पर वृत्ताकार घुमाना

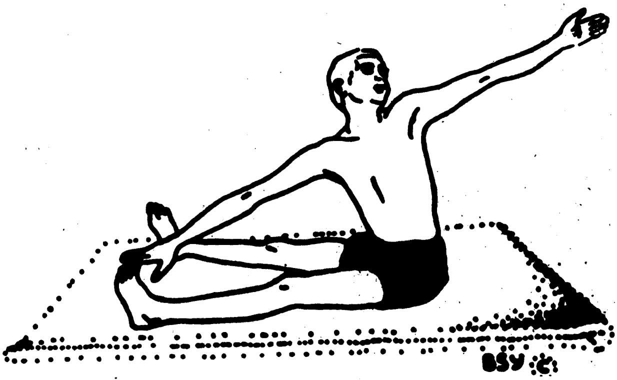
विधि

मूल स्थिति में आ जाइये।

दाहिने पैर को फैलाने के बजाये जाँघ को धड़ के पास पकड़ कर रखिए और पैर के निचले हिस्से को घुटने से वृत्ताकार रूप में घुमाइये। १० बार घड़ी की सुई की दिशा में तथा १० बार इसके विपरीत घुमाइये।

यही क्रिया बाएँ पैर से कीजिये।

मेरुदण्ड को दायें-बायें मोड़ना



अभ्यास ६

अभ्यास ६ : मेरुदण्ड को दायें - बायें मोड़ना

विधि

मूल स्थिति में आइये।

आराम के साथ पैर एक-दूसरे से जितने दूर फैला सकें, फैला लीजिये।

हाथों को सीधे रखते हुए दाहिने हाथ को बाएँ पैर के अँगूठे के पास लाइये और बायीं भुजा को पीछे की ओर फैला दीजिये।

दोनों भुजाएँ एक सीध में रहें।

अपनी गर्दन को पीछे मोड़ते हुए बाएँ हाथ की ओर दृष्टि रखिए।

इसके पश्चात् धड़ को विपरीत दिशा में मोड़ते हुए बाएँ हाथ को दाहिने पैर के अँगूठे के पास लाइये और दाहिनी भुजा पीछे की ओर फैला दीजिये।

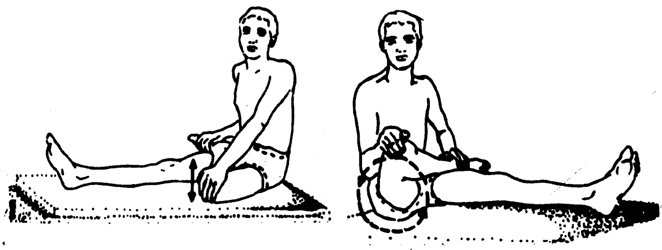
यह एक आवृत्ति हुई।

१० से २० आवृत्तियों तक ऐसा कीजिए।

प्रारम्भ में अभ्यास को धीरे-धीरे कीजिये। फिर क्रमशः उसे अधिक गतिशील ढंग से कीजिये।

यदि अभ्यासी चाहे तो पैरों को बिना मोड़े हुये तथा अपेक्षाकृत दूर-दूर फैलाकर पूरे अभ्यास को दुहरा सकता है।

अर्ध तितली और घुटने को घुमाना



अभ्यास ७   अभ्यास ८

अभ्यास ७ : अर्ध तितली

विधि

बाएँ पैर को मोड़िये और उसके तलवे को दाहिनी जाँघ पर रख दीजिये।

दाहिने हाथ से दाहिने पैर का घुटना पकड़िये और बायाँ हाथ मुड़े हुए बाएँ घुटने पर रख दीजिये।

मुड़े हुए पैर की मांसपेशियों को जितना संभव हो सके, उतना ढीला छोड़ते हुए उसे बाएँ हाथ की मदद से ऊपर-नीचे हिलाइये।

इस अभ्यास को करते रहिये जब तक कि बायाँ घुटना जमीन से पूर्णतः या अंशतः छू न जाये।

इसी प्रकार दाहिने पैर से कीजिये।

कुछ दिनों या सप्ताहों के अभ्यास के बाद घुटने बिना किसी प्रयास या असुविधा के फर्श पर टिकने लगेंगे।

अभ्यास ८ः घुटने को घुमाना

विधि

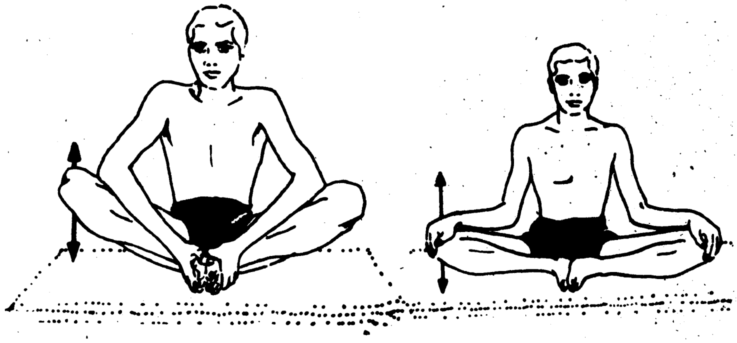
अभ्यास ७ की स्थिति में रहिये, लेकिन दाहिने हाथ से बाएँ पैर की अंगुलियाँ पकड़ कर बाएँ घुटने को दोनों ओर वृत्ताकार घुमाइये।

धीरे-धीरे घेरे के वृत्त को बड़ा करते जाइये।

घुटने को १० बार दायीं तथा बायीं ओर घुमाइये।

यही क्रिया दाहिने घुटने से कीजिये।

पूर्ण तितली



अभ्यास ९ (१) अभ्यास ९ (२)

अभ्यास ९ : पूर्ण तितली

विधि

१. बैठने की स्थिति में पैरों के तलवे एक साथ सटा दीजिये। एड़ियों को जितना संभव हो सके, शरीर के पास लाइये। दोनों हाथों की अंगुलियों को एक-दूसरे में फँसा कर पंजों के नीचे रखिये। तत्पश्चात् केहुनियों से घुटनों को जमीन की ओर धीरे-धीरे दबाइये।

घुटनों को नीचे दबाते हुए शरीर को आगे की ओर झुकाइये और मस्तक से भूमि का स्पर्श कीजिए। प्रारम्भ में इसमें कठिनाई का अनुभव हो सकता है।

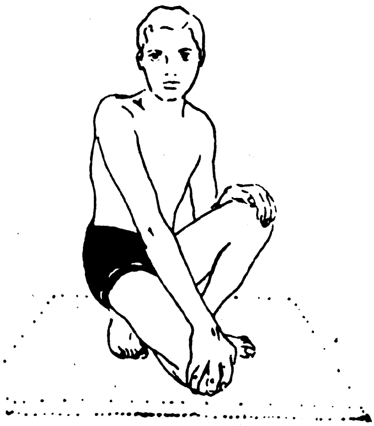
२. दोनों तलवों को सटाए हुए ही हाथों को घुटनों पर रखिये। भुजाओं का दबाव डालते हुए घुटनों को जमीन की ओर कीजिये और उन्हें फिर से उछल कर ऊपर आने दीजिये।

२० या अधिक बार दुहराइये।

३. उसी स्थिति को बनाये रखिये लेकिन हाथों को पीछे कमर के दोनों ओर रखिये। भुजाएँ सीधी रहें। फिर घुटनों को ऊपर-नीचे कीजिये।

२० या अधिक बार दुहराइये।

कौआ चाल



अभ्यास १०

अभ्यास १०: कौआ चाल

विधि

जमीन पर उकड़ूँ (पंजों के बल) बैठ जाइये।

हथेलियों को घुटनों पर जमा दीजिये और उसी स्थिति में चलना शुरू कीजिए। आप अंगुलियों अथवा पंजों के बल चल सकते हैं। फिर भी जिसमें अधिक कठिनाई लगे, उसी ढंग से कीजिये।

बिना किसी तनाव के थोड़े समय के लिये इस अभ्यास को कीजिये।

टिप्पणी

प्रत्येक कदम पर घुटने से जमीन को छूते हुए कौआ चाल का अभ्यास कीजिये।

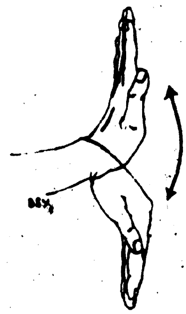
लाभ

ध्यान के आसनों के लिये पैरों को तैयार करने हेतु यह बड़ा अच्छा अभ्यास है। जिनके पैरों में रक्त-संचार ठीक से नहीं होता, उनके लिये भी यह उपयोगी है। कब्ज से पीड़ित लोग इसे हितकर पायेंगे। उन्हें दो गिलास पानी पीकर कौआ चाल का अभ्यास एक मिनट के लिये करना चाहिये। दो गिलास पानी और पीजिये और अभ्यास को पुनः दोहराइये। इसे ३-४ बार दुहराइये, कब्ज अवश्य दूर हो जायेगा।

मुट्ठियाँ कस कर बाँधना और कलाई मोड़ना



अभ्यास ११



अभ्यास १२

अभ्यास ११: मुट्ठियाँ कस कर बाँधना

विधि

प्रारम्भिक स्थिति में आ जाइये।

जमीन के समानान्तर कन्धों तक अपनी दोनों भुजाओं को शरीर के सामने की ओर फैला दीजिये।

दोनों हाथों की अंगुलियों को फैलाकर उनमें तनाव उत्पन्न कीजिये।

अंगूठों को अन्दर रखते हुए कस कर मुट्ठियाँ बन्द कीजिये। फिर से अंगुलियों को फैलाइये और तनाव उत्पन्न कीजिये। इसे १० बार दुहराइये।

अभ्यास १२ : कलाई मोड़ना

विधि

अभ्यास ११ की स्थिति में रहिये।

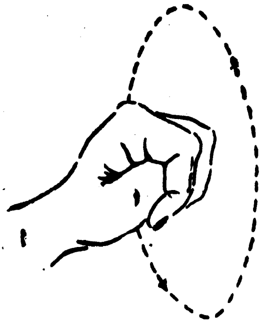
हथेलियों को कलाई से ऊपर की ओर मोड़िये जैसे कि आप अपनी हथेलियों को दीवाल से सटा रहे हों।

हथेलियों को कलाई से नीचे की ओर करते हुए अंगुलियों को ऊपर की ओर रहने की स्थिति से जमीन की ओर कीजिये।

अंगुलियों को पुनः ऊपर की तरफ कीजिये।

इसे १० बार दुहराइये।

कलाई के जोड़ को घुमाना



अभ्यास १३

अभ्यास १३ : कलाई के जोड़ को घुमाना

विधि

अभ्यास १२ की ही स्थिति में रहिये लेकिन इस बार केवल दाहिना हाथ फैलाकर रखिये।

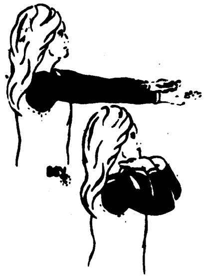
दाहिने हाथ की मुट्ठी कस कर बाँधिये और कलाई से उसे १० बार दाहिनी ओर वृत्ताकार घुमाइये।

फिर मुट्ठी बायीं ओर १० बार घुमाइये ।

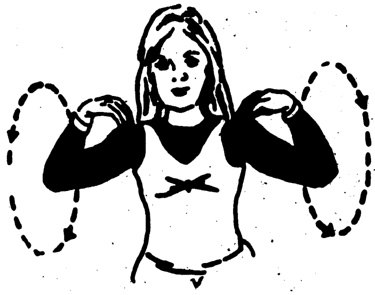
इसी को बायें हाथ से दुहराइये।

मुट्ठियों को कस कर बाँध लें और हाथों को सामने की ओर फैला दें। दोनों मुट्ठियों को एक साथ १० बार दाहिनी ओर से व १० बार बायीं ओर से घुमाइये।

केहुनियाँ मोड़ना और कन्धों को घुमाना



अभ्यास १४ (१)



अभ्यास १४ (२) व १५

अभ्यास १४ (१) : केहुनियाँ मोड़ना

विधि

अभ्यास १३ की स्थिति में ही रहिये लेकिन फैले हुए हाथों की मुट्टियाँ खुली रहेंगी। हथेलियाँ ऊपर की ओर रहें।

भुजाओं को केहुनियों से मोड़ते हुए अंगुलियों से कन्धों का स्पर्श कीजिये।

भुजाओं को फिर सीधा कर लीजिये।

इसे १० बार दुहराइये।

अभ्यास १४ (२) : केहुनियाँ मोड़ना

विधि

सामने के बजाये भुजाओं को बाजू में फैला कर इसी अभ्यास को १० बार दुहराइये।

अभ्यास १५ : कन्धों को घुमाना

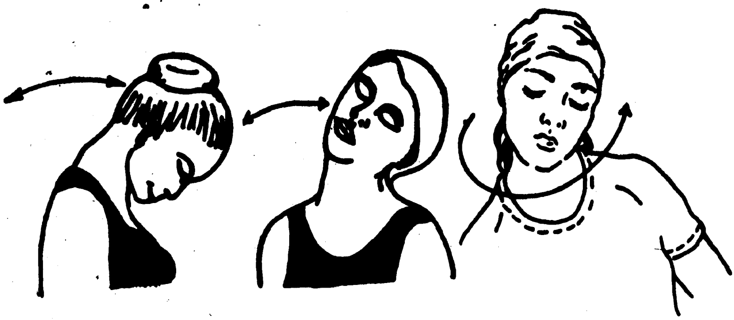
विधि

अभ्यास १४ (२) की स्थिति में ही बने रहिये।

अंगुलियों को कन्धों पर रखे हुए कन्धों को आधे जोड़ों से वृत्ताकार १०-१० बार दायीं और बायीं ओर घुमाइये।

केहुनियों से बनने वाले वृत्त को जितना सम्भव हो सके, बड़ा बनायें और ऐसा करते समय केहुनियों को सीने के सामने से एक-दूसरे से स्पर्श करने दें।

गर्दन झुकाना, मोड़ना व घुमाना



अभ्यास १६ (१) अभ्यास १६ (२), (३)

अभ्यास १६ (१)

विधि

बैठने की स्थिति में पैर सीधे रखते हुए दोनों हाथों को जाँघों के दोनों ओर जमीन पर रख लीजिए।

धीरे-धीरे सिर आगे-पीछे ले जाइये। १० बार दुहराइये।

अभ्यास १६ (२)

विधि

मुँह को सामने की ओर रखे हुए सिर को धीरे-धीरे दाएँ-बाएँ झुकाइये। इस अभ्यास को दोनों तरफ १०-१० बार दुहराइये।

अभ्यास १६ (३)

विधि

बिना किसी तनाव के जितना संभव हो सके, उतने बड़े घेरे में सिर को धीरे-धीरे घुमाइये।

इसे १० बार दाहिनी ओर से और १० बार बायीं ओर से कीजिये।

लाभ

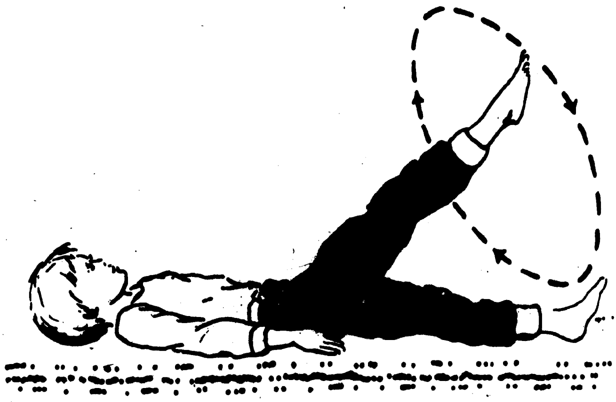
शरीर को मस्तिष्क से जोड़ने वाली सभी नसें व शिरायें गर्दन से ही गुजरती हैं। अतः यह शरीर का एक महत्वपूर्ण केन्द्र है जिसे नियमित रूप से ऊपर दिये गए आसनों द्वारा स्वस्थ एवं सुडौल रखना चाहिए।

वायु (वात) निरोधक अभ्यास

ये अभ्यास पेट में रुकी हुई वायु निकालने में अत्यन्त उपयोगी हैं । वे लोग जो कब्ज व अपचन से पीड़ित हैं, इन अभ्यासों को रामबाण औषधि के रूप में पायेंगे । पवनमुक्तासन का यह दूसरा भाग शरीर को अन्य कठिन आसनों के लिये तैयार करने में बड़ा सहायक है । इनका अभ्यास वे लोग भी कर सकते हैं जो स्नायु व मांसपेशी की गड़बड़ी अथवा टूटी हुई हड्डियों से पीड़ित हैं ।

अभ्यासों को प्रारम्भ करने से पूर्व शरीर एवं मन को शांत एवं शिथिल कर लेना चाहिये । इस स्थिति को प्राप्त करने का उत्तम ढंग शवासन है जिसका वर्णन पवनमुक्तासन के गठिया निरोधक क्रम के प्रारम्भ में दिया जा चुका है ।

पैर घुमाना



अभ्यास १७

अभ्यास १७: पैर घुमाना

विधि

पैरों को सीधे एवं हाथों को शरीर के दोनों ओर रखते हुए पीठ के बल लेट जाइये।

दाहिने पैर को सीधा रखते हुए जमीन से ऊपर उठाइये और दाहिनी ओर से घुमाइये।

इसे १० बार घुमाइये।

फिर बायीं ओर से भी १० बार घुमाइये।

इसी प्रकार बाएँ पैर से कीजिये।

कुछ क्षणों के विश्राम के बाद दोनों पैरों को सीधे रखते हुए एक साथ उठाइये।

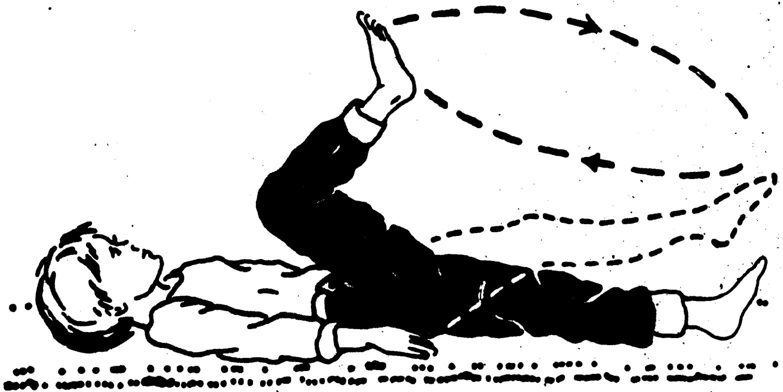
उन्हें १० बार दायीं और १० बार बायीं ओर से घुमाइये।

टिप्पणी

सिर समेत शरीर जमीन पर सपाट रहे।

अभ्यास समाप्त करने के पश्चात् तब तक विश्राम कीजिये जब तक कि श्वास-प्रश्वास की गति सामान्य न हो जाये। अधिक परिश्रम न करें।

साइकिल चलाना



अभ्यास १८

अभ्यास १८ : साइकिल चलाना

विधि

१. जमीन पर चित लेट जाइये।

२. दाहिना पैर उठाइये और उसे साइकिल चलाने जैसा घुमाइये।

१० बार सीधा एवं १० बार उल्टा पैडल घुमाने जैसा घुमाइये।

इसी प्रकार बायें पैर से दुहराइये।

२. पूर्णतः साइकिल चलाने के अन्दाज में दोनों पैरों को क्रमानुसार घुमाइये।

फिर १०-१० बार बायाँ-दायाँ पैर बदल कर घुमाइये।

३. अब दोनों पैरों को एक साथ जोड़ कर रखते हुए साइकिल चलाने की तरह घुमाइये।

उन्हें १० बार उलटा और १० बार सीधा घुमाइये।

टिप्पणी

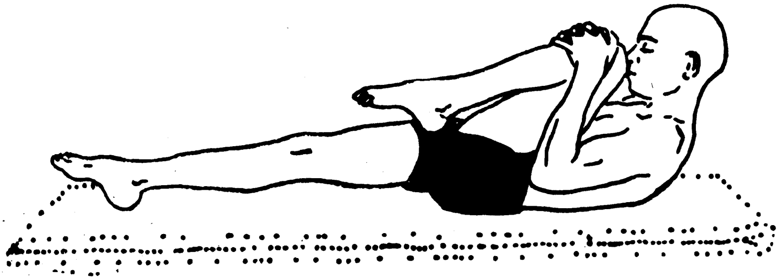
सिर समेत शरीर जमीन पर सपाट रहे।

अभ्यास के प्रत्येक खण्ड की समाप्ति पर तब तक विश्राम कीजिये।

जब तक कि श्वास-प्रश्वास की गति सामान्य न हो जाये।

अभ्यास करते समय अधिक जोर न लगायें।

पैर मोड़ना



अभ्यास १९

अभ्यास १९ : पैर मोड़ना

विधि

पीठ के बल सपाट लेट जाइये।

बायाँ पैर मोड़िये और जाँघ को सीने के पास लाइये।

दोनों हाथों की अंगुलियों को फँसाइये और बायें घुटने पर रखिये।

गहरी श्वास लेकर श्वास छोड़ दीजिये। जितना सम्भव हो सके, फेफड़ों को खाली कर दीजिये।

श्वास को बाहर ही रोकते हुए सिर और सीने के ऊपरी भाग को उठाते हुए नाक से घुटने को छूने की कोशिश कीजिये।

श्वास लेते हुए धीरे-धीरे जमीन पर लेटने की स्थिति में आ जाइये।

पूर्ण शरीर को ढीला छोड़ दीजिये। इसे १० बार कीजिये।

इसी क्रिया को पैर बदल कर १० बार दुहराइये।

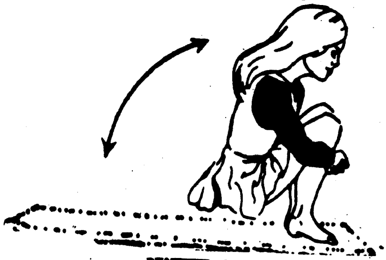
दोनों पैरों को सीने पर मोड़ लीजिये और भुजाओं को घुटनों के चारों ओर लपेट लीजिये। शेष क्रिया पहले के अनुसार ही कीजिये।

ध्यान रहे कि श्वास का क्रम शरीर की गति से सही ढंग से जुड़ा रहे।

लाभ

इस अभ्यास से आमाशय की अच्छी मालिश होती है जिससे वायु और कब्ज दूर होते हैं तथा पेट की मांसपेशियाँ शक्तिशाली बनती हैं।

हिलना-डुलना और लुढ़कना



अभ्यास २०

अभ्यास २०: हिलना-डुलना और लुढ़कना

विधि

पीठ के बल सपाट लेट जाइये।

दोनों पैरों को सीने तक मोड़ लीजिये।

हाथों की अंगुलियों को एक-दूसरे में फँसाकर सिर के पीछे रखें।

केहुनियों को जमीन पर रखे हुए शरीर को दोनों ओर बारी-बारी से लुढ़काइये।

ऐसा १० बार कीजिये।

उसी स्थिति में रहिये, लेकिन भुजाओं को घुटनों के चारों ओर लपेट दीजिये।

पूरे शरीर को मेरुदण्ड (रीढ़ की हड्डी) पर कस कर आगे-पीछे हिलाइये-डुलाइये; उकड़ूँ बैठने की स्थिति में आने का प्रयत्न कीजिये।

टिप्पणी

इस अभ्यास के लिये खास तौर से कई परतों में मोड़ा गया कम्बल आवश्यक है ताकि मेरुदण्ड को किसी प्रकार से क्षति न पहुँचे।

ध्यान रखिये कि कहीं सिर जोर से धरती से न टकरा जाये।

सीमाएँ

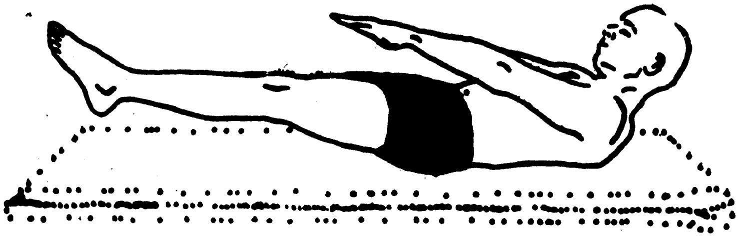
जिन्हें मेरुदण्ड सम्बन्धी कोई शिकायत हो, वे इसे न करें।

लाभ

इस अभ्यास से पीठ, कमर और नितम्बों की मालिश होती है।

प्रातः काल में इसका अभ्यास करना अत्यन्त लाभकारी है।

नौकासन



अभ्यास २१

अभ्यास २१ (१) : नौकासन

विधि

पीठ के बल सपाट लेट जाइये। भुजाएँ शरीर के दोनों ओर तथा हथेलियाँ जमीन की ओर रहें।

श्वास लीजिये और पैरों, भुजाओं, सिर तथा धड़ को जमीन से ऊपर उठाइये।

सिर जमीन से एक फुट से अधिक नहीं उठना चाहिये। भुजाओं को भी उसी ऊँचाई पर एवं पैरों की अंगुलियों की सीध में रखिये।

सुखपूर्वक जितनी देर उठी हुई स्थिति में रह सकें, रहें। फिर रेचक करते हुए धीरे-धीरे जमीन पर वापस आ जाइये।

पूरे शरीर को ढीला छोड़ दीजिये।

इस आसन को ५ बार कीजिये।

अभ्यास २१ (२) : नौकासन

इसी आसन को फिर कीजिए, लेकिन इस बार उठी हुई स्थिति में जितना सम्भव हो सके, मुट्ठियों को भींचिए और सारे शरीर में तनाव उत्पन्न कीजिए।

श्वास छोड़ते हुए शरीर को जमीन पर एकदम गिरा दीजिये (शरीर को बिना किसी प्रकार से चोट पहुँचाए) और तुरन्त पूरे शरीर को ढीला छोड़ दीजिये। शरीर को तुरन्त शिथिल करने की यह बड़ी ही शक्तिशाली विधि है।

श्वास

शरीर को उठाते समय पूरक।

शरीर को नीचे ले जाते समय रेचक ।

शरीर की उठी हुई स्थिति में अन्तर्कुम्भक (फेफड़ों में श्वास रोकना)

टिप्पणी

शरीर की उठी हुई स्थिति को तब तक बनाए रखना चाहिये जब तक कि आमाशय की मांसपेशियों में कंपन का अनुभव न होने लगे।

लाभ

मांसपेशियों और जोड़ों को ढीला और शिथिल करने का यह एक अच्छा आसन है। इसका अभ्यास पवनमुक्तासन-क्रम के अन्त में या प्रातः काल जागने पर किया जाना चाहिये। स्नायविक दुर्बलता एवं तनाव से पीड़ित व्यक्तियों के लिये यह बड़ा उपयोगी है क्योंकि इसके अभ्यास से शिथिलता की स्थिति तुरन्त आती है। इसके अभ्यास से पेट और आँतों में स्थित कृमि (कीड़े) आसानी से निकल जाते हैं। यह पाचन क्रिया को सुधारता है और आँतों में गतिशीलता एवं क्रियाशीलता लाता है।

शक्तिबन्ध के आसन

अनेक व्यक्तियों, विशेष रूप से नये अभ्यासियों की मांसपेशियाँ और जोड़ बड़े कड़े रहते हैं। इस कारण वे योग-आसनों के प्रमुख अभ्यासों को करने में काफी कठिनाई का अनुभव करते हैं। पवनमुक्तासन का संपूर्ण क्रम शरीर को ढीला करने में बड़ा प्रभावशाली है। आगे आने वाले बन्ध के अभ्यास नए अभ्यासी को आसन करने में बड़ी मदद करेंगे। जो नियमित रूप से आसन लगाते हैं, वे भी कभी-कभी कड़ेपन का अनुभव कर सकते हैं। अतः शरीर के कड़ेपन और लोचहीनता को हटाने के ये आदर्श अभ्यास हैं।

शक्तिबन्ध क्या है ? प्राण के रूप में शक्ति शरीर के प्रत्येक भाग में रहती है। इसे सदा स्वतन्त्र रूप से प्रवाहित होते रहना चाहिए। शरीर में त्रुटिपूर्ण रासायनिक प्रतिक्रियाओं के कारण प्राण के स्वतंत्र प्रवाह में बाधा पहुँचती है। परिणामस्वरूप कड़ापन, गठिया और मांसपेशियों में तनाव उत्पन्न हो जाता है। शक्तिबन्ध के ये अभ्यास शरीर से विषैले तत्वों को बाहर निकालते हैं और यह निश्चित कर देते हैं कि शरीर के अन्दर होने वाली प्रतिक्रियाएँ न केवल ठीक हैं, बल्कि आपस में संतुलित भी हैं। शरीर में सामान्यतः नलिकाविहीन ग्रन्थि-प्रणाली (Endocrinal System) में गड़बड़ी उत्पन्न होती है। रूस, पोलैण्ड, फ्रांस, जर्मनी और भारत में किये गये वैज्ञानिक परीक्षणों से यह अन्तिम रूप से सिद्ध हो गया है कि आसन व शक्तिबंध के अभ्यास नलिकाविहीन ग्रन्थि-प्रणाली या अन्तःस्रावी ग्रन्थि-प्रणाली में सामंजस्य स्थापित करने में बड़े शक्तिशाली हैं।

अतः जो व्यक्ति आसन नहीं कर सकते हैं, उन्हें शक्तिबन्ध का अभ्यास दो कारणों से करना चाहिए। पहला कारण है– उनके शरीर को अन्तिम रूप से आसनों हेतु तैयार करना और दूसरा – शारीरिक गतिविधियों में सामंजस्य बनाए रखना।

नौका-संचालन



अभ्यास १

अभ्यास १ : नौका-संचालन

विधि

पैरों को सामने की ओर फैला कर बैठ जाइये।

पैरों को एक साथ रखते हुये नाव चलाने के अन्दाज में शरीर को संचालित कीजिए।

जितना संभव हो सके, उतना आगे-पीछे झुकते हुये एक घेरे का आकार बनाते जाइये।

ऐसा १० बार कीजिये।

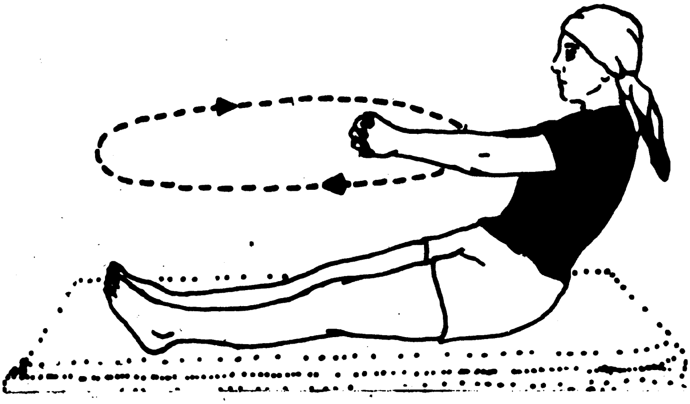
अब अपने नाव चलाने के ढंग को उलट दीजिये जैसे कि अब आप विपरीत दिशा में जा रहे हों।

इसे भी १० बार कीजिए।

लाभ

प्रथम ३ महीने तक गर्भवती स्त्रियों के लिए उत्तम अभ्यास है। यह आमाशय को क्रियाशील बनाने वाला आसन है। इससे पेट के समस्त अंगों एवं मांसपेशियों की मालिश होती है।

चक्की चलाना



अभ्यास २

अभ्यास २ : चक्की चलाना

विधि

पैरों को फैला कर बैठ जाइये। हाथों को सामने सीधे फैलाकर अंगुलियों को एक-दूसरे में फँसा लीजिये।

कमर से झुकते हुये हाथों द्वारा घेरे का आकार बनाते जाइये।

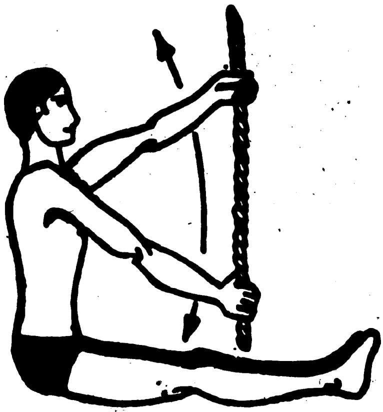
कल्पना कीजिये कि आप चक्की चला रहे हैं।

इसे १०-१० बार दायीं और बायीं ओर से कीजिये।

लाभ

गर्भवती महिलाओं के लिये यह एक उपयोगी अभ्यास है, क्योंकि इससे गर्भाशय और आमाशय की मांसपेशियों की अच्छी मालिश हो जाती है।

रस्सी खींचना



अभ्यास ३

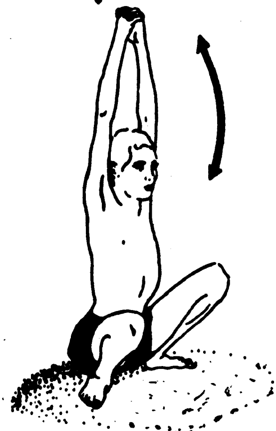
अभ्यास ३ : रस्सी खींचना

विधि

पैर सामने फैलाकर बैठ जाइये और हाथों को बारी-बारी से ऊपर उठाइये और नीचे लाइये; मानो आप ऊपर से लटकी हुई रस्सी नीचे की ओर खींच रहे हों।

लाभ

भुजाओं और कन्धों की मांसपेशियों को शक्तिशाली और शिथिल बनाने में यह अभ्यास बड़ा सहायक है। महिलाओं में यह दृढ़ वक्ष स्थल का विकास करता है।



अभ्यास ४

अभ्यास ४ : लकड़ी काटना

विधि

पैरों के पंजों के बल बैठ जाइये। घुटने झुके हुए और दूर-दूर रहें। भुजाओं को घुटनों के बीच से सीधे सामने की ओर फैलाकर हाथों की अंगुलियों को एक-दूसरे में फँसा लें।

अब इस अंदाज में हाथ ऊपर-नीचे करें, मानो आप कुल्हाड़ी से लकड़ी काट रहे हों।

हाथों को ऊपर उठाते समय श्वास लीजिए।

हाथों को नीचे लाते समय श्वास छोड़िये।

इसे १० से २० बार तक दुहराइये।

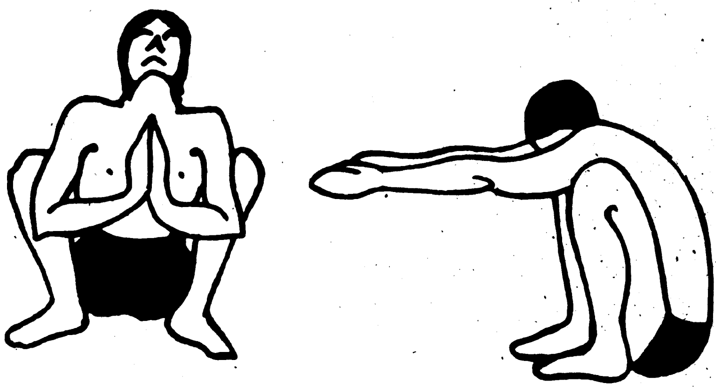
टिप्पणी

यदि पंजों के बल बैठना बहुत कठिन लगे तो खड़े रहकर भी इस अभ्यास को किया जा सकता है।

लाभ

महिलाओं के वक्ष-स्थल के विकास के लिए यह उत्तम अभ्यास है।

शिशु-जन्म से पूर्व गर्भाशय आदि की मांसपेशियों के व्यायाम के लिए यह बहुत उपयोगी है।



अभ्यास ५

अभ्यास ५ : नमस्कार

विधि

घुटने दूर-दूर रखते हुए जमीन पर उकड़ूँ बैठ जाइये।

हाथों को प्रार्थना की मुद्रा में जोड़ कर केहुनियों से घुटनों को अन्दर की तरफ से दबाइये।

श्वास अन्दर लीजिये। सिर को उठाइये और जितना संभव हो, उतना घुटनों को बाहर की ओर दबाइये।

कुछ क्षणों तक इसी स्थिति में रुकिये।

श्वास बाहर निकालिये। भुजाओं को सामने की ओर सीधा कीजिए और आगे व नीचे की ओर झुकते हुए घुटनों को पास-पास लाइये।

सिर को घुटनों के निकट ले आइये।

घुटनों से हाथों को अन्दर की ओर दबाइये।

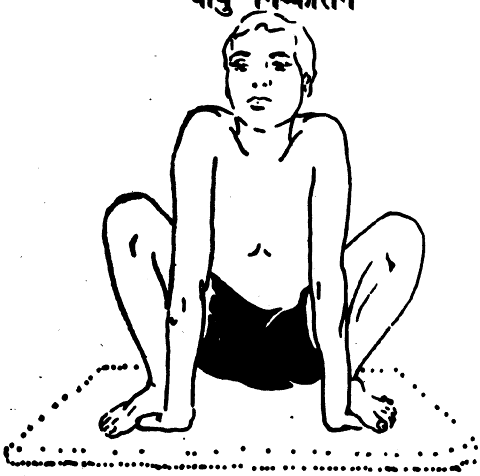
फिर प्रारम्भिक स्थिति में वापस आ जाइये।

इस अभ्यास को १० बार दुहराइये।

लाभ

जाँघों, घुटनों, कन्धों व भुजाओं के स्नायुओं पर इस अभ्यास का बड़ा लाभकारी और तेज असर पड़ता है।

वायु निष्कासन



अभ्यास ६

अभ्यास ६ : वायु निष्कासन

विधि

पंजों के बल उकड़ूँ बैठ जाइये।

हाथों की अंगुलियों को अन्दर की तरफ से तलवों के नीचे रखिये।

घुटनों के अन्दर की तरफ केहुनियों का दबाव रखिये।

श्वास लीजिये और सिर को ऊपर उठाइये।

श्वास छोड़िये। सिर को नीचे लाते हुए व पैरों को सीधे करते हुये शरीर को उठाइये।

कुछ क्षणों तक इसी स्थिति में रुकिये।

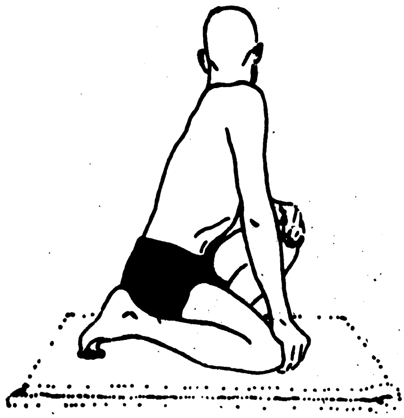
तत्पश्चात् प्रारम्भिक स्थिति में लौट आइये।

इसे १० बार कीजिये।

लाभ

पूर्व अभ्यास की तरह इसका भी जाँघों, घुटनों, कन्धों व भुजाओं के स्नायुओं पर बड़ा लाभकारी प्रभाव पडता है।

उदराकर्षणासन



अभ्यास ७

अभ्यास ७ : उदराकर्षणासन

विधि

हाथों को घुटनों पर रखते हुए पंजों के बल उकड़ूँ बैठ जाइये। जितना सम्भव हो सके, धड़ को दाहिनी ओर मोड़ते हुए शरीर के पीछे की तरफ देखिये। साथ ही साथ बाएँ घुटने को जमीन पर झुकाइये।

हथेलियाँ घुटनों पर रहें।

प्रारम्भिक स्थिति में लौट आइये।

इसी प्रकार शरीर को विपरीत दिशा में मोड़कर कीजिये।

प्रत्येक दिशा में शरीर को १० बार मोड़िये।

लाभ

आमाशय की बीमारियों से पीड़ित व्यक्तियों के लिये यह बहुत उपयोगी आसन है, क्योंकि यह पाचक अंगों एवं मांसपेशियों को संकुचित करता और फैलाता है।

यह पेट और आँतों को साफ करने वाली क्रिया, शंख प्रक्षालन (जिसका वर्णन इसी पुस्तक में आगे किया गया है) के दौरान किये जाने वाले आसनों में से एक है।

कब्ज से पीड़ित लोगों को यह आसन नियमित रूप से करना चाहिये।

आँखों के लिए अभ्यास

आगे दिये गये अभ्यासों को यदि धैर्य व लगन से किया जाये तो आँखों के मांसपेशी-सम्बन्धी एवं स्नायविक सभी प्रकार के दृष्टिविकार ठीक किये जा सकते हैं। जिन लोगों ने लम्बे समय तक इन अभ्यासों को किया है, उनका चश्मा लगाना छूट गया है। अनेक व्यक्ति इसके उदाहरण हैं।

प्रत्येक अभ्यास के बाद आँखों को बन्द करके आधा मिनट विश्राम देना चाहिये। जितनी अधिक बार इन अभ्यासों को किया जायेगा, उतना ही अच्छा होगा। वैसे दैनिक कार्यक्रम में समय की कमी होने पर पूरे क्रम को एक बार प्रातः और एक बार शाम को कर लेना काफी है। ऐसी स्थिति में अभ्यासों को अत्यधिक जागरूकता एवं समर्पण की भावना से करना चाहिये।

अभ्यास १ : आँखों पर हथेलियाँ रखना

विधि

उगते हुए सूरज के सामने आँखें बन्द करके बैठ जाइये। अपनी हथेलियों को कस कर रगड़िये। जब वे गर्म हो जायें तो उन्हें आँखों पर रखिये। कुछ क्षणों तक इसी स्थिति में रहिये और अनुभव कीजिये जैसे गर्मी और शक्ति दोनों हाथों से निकलकर आँखों में जा रही है। दो-तीन मिनटों के बाद हाथ हटा लीजिये। आँखें बराबर बन्द रहें।

इस अभ्यास को कम से कम ३ बार दुहराइये।

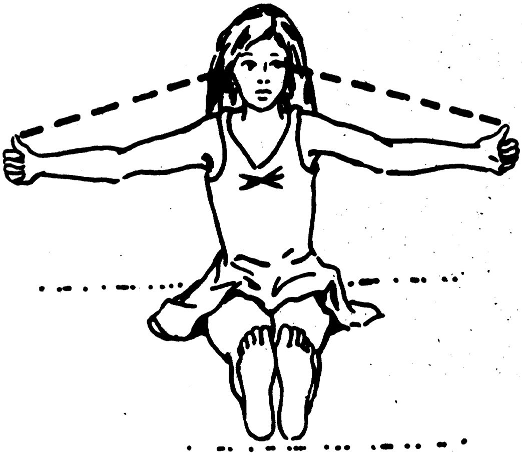
टिप्पणी

इसे दिन में किसी भी समय किया जा सकता है।

लाभ

दृष्टि से सम्बन्धित स्नायुओं को यह अभ्यास शिथिल करता है एवं थकान को दूर कर पुनः शक्ति भर देता है।

दाएँ-बाएँ देखना



अभ्यास २

अभ्यास २ : दाएँ-बाएँ देखना

विधि

पैरों को सामने सीधे करके बैठ जाइये।

भुजाओं को कन्धों की ऊँचाई पर दोनों ओर सीधे फैला दीजिये।

अँगूठे ऊपर की ओर रहें।

सिर को बिना घुमाए आँखों को एक के बाद एक निम्नलिखित स्थानों पर केन्द्रित करें –

(क) बाएँ हाथ का अंगूठा

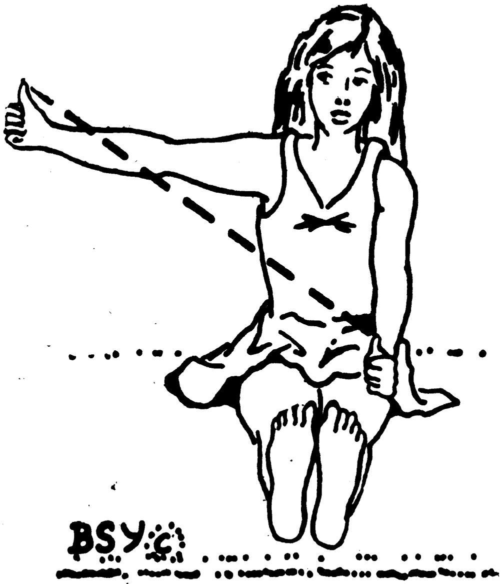
(ख) भ्रूमध्य (भौहों के बीच का स्थान)

(ग) दाएँ हाथ का अंगूठा

(घ) भ्रूमध्य

इस चक्र को १५ से २० बार तक दुहराइये। फिर आँखें बन्द करके विश्राम कीजिये।

सामने और दाएँ-बाएँ देखना



अभ्यास ३

अभ्यास ३ : सामने और दाएँ-बाएँ देखना

विधि

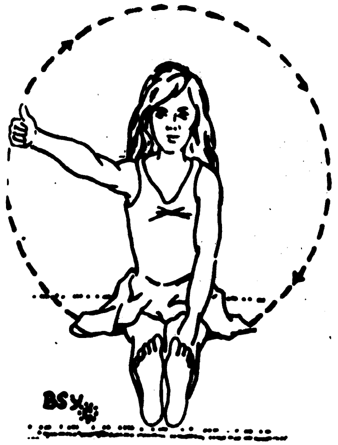
अभ्यास २ की स्थिति में ही रहिये लेकिन बाएँ हाथ को बाएँ घुटने पर इस प्रकार रखिये कि अंगूठा ऊपर की ओर रहे।

दायीं भुजा दायीं ओर बाजू में फैलाकर इस प्रकार रखें कि अंगूठा ऊपर की ओर रहे। सिर को बिना घुमाए हुए आँखों को पहले बाएँ और फिर दाएँ अंगूठे पर बारी-बारी से केन्द्रित कीजिये।

इसे १५-२० बार दुहराइये। तब आँखें बन्द करके विश्राम करते हुए इस विधि को मानसिक रूप से कीजिये।

इसी प्रक्रिया की पुनरावृत्ति बायें हाथ को बायीं ओर फैलाकर कीजिए।

दृष्टि को वृत्ताकार घुमाना



अभ्यास ४

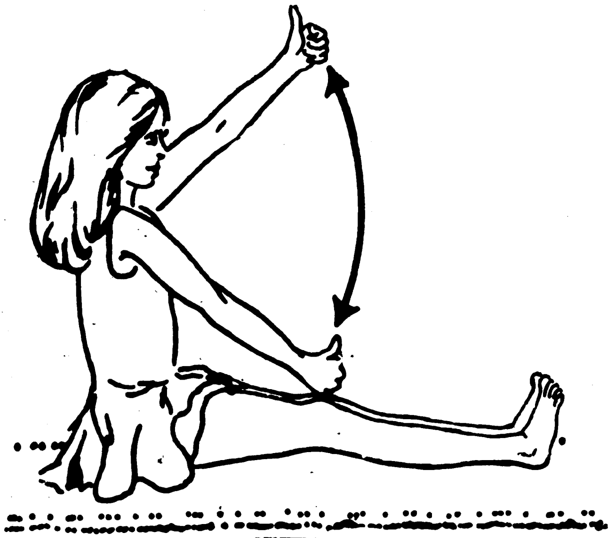
अभ्यास ४ : दृष्टि को वृत्ताकार घुमाना

विधि

शरीर को अभ्यास ३ की स्थिति में ही रखिये लेकिन बायाँ हाथ बाएँ घुटने पर और दायीं मुट्ठी दाएँ पैर से थोड़ी ऊपर रखिए। दायाँ अंगूठा ऊपर की ओर हो और दायीं भुजा सीधी रहे। एक बड़ा घेरा बनाते हुए दाएँ अंगूठे को दायीं ओर ले जाइये, फिर ऊपर की ओर, उसके बाद बायीं ओर और अन्त में प्रारम्भिक स्थिति में आ जाइये। इस दौरान बिना सिर हिलाए हुए आँखों को घूमते हुए अंगूठे पर केन्द्रित रखिए। इसे ५ बार बायीं ओर तथा ५ बार दायीं ओर से घेरा बनाकर दोहराइये। इसी प्रक्रिया को बाएँ अंगूठे से कीजिये।

अन्त में आँखें बन्द करके विश्राम कीजिये।

दृष्टि को ऊपर-नीचे करना



अभ्यास ५

अभ्यास ५ : दृष्टि को ऊपर-नीचे करना

विधि

अभ्यास ४ की स्थिति में रहते हुए दोनों मुट्ठियों को इस प्रकार घुटने पर रखिये कि अंगूठे ऊपर की ओर रहें। भुजाओं को सीधी रखते हुए और बिना सिर को हिलाए दाएँ अंगूठे को ऊपर उठाते जाइये। उस पर आपकी दृष्टि भी केन्द्रित रहे। बिल्कुल ऊपर पहुँचने पर दृष्टि को केन्द्रित रखते हुए धीरे-धीरे प्रारम्भिक स्थिति में लौट आइये। प्रत्येक अंगूठे से ५-६ बार दुहराइये।

अन्त में आँखें बन्द करके विश्राम कीजिये।

दृष्टि को पास और दूर केन्द्रित करना

अभ्यास ६ : दृष्टि को पास और दूर केन्द्रित करना

विधि

अभ्यास ५ की स्थिति में ही रहिये लेकिन भुजाओं को ढीला छोड़ दीजिये।

दृष्टि को नाक के अग्र भाग पर केन्द्रित कीजिये।

फिर किसी दूर की वस्तु पर दृष्टि को केन्द्रित कीजिये।

दृष्टि पुनः नासिकाग्र पर केन्द्रित कीजिये।

इस प्रक्रिया को अनेक बार दुहराइये।

अन्त में आँखें बन्द करके विश्राम कीजिये।

अन्य अभ्यास

निम्नलिखित विधियाँ जिनमें से अधिकांश को इस पुस्तक में समझाया गया है, आँखों के लिये बड़ी गुणकारी हैं –

(१) शीर्षासन

(२) सर्वांगासन

(३) सूर्य नमस्कार

(४) सूर्यभेद प्राणायाम

(५) नेति क्रिया

(६) त्राटक

(७) प्रतिदिन आँखों को पहले शिवाम्बु से और बाद में स्वच्छ जल से धोना।

शिथिलीकरण के आसन

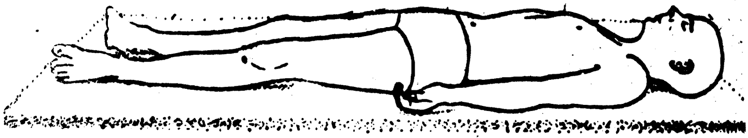
शिथिलीकरण के आसनों के महत्व की जितनी प्रशंसा की जाये, उतनी कम है। उन्हें आसन-सत्र के पूर्व या जब भी शारीरिक थकान हो, कर लेना चाहिये। पहली बार देखने से ये आसन बड़े सरल लगते हैं फिर भी उन्हें उचित ढंग से करना कठिन है, क्योंकि शरीर की सभी मांसपेशियों को चेतन रूप में शिथिल करना पड़ता है।

आधुनिक वैज्ञानिक युग में लोग अनेक तनावों एवं दुश्चिन्ताओं के अधीन हैं। उन्हें नींद में भी आराम नहीं मिलता। ऐसे लोगों को जिस प्रकार के विश्राम की आवश्यकता है, उसे वे इन आसनों के द्वारा निश्चित ही प्राप्त कर सकते हैं।

शरीर और मन को शिथिल करने की एक विशेष सरल एवं शक्तिशाली यौगिक विधि है– योगनिद्रा। दिन भर की कठिन मेहनत के बाद अथवा रात्रि को सोने से पूर्व इस अभ्यास को करने से बड़ा लाभ पहुँचता है। विधि इस प्रकार है– शवासन में लेट जाइये और अपनी चेतना को शरीर के विभिन्न भागों में घुमाइये। मानसिक रूप से अनुभव कीजिए कि हाथ फर्श का ही एक अंग बन गया है। बारी-बारी से विभिन्न अंगों के प्रति जागरूक होते जाइये– अंगूठा, दूसरी अंगुली, तीसरी अंगुली, चौथी अंगुली, पाँचवी अंगुली, हथेली, कलाई, केहुनी, भुजा, बगल, बायीं कमर, बायाँ कूल्हा, बायीं जाँघ, बायाँ घुटना, पिंडली, टखना, एड़ी, तलवा, बायें पैर का अंगूठा, दूसरी अंगुली, तीसरी अंगुली, चौथी अंगुली, पाँचवीं अंगुली। इसी प्रक्रिया को शरीर के दूसरे भागों एवं सिर और धड़ के सभी भागों के साथ दुहराइये। आपके शरीर का प्रत्येक अंग शिथिल होकर फर्श में मिलता जा रहा है, इसका अनुभव निरन्तर करते रहें।

इसी प्रक्रिया को दो-तीन बार दुहराइये। आपके शरीर तथा मन के सभी तनाव दूर हो जायेंगे।

शवासन



शवासन

विधि

पीठ के बल लेट जाइये। भुजाएँ शरीर के बगल में रहें। हथेलियाँ ऊपर की तरफ खुली रहें।

पैरों को आराम की स्थिति में थोड़ा दूर-दूर कर लें। आँखें बन्द रहें।

पूरे शरीर को ढीला छोड़ दीजिए।

शरीर का कोई भी भाग हिलाइये नहीं। श्वास को सहज होने दीजिये।

मस्तिष्क को श्वास-प्रश्वास के प्रति जागरूक होने दीजिये।

श्वास-प्रश्वास की गिनती कीजिये– १ अन्दर; १ बाहर; २ अन्दर; २ बाहर। इसी तरह गिनते जाइये।

कुछ मिनटों तक गिनते रहिये। यदि मन यहाँ-वहाँ भटके तो उसे वापस गिनती में लगाइये।

यदि अभ्यासी कुछ मिनटों तक अपनी श्वास के प्रति जागरूक रह सके तो निश्चित ही उसका तन-मन शिथिल हो जायेगा।

श्वास

सहज, स्वाभाविक एवं लयपूर्ण।

समय

आप जितने अधिक समय तक कर सकें, कीजिये।

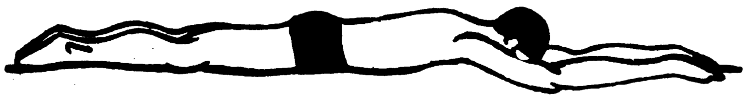
एकाग्रता

श्वास एवं गिनती पर एकाग्रता आवश्यक है। यदि योगनिद्रा शवासन में की जा रही है तो शरीर के विभिन्न अंगों के प्रति जागरूक रहिये।

लाभ

समस्त शारीरिक एवं मानसिक प्रणालियों को शिथिल करके विश्राम देता है। सोने से पूर्व, आसनों के पहले या मध्यम व गतिशील अभ्यासों के बाद इसका अभ्यास आदर्श माना जाता है।

अद्वासन



अद्वासन

अद्वासन

विधि

पेट के बल लेट जाइये।

दोनों भुजाओं को सामने की ओर सिर को स्पर्श करते हुए फैला दीजिये।

शवासन की तरह सम्पूर्ण शरीर को ढीला छोड़ दीजिए।

श्वास

सहज, स्वाभाविक एवं लयपूर्ण।

समय

रोगों के उपचार हेतु जितनी देर तक सम्भव हो सके, करें।

आसनों से पूर्व या मध्य में कुछ मिनटों का अभ्यास पर्याप्त है।

एकाग्रता

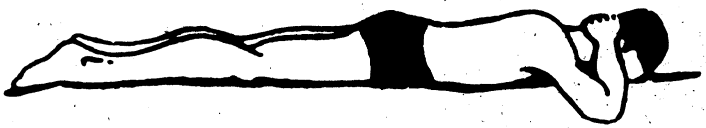
श्वास-प्रश्वास की गिनती पर।

लाभ

स्लिप डिस्क (रीढ़ सम्बन्धी रोग), कड़ी गर्दन अथवा सामने की ओर झुके शरीर में उपयोगी है।

ऐसे लोग इसे रोगोपचार में ही सहायक न पायेंगे, बल्कि वे इस आसन में सो भी सकते हैं।

ज्येष्टिकासन



ज्येष्टिकासन

ज्येष्टिकासन

विधि

पैरों को सीधे रखते हुए पेट के बल लेट जाइये।

हाथों की अंगुलियों को एक-दूसरे में फँसा कर सिर के पिछले भाग पर रख लीजिए।

शवासन की तरह पूरे शरीर को ढीला छोड़ते हुए श्वास-प्रश्वास का ध्यान कीजिये।

श्वास

सहज, स्वाभाविक एवं लयपूर्ण।

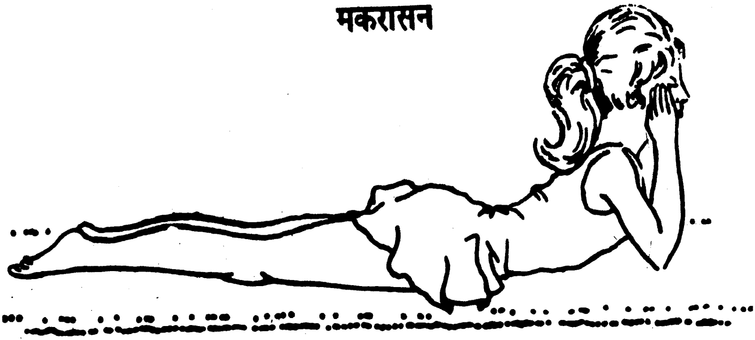
एकाग्रता

श्वास-प्रश्वास पर।

लाभ

गर्भ के समय महिलाओं के लिये लाभकारी है क्योंकि यह गर्भाशय की मांसपेशियों को शिथिल करता है।

मकरासन



मकरासन

मकरासन

विधि

पेट के बल सपाट लेट जाइए।

कुहनियों के सहारे सिर और कन्धों को उठाइये और हथेलियों पर ठुड्डी को टिका दीजिए।

आँखों को बन्द करके पूरे शरीर को ढीला छोड़ दीजिये।

श्वास

सहज, स्वाभाविक एवं लयपूर्ण।

समय

जितना समय निकाल सकें, उतनी देर तक इसे कर सकते हैं।

एकाग्रता

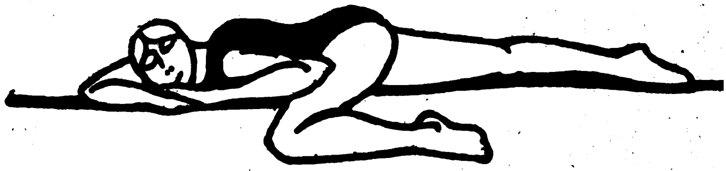
श्वास-प्रश्वास की क्रिया एवं उसकी गिनती पर।

लाभ

यह आसन उन लोगों के लिए बड़ा उपयोगी है जो स्लिप डिस्क या रीढ़ की हड्डी की किसी भी गड़बड़ी से पीड़ित हैं। उन्हें लम्बे समय तक इस आसन में रहना चाहिए।

दमा तथा फेफड़ों के अन्य रोगों से पीड़ित लोगों को इस सरल आसन को करना चाहिए।

मत्स्य-क्रीड़ासन



मत्स्य-क्रीड़ासन

मत्स्य - क्रीड़ासन

विधि

पेट के बल लेट जाइये और अंगुलियों को फँसा कर सिर के नीचे रख लीजिए।

बायें पैर को बगल की ओर मोड़ लें और जमीन से लगे हुए बायें घुटने को अपनी पसलियों की तरफ ले आइये।

अपनी भुजाओं को बायीं ओर घुमा कर ले जाइये और बायीं केहुनी को बायीं जाँघ पर रख लीजिये।

अपने सिर के दाएँ भाग को अपने दाएँ हाथ के मुड़े भाग पर रखें।

यह स्थिति फड़फड़ाती हुई मछली के समान है।

श्वास

स्थिर अवस्था में सहज एवं सामान्य श्वास लें।

समय

जितनी देर तक हो सके, इस आसन का अभ्यास दोनों तरफ से करें।

इस आसन में सोया भी जा सकता है।

एकाग्रता

श्वास पर।

लाभ

यह आसन कमर की अतिरिक्त चर्बी को हटा कर पूरे शरीर में फैलाता है। आँतों को फैलाकर उनके अन्दर की गतिशीलता को बढ़ाता है। यह विश्राम का एक श्रेष्ठ आसन है जो कब्ज के निदान में सहायक है। पैरों के स्नायुओं को शिथिल करके यह साइटिका की पीड़ा से छुटकारा दिलाता है।

ध्यान के आसनों से पूर्व के अभ्यास

योग के उच्च अभ्यास (जैसे ध्यान) के एक लिए स्थिति में लम्बे समय तक बैठे रहने का अभ्यास अत्यन्त आवश्यक है। प्रायः जिन आसनों में ध्यान किया जाता है, वे हैं– पद्मासन, अर्द्ध पद्मासन, सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन, सुखासन और वज्रासन। प्रथम तीन आसन यद्यपि इतने कठिन नहीं हैं, फिर भी यदि उन्हें लम्बे समय तक करना है तो इसके लिए पैरों की मांसपेशियों को लोचदार बनाने एवं शरीर को ध्यान के आसनों के लिए तैयार करने हेतु निम्नलिखित अभ्यास बहुत उपयोगी हैं–

अभ्यास १ : अर्द्ध तितली

विधि

पवनमुक्तासन भाग १, अभ्यास ७ में दिये गये विवरण के अनुसार इस अभ्यास को करें।

जब घुटना जमीन से छूने लगे तो धीरे-धीरे मस्तक से मुड़े हुए घुटने का स्पर्श करें। अधिक जोर न लगायें।

इस अभ्यास को दोनों पैरों से ५-५ बार दुहराइये।

अभ्यास २ : पूर्ण तितली

विधि

पवनमुक्तासन भाग १, अभ्यास ९ में दिये गये विवरण के अनुसार इस अभ्यास को करें।

अभ्यास ३ : कौआ-चाल

विधि

पवनमुक्तासन भाग १, अभ्यास १० में दिये गये विवरण के अनुसार इस अभ्यास को करें।

पशुओं की शिथिलीकरण क्रिया



अभ्यास ४

अभ्यास ४ : पशुओं की शिथिलीकरण क्रिया

विधि

फर्श पर बैठकर दाएँ पंजे को बायीं जाँघ से सटा दीजिये और बायें पैर को पीछे की ओर इतना मोड़िये कि एड़ी नितम्ब से लगने लगे।

श्वास लीजिये और दोनों हाथ ऊपर की ओर उठा दीजिये।

श्वास छोड़िये और दाहिने घुटने पर झुकिये।

धीरे-धीरे और लयपूर्ण ढंग से श्वास लेते हुए इसी स्थिति में लगभग एक मिनट रुकिये।

ऊपर उठे हुए हाथों की स्थिति में लौटते हुए श्वास लीजिये। बाएँ घुटने पर झुकते हुए इसी अभ्यास को दुहराइये।

अभ्यास ५

शक्ति बन्ध के अभ्यास ५ और ६ में दिये गये विवरण के अनुसार अभ्यासों को करें।

ध्यान के आसन

ध्यान के आसनों का मुख्य उद्देश्य है कि अभ्यासी लम्बे समय तक एक ही स्थिति में बैठ सके। ध्यान की उच्च अवस्था में अभ्यासी को बिना हिले-डुले और बिना किसी प्रकार की शारीरिक पीड़ा के कुछ घण्टों तक एक ही स्थिति में बैठना पड़ता है। वास्तव में सफल ध्यान तभी लग सकेगा जब शरीर स्थिर और शान्त रहे। इस समूह के आसन ऐसे हैं जिनके अभ्यास के बाद बिना किसी तनाव और कष्ट के लम्बे समय तक उनमें स्थिर रहा जा सकता है। यद्यपि अन्य आसन भी लम्बे समय तक किये जा सकते हैं लेकिन या तो उनमें शरीर को कष्ट होने लगता है या फिर उनको बनाये रखने में निरन्तर ख्याल रखना पड़ता है। एक अन्य कारण यह भी है कि गहरे ध्यान के लिए रीढ़ की हड्डी का सीधा रहना आवश्यक है और आसनों में से कुछ आसन ही ऐसे हैं जो इस शर्त को पूरी करते हों। इसके अतिरिक्त ध्यान की उच्च अवस्थाओं में शरीर की मांसपेशियों पर अभ्यासी का नियंत्रण नहीं रहता। अतः ध्यान के आसनों को ऐसा होना चाहिए जिनमें बिना किसी प्रयास के शरीर स्वतः एक स्थिर स्थिति में रह सके।

प्रश्न उठ सकता है कि शवासन में ध्यान क्यों न किया जाये क्योंकि इसमें सभी आवश्यक शर्तें पूरी होती हैं। इसका उत्तर बड़ा सरल है। ध्यान में यह बहुत आवश्यक है कि अभ्यासी को नींद न आये और ध्यान से पूर्व तन और मन को शिथिल करने वाली विधियों का अभ्यास करते हुए शवासन में नींद न आये, यह लगभग असम्भव है।

ध्यान का अनुभव प्राप्त करने के प्रारम्भिक प्रयत्नों के लिए नये अभ्यासी सुखासन लगा सकते हैं क्योंकि यह बड़ा सरल है और इसके लिए शरीर का अधिक लचीला होना आवश्यक नहीं है। वैसे उन्हें ध्यान से पूर्व किये जाने वाले अभ्यासों (पूर्व अध्याय में जिनका वर्णन किया जा चुका है) को पूरी ईमानदारी से प्रारम्भ कर देना चाहिए ताकि वे पद्मासन और शीर्षासन जैसे कठिन लेकिन ध्यान के प्रमुख आसनों के लिए अपने शरीर को धीरे-धीरे तैयार कर सकें।

ऋषिकेश के स्वामी शिवानन्द जी महाराज आसन और ध्यान के सम्बन्ध में कहते हैं –

"बिना हिले-डुले एक बार में ध्यान के किसी आसन में पूरे ३ घण्टे बैठने का आपको अभ्यास होना चाहिए। तभी आपको उस आसन पर पूर्ण अधिकार (आसन-सिद्धि) प्राप्त होगा। फिर आप प्राणायाम और ध्यान की उच्च अवस्थाओं तक जा सकते हैं। आसन में स्थिरता प्राप्त किये बिना आप ध्यान में अच्छी प्रगति नहीं कर सकते। आसन में आप जितने ही स्थिर होंगे, उतना ही अधिक अपने को एकाग्रचित्त एवं अपने मस्तिष्क को एक बिन्दु पर केन्द्रित होने के योग्य बना सकेंगे; अपने अन्दर अनन्त शान्ति और आत्मानन्द का अनुभव करेंगे।

जब आप आसन में बैठें तो सोचिये – "मैं चट्टान की तरह दृढ़ हूँ। मुझे कोई हिला नहीं सकता।" कई बार अपने मस्तिष्क को यह सुझाव दीजिये। तब आसन में जल्दी स्थिरता प्राप्त होगी। जब आप ध्यान में बैठें तो बिल्कुल एक जीवित मूर्ति बन जायें, तभी आपके आसन में स्थिरता आयेगी। एक वर्ष के नियमित अभ्यास के बाद आपको सफलता मिलेगी और आप एक बार में ३ घण्टे के लिए बैठ सकेंगे।

प्रारम्भ में बहुत से लोगों को किसी एक आसन में लम्बे समय तक बैठने में कठिनाई होगी। फिर भी उन्हें निराश नहीं होना चाहिए, बल्कि ध्यान से पूर्व किये जाने वाले अभ्यासों को लगन और मेहनत से करना चाहिए। आगे चलकर आश्चर्य होगा, जब वे पायेंगे कि उनसे ध्यान के आसन भी लगने लगे हैं। इसके बाद वे इन आसनों में थोड़े समय के लिए बैठ भी सकेंगे। इस अवस्था में उन्हें चाहिए कि वे प्रतिदिन आधा मिनट आसन की अवधि बढ़ाते जायें। कड़े शरीर वाले भी अन्त में पद्मासन में बैठ सकते हैं, यदि वे नियमित रूप से ध्यान से पूर्व किये जाने वाले अभ्यासों को लगन से करते रहें। पद्मासन में बैठ सकने की योग्यता केवल शरीर की लोच पर ही निर्भर नहीं है बल्कि मस्तिष्क की अवस्था पर भी है। दूसरे शब्दों में यदि अभ्यासी के मन में विश्वास है कि अन्त में वह पद्मासन लगाने में सफल हो जायेगा तो यह निश्चित समझिये कि वह ऐसा कर सकेगा। मस्तिष्क और शरीर का ऐसा ही घनिष्ठ सम्बन्ध है।

योग में प्राचीन काल से चले आये ध्यान के ये आसन हैं–

(क) पद्मासन

(ख) सिद्धासन (पुरुषों के लिए)

(ग) सिद्धयोनि आसन (महिलाओं के लिए)

(घ) स्वस्तिकासन

नये अभ्यासियों के लिए ध्यान के सरल आसन ये हैं–

(क) सुखासन

(ख) अर्ध पद्मासन

ध्यान के लिए जो अन्य सहायक आसन उपयोगी हैं, वे ये हैं–

(क) वज्रासन

(ख) आनन्दमदिरासन

(ग) पादादिरासन

वज्रासन में या वज्रासन में किये जाने वाले आसनों के अध्याय में अन्तिम तीनों आसनों का विवरण दिया गया है।

ध्यान के अभ्यासों के लिए अन्य आसनों का भी प्रयोग किया जा सकता है, लेकिन उच्च अवस्था में नहीं।

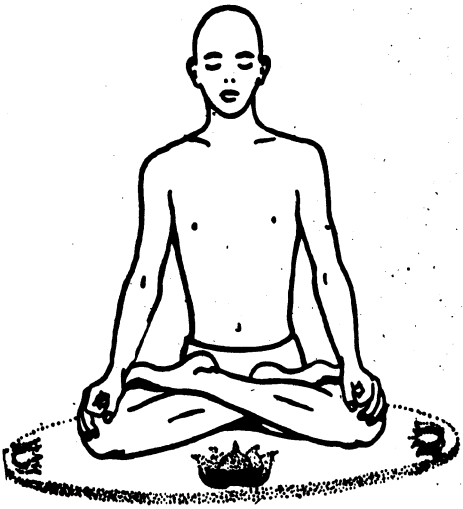
सावधानी

ध्यान के आसन में यदि कुछ समय बाद पैरों में तेज दर्द हो तो धीरे-धीरे पैरों को अलग करके उनकी मालिश कीजिए। फिर से आसन में बैठिये। आसन में बैठने के लिए कभी भी किसी कारण से अनावश्यक जोर व तनाव का प्रयोग न करें।

टिप्पणी

इनमें से कुछ आसन जैसे पद्मासन, कठिन होते हुए भी यहाँ इसलिये रख लिए गये हैं कि उनमें योग्यता प्राप्त किये बिना मध्यम-वर्गीय एवं ध्यान के कई आसन नहीं लग सकते।

पद्मासन



पद्मासन

पद्मासन

विधि

पैरों को सामने फैलाकर बैठ जाइये।

एक पैर को मोड़िये और उसके पंजे को दूसरी जाँघ पर इस प्रकार रखिये कि एड़ी कूल्हे की हड्डी का स्पर्श करे। तलवा ऊपर की ओर रहे।

अपना दूसरा पैर मोड़िये और उसका पंजा दूसरी जाँघ पर रखिये।

टिप्पणी

पद्मासन का अभ्यास ज्ञानमुद्रा अथवा चिन्मुद्रा में किया जा सकता है। (मुद्राओं का विवरण मुद्रा के अध्याय में देखिये)।

पद्मासन के अभ्यास में रीढ़ की हड्डी बिल्कुल स्थिर और सीधी रहनी चाहिए, मानो जमीन में गाड़ दी गयी हो। नये अभ्यासियों को सुविधा के लिए नितम्बों के नीचे गद्दी या तकिया रख लेना चाहिए।

सावधानी

ध्यान से पूर्व किये जाने वाले अभ्यासों के द्वारा पैरों में जब तक लोच न आ जाये, इस आसन का अभ्यास नहीं करना चाहिए।

सीमायें

साइटिका अथवा रीढ़ के निचले भाग के आसपास किसी प्रकार की गड़बड़ी से पीड़ित व्यक्तियों को यह आसन नहीं करना चाहिए।

लाभ

आसन में दक्षता प्राप्त हो जाने पर अभ्यासी अपने शरीर को लम्बे समय तक पूर्णतः स्थिर रख सकता है, क्योंकि शरीर और मस्तिष्क आपस में सम्बन्धित हैं और एक-दूसरे को नियंत्रित करते हैं। शरीर की स्थिरता से मन में स्थिरता आती है। सफल ध्यान के लिए स्थिरता पहली सीढी है।

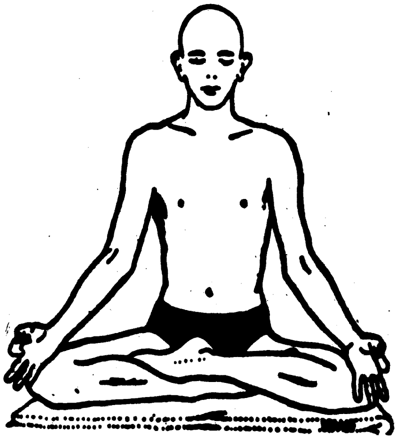
यह आसन प्राण-शक्ति को मूलाधार चक्र (गुदा और मूत्रेन्द्रिय के मध्य) से सहस्रार चक्र (सिर के ऊपरी भाग में) तक उचित रूप से प्रवाहित करता है।

पद्मासन रीढ़ के निचले भाग एवं आमाशय में फैले स्नायु-जाल को अतिरिक्त खून पहुँचाकर सामान्य करता है। (पैरों में खून का प्रवाह कम हो जाता है और इस प्रकार आमाशय को खून की अतिरिक्त आपूर्ति मिलती है)।

शारीरिक, स्नायविक एवं भावनात्मक समस्याओं से छुटकारा दिलाने में पद्मासन सहायक हैं।

इसके अभ्यास से जठराग्नि तीव्र होती है और भूख बढ़ती है।

सिद्धासन



सिद्धासन

सिद्धासन (पुरुषों के लिए)

विधि

पैरों को सामने फैला कर बैठ जाइये।

बाएँ पैर को मोड़िये और उसके तलवे को दायीं जाँघ से इस प्रकार सटा लीजिये कि एड़ी का दबाव सिवनी (पेरीनियम – प्रजनन अंग और गुदा द्वार के मध्य का भाग) पर रहे।

दायें पैर को मोड़िये और इसके पंजे को बायीं पिण्डली के ऊपर रखिये।

प्रजनन अंग के ठीक ऊपर बस्ति की हड्डी पर अपनी दायीं एड़ी का दबाव रखिये।

दायें पैर की अंगुलियों तथा पंजे के बाहरी भाग को बायीं पिण्डली और जाँघ की मांसपेशियों के बीच में फँसाइये। इसके लिए हो सकता है कि आपको बायें पैर को अपने स्थान से थोड़ा हटाना पड़े। बायें पैर की अंगुलियों को ऊपर या नीचे से पकड़ कर दायीं पिण्डली व जाँघ के बीच में फँसाइये।

घुटने जमीन पर तथा दायीं एड़ी ठीक बायीं एड़ी के ऊपर रखते हुए आपके पैर एक-प्रकार से बँध जायेंगे। अपनी रीढ़ को स्थिर तथा सीधी रखिये मानो उसे जमीन में गाड़ दिया गया हो।

टिप्पणी

सिद्धासन का अभ्यास केवल पुरुषों को करना चाहिए।

इसका अभ्यास किसी भी पैर को ऊपर करके तथा ज्ञान मुद्रा या चिन् मुद्रा (मुद्रा वाला अध्याय देखिये) के साथ किया जा सकता है। यदि नितम्बों को गद्दी के सहारे थोड़ा ऊपर उठा दिया जाये तो अनेक जिज्ञासुओं, खासतौर से नये अभ्यासियों को लम्बे समय तक इस आसन में रहना आसान हो जायेगा।

सीमाएँ

साइटिका और रीढ़ के निचले भाग की गड़बड़ी से पीड़ित व्यक्तियों को सिद्धासन का अभ्यास नहीं करना चाहिए।

लाभ

सिद्धासन ध्यान का एक आसन है जिसमें रीढ़ की स्थिरता को बनाये रखा जा सकता है तथा जो सफल ध्यान के लिए बहुत आवश्यक है। इसमें मूलबन्ध और वज्रोली मुद्रा स्वतः लग जाते हैं। परिणामस्वरूप काम-शक्ति की तरंगें रीढ़ प्रदेश से मस्तिष्क तक पहुँचने लगती हैं। यह काम सम्बन्धी क्रियाकलापों में अभ्यासी को संयम प्रदान करता है जिसे चाहे वह ब्रह्मचर्य के पालन में प्रयोग करे अथवा काम-शक्ति का आध्यात्मिक प्रगति के लिए ऊर्ध्वरेत में या इन्द्रियों व काम-शक्ति के क्रियाकलापों पर अधिक नियंत्रण प्राप्त करने में प्रयोग करे।

यह समस्त स्नायविक-प्रणाली को शान्त व सामान्य स्थिति में रखता है।

सिद्धयोनि आसन



सिद्धयोनि आसन

सिद्धयोनि आसन (महिलाओं के लिए)

विधि

पैरों को सामने फैलाकर बैठ जाइये।

बायें पैर को मोड़िये और तलवे को दायीं जाँघ से इस प्रकार सटाइये कि एड़ी योनि के अन्दर जम जाये।

दायें पैर को मोड़िये और उसके पंजे को बायीं पिण्डली और जाँघ के ऊपर रखिये। बायें पैर की अंगुलियों को दायीं पिण्डली और जाँघ के बीच के स्थान में ऊपर की ओर खींचिये।

रीढ़ को पूरी तरह सीधी रखिये मानो वह दृढ़ता से जमीन में गड़ी हो।

टिप्पणी

सिद्धयोनि आसन सिद्धासन का अप्रकाशित महिला संस्करण है।

कोई भी पैर ऊपर करके इसका अभ्यास किया जा सकता है और इसका सही अभ्यास नीचे कुछ पहने बिना होता है।

इसका प्रयोग ज्ञान मुद्रा के साथ होता है।

यदि नितम्बों को गद्दी के सहारे कुछ ऊँचा उठा दिया जाये तो जिज्ञासु अभ्यासियों को इस आसन में लम्बे समय तक स्थिर रहना आसान हो जायेगा।

सीमाएँ

साइटिका या रीढ़ के निचले भाग में दोष व विकार वाली महिलाओं को सिद्धयोनि आसन नहीं करना चाहिए।

लाभ

सिद्धयोनि आसन ध्यान का एक श्रेष्ठ आसन है जिसमें महिलायें सफल ध्यान के लिए लम्बे समय तक शारीरिक रूप से स्थिर रह सकती हैं। इसका सीधा प्रभाव उन स्नायविक केन्द्रों पर पड़ता है जो महिलाओं में प्रजनन-प्रणाली को नियंत्रित करते हैं। इससे काम-भावनाओं पर नियंत्रण प्राप्त होता है जिसे योगी आध्यात्मिक ध्यान और गृहस्थ इन्द्रियगत एवं काम वासना संबंधी आनन्द के लिए प्रयोग करता है। सिद्धयोनि आसन समस्त स्नायविक-प्रणाली को सामान्य व संतुलित रखता है तथा उसे बल प्रदान करता है।

स्वस्तिकासन

स्वस्तिकासन

विधि

पैरों को सामने की तरफ फैलाकर बैठ जाइये।

बायें पैर को मोड़िये और पंजे को दायीं जाँघ की मांसपेशियों के पास रखिये।

इसी प्रकार दायें पैर को मोड़िये और पैर की अंगुलियों को बायीं जाँघ व पिंडलियों की मांसपेशियों के बीच में फँसाइये।

दोनों पैरों की अंगुलियाँ दोनों जाँघों और पिंडलियों के बीच में रहनी चाहिए।

ज्ञान मुद्रा या चिन्मुद्रा (मुद्रा वाला अध्याय देखिये) के साथ हाथों को घुटनों पर रखिये या फिर उन्हें गोद में रखा जा सकता है।

रेखाचित्र के लिए सिद्धासन देखिये।

टिप्पणी

प्राचीन परम्परागत ध्यान के आसनों में से यह सबसे सरल है। ऊपरी रूप से यह सिद्धासन से मिलता-जुलता है लेकिन इसमें मुख्य अन्तर यह है कि सिद्धासन की तरह इसमें सिवनी (पेरीनियम) पर एड़ी का दबाव नहीं रहता।

सीमाएँ

साइटिका व रीढ़ के निचले भाग के विकारों से पीड़ित लोगों को यह आसन नहीं करना चाहिए।

लाभ

इसके वही लाभ हैं जो सिद्धासन (व सिद्धयोनि आसन) के हैं।

सुखासन



सुखासन

सुखासन

विधि

पैरों को अपने शरीर के सामने फैलाकर बैठ जाइये।

दाएँ पैर को मोड़ कर पंजे को बायीं जाँघ के नीचे रखिये।

बाएँ पैर को मोड़ कर पंजे को दायीं जाँघ के नीचे रखिये।

हाथों को घुटनों पर रखिये।

सिर, गर्दन और पीठ को सीधा रखिये।

प्रकारान्तर

यदि घुटनों और पीठ के चारों तरफ एक कपड़ा बाँध लिया जाये तो इस आसन में अधिक समय तक रहा जा सकता है।

टिप्पणी

नए अभ्यासियों के लिये ध्यान का यह एक आदर्श आसन है, खासतौर से उन लोगों के लिये जो ध्यान के अन्य आसनों में नहीं बैठ सकते।

पूजा [illegible] समय भारतवर्ष में अनेक स्त्रियाँ इसी ढंग से बैठती हैं। अभ्यासी से जब ध्यान का कोई अन्य आसन लगने लगे तब सुखासन को त्याग देना चाहिये।

अर्ध पद्मासन



अर्ध पद्मासन

अर्ध पद्मासन

विधि

पैरों को सामने फैलाकर बैठ जाइये।

दाएँ पैर को मोड़ कर पंजे को बायीं जाँघ के नीचे रखिये। बाएँ पैर को मोड़ कर पंजे को दायीं जाँघ के ऊपर रखिये। पीठ गर्दन व सिर सीधे रखिये।

टिप्पणी

ध्यान का यह आसन उन लोगों के लिए है जो पद्मासन को थोड़ा बहुत कर लेते हैं। लेकिन अंतिम स्थिति तक पहुँचने में कठिनाई होती है। सुखासन की अपेक्षा इस आसन का अभ्यास करना अच्छा है। बारी-बारी से पैर बदल कर करते रहने से अभ्यासी अपने पैरों को पद्मासन तथा ध्यान के अन्य आसनों के लिये धीरे-धीरे तैयार करता है।

सीमाएँ

साइटिका तथा रीढ़ के निचले भाग के विकार-ग्रस्त रोगियों को इस आसन का अभ्यास नहीं करना चाहिये।

लाभ

पद्मासन की तरह लेकिन कुछ निम्न स्तर पर।

बद्धयोनि आसन



बद्धयोनि

बद्धयोनि आसन

विधि

ध्यान के किसी भा आसन में बैठ जाइये।

योनि मुद्रा का अभ्यास कीजिये (मुद्रा वाला अध्याय देखिये)।

एकाग्रता

बिन्दु चक्र पर (इस पुस्तक का परिशिष्ट देखिये)।

लाभ

बाह्य जगत् के आकर्षणों से मुक्त कर मन को अंतर्मुखी बनाने के लिये यह एक श्रेष्ठ आसन है।

नादयोग (आध्यात्मिक ध्वनियों का योग) के आसनों में से यह एक महत्वपूर्ण आसन है जिसके अभ्यास से अभ्यासी सूक्ष्म अन्तर्ध्वनियाँ सुन सकता है।

शारीरिक लाभ ध्यान के अन्य आसनों की तरह ही हैं, यद्यपि आँख, नाक व मस्तिष्क की बीमारियों से छुटकारा दिलाने में यह आसन बड़ा प्रभावशाली है।

वज्रासन तथा वज्रासन में किये जाने वाले आसन

वज्र एक नाड़ी (प्राण-शक्ति के प्रवाह का मार्ग) का नाम है जिसका सीधा सम्बन्ध प्रजनन एवं मूत्र निष्कासन प्रणाली से है। ऐसा कहा जाता है कि इस नाड़ी पर ऐच्छिक नियंत्रण प्राप्त हो जाने पर व्यक्ति बड़ा शक्तिशाली बन जाता है। यह शरीर में काम-शक्ति को नियमित करती है।

इस नाड़ी को देवराज इन्द्र का अस्त्र कहा गया है। इसी प्रकार मन सर्वेन्द्रियों का राजा है। इस नाड़ी के माध्यम से हम मन को इस योग्य बनाते हैं कि काम-शक्ति के रूप में इस नाड़ी में प्रवाहित समस्त शक्तियों को नियंत्रित कर सकें।

इस प्रकार वज्रासन या वज्रासन में किये जाने वाले आसन बड़े प्रभावशाली हैं; सामान्यतः करने में सरल भी।

नए अभ्यासियों के पैरों में थोड़े समय के अभ्यास से दर्द हो सकता है। अतः उन्हें चाहिये कि टखनों को पकड़कर पंजों को एक के बाद एक हिलायें। तब वज्रासन अथवा अन्य आसनों की पुनरावृत्ति करें।

वज्रासन



वज्रासन

वज्रासन

विधि

घुटनों के बल बैठिए। पंजों को पीछे फैला कर एक पैर के अंगूठे को दूसरे अंगूठे पर रख दीजिये।

आपके घुटने पास-पास और एड़ियाँ अलग-अलग रहनी चाहिये।

अपने नितम्बों को पंजों के बीच में रखिये। आपकी एड़ियाँ कूल्हों की तरफ रहेंगी।

हथेलियों को घुटनों पर रखिये।

समय

वज्रासन का जितना सम्भव हो, उतने समय तक अभ्यास कीजिये।

भोजन के पश्चात ख़ास तौर से कम से कम ५ मिनट के लिये इसका अभ्यास पाचन-क्रिया को तीव्र करता है।

एकाग्रता

सहज श्वास-प्रश्वास क्रिया का ध्यान कीजिये। यदि आँखें बन्द करके किया जाये तो यह मन को शान्ति प्रदान करता है।

टिप्पणी

मुसलमानों और जापानी बौद्धों में यह प्रार्थना और ध्यान का आसन है।

लाभ

वज्रासन गर्भाशय, आमाशय आदि में रक्त व स्नायविक प्रवाह को बदल देता है।

यह आसन सम्पूर्ण पाचन-प्रणाली की कार्य-कुशलता को बढ़ा देता है। अतः भोजन के बाद के आसन के रूप में यह बड़ा उपयोगी है, विशेष रूप से उन लोगों को जो अपचन से ग्रस्त हैं। यह प्रजनन अंगों में रक्त के प्रवाह को कम करता है और उनका पोषण करने वाले स्नायु-तंतुओं की मालिश करता है। इस कारण यह उन व्यक्तियों के लिये उपयोगी है जिनके फोते अत्यधिक रक्त-प्रवाह के कारण बढ़ गये हैं। यह आमाशय और गर्भाशय की मांसपेशियों को शक्ति प्रदान करता है, अतः हार्निया से बचाव करता है। यह महिलाओं को शिशु-जन्म में सहायक है। साइटिका और रीढ़ के निचले भाग की गड़बड़ी से ग्रस्त लोगों के लिए यह एक मात्र ध्यान का आसन है।

पेट के रोगो जैसे छाले आदि से छुटकारा दिलाने में अति उपयोगी है।

सिंहासन



सिंहासन

सिंहासन

विधि

घुटनों को दूर-दूर रखकर वज्रासन में बैठ जाइये। यदि सम्भव हो तो सूर्य की ओर मुँह करके बैठिये।

हाथों को घुटनों के बीच में जमा दीजिए। अंगुलियाँ शरीर की तरफ रहें।

सीधी भुजाओं के सहारे थोड़ा आगे की ओर झुकिये।

सिर पीछे की ओर उठाइये, मुँह को खोलिये और जितना सम्भव हो सके, जीभ को बाहर निकालिये।

आँखों को पूरी तरह खोलकर भ्रूमध्य में देखिये।

नाक से श्वास लीजिये। श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए गले से स्पष्ट और स्थिर आवाज निकालिये। इसे जीभ को निकालकर व दाएँ-बाएँ घुमाकर भी करते हैं।

श्वास

गले से की जाने वाली ध्वनि के अनुसार श्वास को धीरे-धीरे लीजिए व छोड़िए।

समय

सामान्य स्वास्थ्य में १० बार करें।

विशेष बीमारी में अधिक समय तक किया जा सकता है।

एकाग्रता

गले से उत्पन्न की जाने वाली ध्वनि पर।

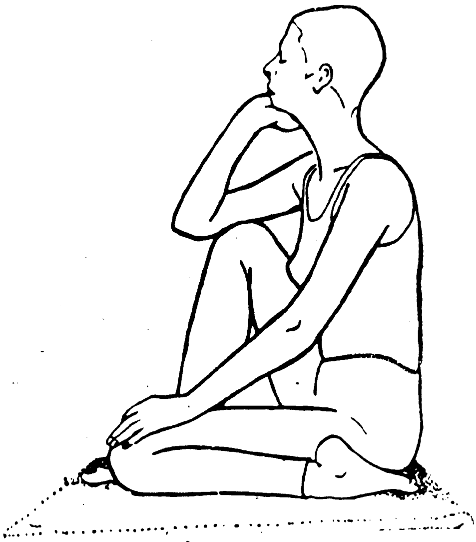
लाभ

गले, नाक, कान और मुँह की बीमारियों को दूर करने के लिये यह एक श्रेष्ठ आसन है।

हकलाकर बोलने वालों के लिए उपयोगी है।

इससे स्वस्थ और मधुर स्वर का विकास होता है।

वीरासन



वीरासन १

वीरासन १ : नये अभ्यासियों के लिये

विधि

वज्रासन में बैठ जाइये।

दाहिने पंजे को बायें घुटने के पास रखिये।

दायाँ हाथ दायें घुटने पर रखें और हथेली पर सिर को विश्राम दें।

आँखें बन्द करके तन-मन को ढीला छोड़ दें।

श्वास

सामान्य।

एकाग्रता

भ्रूमध्य या आज्ञा चक्र पर।

लाभ

एकाग्रचित्त होने अथवा गहन चिन्तन करने के लिये यह बड़ा अच्छा आसन है।



वीरासन २

वीरासन २ : कुछ कठिन रूपान्तर

विधि

वज्रासन में बैठिये। एक पैर के पंजे को दूसरी जाँघ पर रखिये। अपनी हथेलियों को सीने के सामने प्रार्थना की स्थिति में रखिये। आँखें बन्द कर लीजिय। स्वतंत्र पैर के सहारे घुटनों के बल उठिये। हथेलियों को एक साथ रखते हुए सिर के ऊपर ले जाइये। अंगुलियाँ ऊपर की ओर रहें। जितने समय तक सम्भव हो सके, करें। वज्रासन में वापस आ जायें। पैर को बदल कर इसी अभ्यास को करें।

श्वास

घुटनों पर उठते समय श्वास रोक कर रखें। जब आसन में स्थिर हो जायें, सामान्य श्वास-प्रश्वास शुरू कर दें।

समय

जितनी देर प्रत्येक पैर पर स्थिर रह सकें, उतनी देर अभ्यास करें।

लाभ

यह स्नायविक सन्तुलन बनाए रखने का प्रारम्भिक आसन है।

आनन्द मदिरासन



आनन्द मदिरासन

आनन्द मदिरासन

विधि

वज्रासन में बैठ जाइये। हाथों को एड़ियों पर रख दीजिये। हथेलियाँ नीचे की ओर रहें।

धड़ को सीधा रखिये और आँखों को त्रिकुटि में स्थिर कीजिये।

श्वास

धीमी और गहरी।

समय

आध्यात्मिक लाभ के लिए लम्बे समय तक किया जाना चाहिये।

एकाग्रता

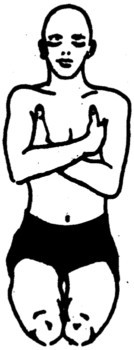
अभ्यास की प्रारम्भिक अवस्थाओं में श्वास-प्रश्वास क्रिया पर।

पर्याप्त शिथिलीकरण की अवस्था प्राप्त हो जाये तो आज्ञा चक्र पर।

लाभ

यद्यपि शारीरिक स्तर पर इसे बड़ी सरलता से किया जा सकता है लेकिन आज्ञा चक्र जगाने में इसके प्रयोग के कारण इसकी पृष्ठ-भूमि गुप्त है(जिसे गुरु-शिष्य परम्परा के अन्तर्गत ही जाना जा सकता है)। अतः मुख्य रूप से यह एक आध्यात्मिक आसन है, यद्यपि इससे स्नायविक प्रणाली को विश्राम और मन को शान्ति भी मिलती है।

पादादिरासन



पादादिरासन

पादादिरासन

विधि

वज्रासन में बैठ जाइये।

हाथों को कैंचीनुमा बनाते हुये बायें हाथ की अंगुलियाँ दायीं बगल में और दाएँ हाथ की अंगुलियाँ बायीं बगल में इस प्रकार दबा लीजिये कि अंगूठे बाहर एवं ऊपर की ओर बने रहें।

आँखें बन्द करके श्वास का ध्यान कीजिये।

श्वास

धीमी एवं लयपूर्ण।

समय

श्वास की क्रिया को प्राणायाम के लिये तैयार करने के लिये इसका अभ्यास १०-१५ मिनट तक करना चाहिये।

आध्यात्मिक लक्ष्य के लिए लम्बे समय तक किया जा सकता है।

एकाग्रता

श्वास-प्रश्वास क्रिया पर।

लाभ

यह बड़ा ही सरल आसन है लेकिन श्वास-प्रश्वास को प्राणायाम के लिए तैयार करने के लिये अत्यन्त उपयोगी है क्योंकि हाथों को मोड़ कर रखने से प्रत्येक नथुने में श्वास का प्रवाह समान हो जाता है।

भद्रासन



भद्रासन

भद्रासन

विधि

वज्रासन में बैठ जाइये।

घुटनों को जितना संभव हो सके, दूर-दूर कर लीजिये।

पैरों की अंगुलियों का सम्पर्क जमीन से बना रहे।

अब पंजों को इतना अलग करियें कि उनके बीच में आपके नितम्ब फर्श पर जम जायें।

बिना किसी तनाव के घुटनों का फासला और बढ़ाइये। हाथों को घुटनों पर रखिये। हथेलियाँ नीचे की ओर रहें।

जब शरीर सुख की स्थिति में हो तब नासिकाग्र दृष्टि (दृष्टि और मन को नाक के अग्र भाग पर एकाग्र करना) कीजिए।

श्वास

धीमी एवं लयपूर्ण।

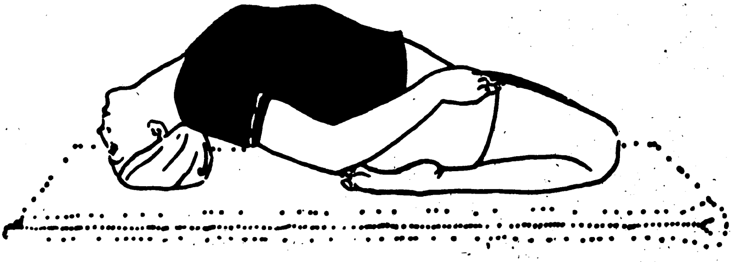
समय

आध्यात्मिक लक्ष्य के लिये अधिक समय तक किया जाये। यदि पैरों को लचीला बनाने के लिये कर रहे हों तो कुछ मिनट काफी हैं। यदि तनाव का अनुभव करें तो इसे तुरंत ही समाप्त कर दें।

लाभ

यह आसन मुख्य रूप से आध्यात्मिक अभ्यासों के लिये है, क्योंकि इसकी स्थिति मात्र से ही मूलाधार चक्र उत्तेजित होने लगता है।

सुप्त वज्रासन



सुप्त वज्रासन

सुप्त वज्रासन

विधि

वज्रासन में बैठ जाइये।

भुजाओं और कुहनियों के सहारे पीछे की तरफ झुकते जाइये जब तक कि सिर जमीन से न लग जाये। कमर पूर्ण रूप से धनुषाकार रहे।

इसका ध्यान रहे कि घुटने जमीन पर सटे हुए रहें।

हाथों को जाँघों पर रख लीजिये।

आँखें बन्द करके पूरे शरीर को ढीला छोड़ दीजिये।

श्वास

सामान्य।

पेट के रोगों को दूर करने के लिये आमाशय को फैलाते व संकुचित करते हुए श्वास धीमी और गहरी होनी चाहिये।

समय

शारीरिक लाभ के लिए कुछ मिनट काफी हैं।

जो इस आसन को आध्यात्मिक लाभ के लिये करना चाहते हैं, उन्हें इसे लम्बे समय तक करना चाहिये।

एकाग्रता

आध्यात्मिक – स्वाधिष्ठान चक्र पर (परिशिष्ट में देखिये)।

शारीरिक – कमर, आमाशय या श्वास पर।

क्रम

आगे झुक कर किये जाने वाले आसनों जैसे पश्चिमोत्तानासन, जानुशिरासन आदि के लिये यह एक अच्छा विपरीत आसन है। अतः इसे आसन-क्रम में इस प्रकार रखा जाये कि इसका अभ्यास आगे झुक कर किये जाने वाले आसनों के बाद में हो।

सावधानी

घुटनों को हठपूर्वक जमीन स्पर्श कराने के लिये जाँघों और घुटनों की मांसपेशियों व संधि-बंधनों में अनावश्यक रूप से तनाव उत्पन्न न किया जाये। अपने शरीर की क्षमता एवं सम्भावनाओं को देखते हुए अन्तिम स्थिति पर धीरे-धीरे पहुँचना चाहिये।

सीमाएँ

रीढ़ के निचले भाग के रोग जैसे हड्डी की टी. बी. से पीड़ित रोगियों को किसी योग शिक्षक अथवा डॉक्टर से पूछे बिना इस आसन का अभ्यास नहीं करना चाहिए।

समान आसन

उष्ट्रासन, मत्स्यासन।

लाभ

आमाशय के रोगों जैसे कब्ज के लिये यह आसन बहुत अच्छा है क्योंकि यह आँतों को शक्ति के साथ फैलाता व संकुचित करता है।

पूरे शरीर को मस्तिष्क से जोड़ने वाले रीढ़ के मुख्य स्नायुओं में दबाव सामान्य रखने के लिये यह आसन बड़ा लाभकारी है।



(सुप्त वज्रासन (प्रकारान्तर)

सुप्त वज्रासन (प्रकारान्तर)

विधि

पूर्व वर्णित विधि के अनुसार ही आसन लगाइये, सिवाय इसके कि इस बार सिर के ऊपरी भाग के स्थान पर पिछला भाग भूमि का स्पर्श करे। रेखा चित्र में प्रदर्शित ढंग से सिर के पिछले भाग को नीचे झुकाइये। दोनों हाथों को सिर के पीछे बाँध लीजिए। घुटनों को जमीन पर ही टिकाये रखने का प्रयत्न कीजिये।

आँखें बन्द करके पूरे शरीर को पूरी तरह ढीला छोड़ दीजिये। अन्य सभी विवरण मौलिक सुप्त वज्रासन की तरह ही हैं।

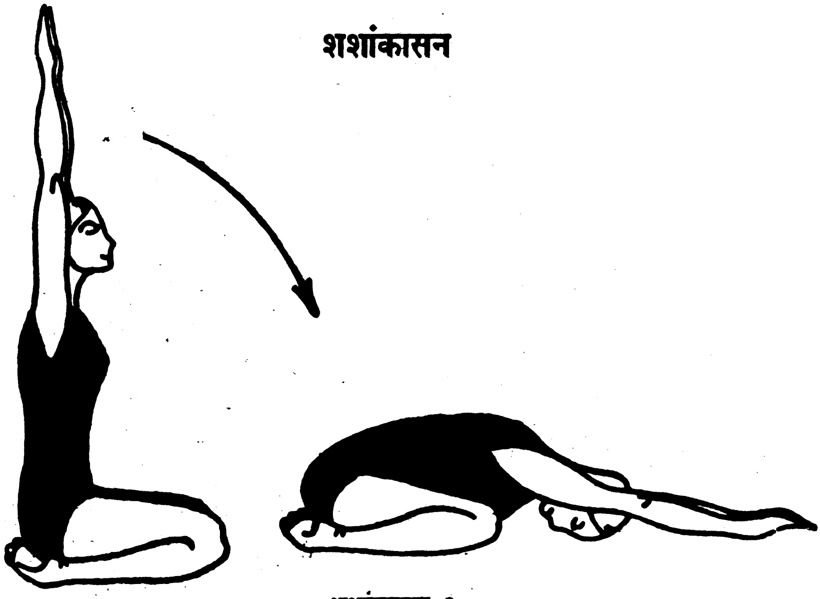
लाभ

यह एक महत्वपूर्ण आसन है जो आमाशय के फैलाव को अधिक बढ़ा देता है, यद्यपि इसमें गर्दन का अभ्यास नहीं होता।

टिप्पणी

सुप्त वज्रासन के दोनों प्रकारों को आधा-आधा समय देकर एक-दूसरे के बाद करना चाहिये।

शशांकासन



शशांकासन १

शशांकासन १

विधि

हाथों को घुटनों पर रखते हुये वज्रासन में बैठ जाइये।

श्वास लेते हुये हाथों को सिर के ऊपर उठाइये।

हाथों को धड़ की सीध में रखते हुए व श्वास छोड़ते हुये धड़ को सामने की ओर मस्तक जमीन से छूने तक झुकाइये।

कुछ क्षणों के लिये श्वास बाहर ही रोक रखिये और फिर श्वास लेते हुये हाथों और धड़ को एक सीध से सिर के ऊपर की ओर ले आइये। तब श्वास छोड़ते हुये धीरे-धीरे प्रारम्भिक स्थिति में आ जाइये।

श्वास

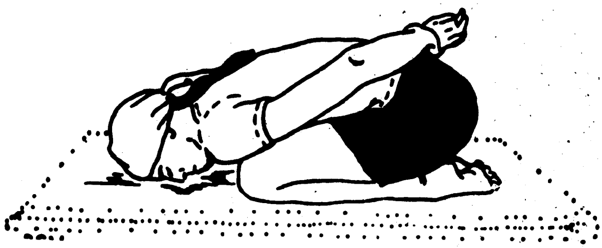
धीमी और शरीर की गति के अनुसार।

समय

१० बार तक अभ्यास करें।

टिप्पणी

अधिक लाभ के लिए सामान्य अथवा गहरी श्वास का अभ्यास करें।



शशांकासन २

शशांकासन २ (वज्रासन में योग मुद्रा)

विधि

वज्रासन में बैठ जाइये।

कमर के पीछे बाएँ हाथ से दायीं कलाई पकड़ लीजिये।

आँखें बन्द कर लीजिये।

श्वास लीजिये और फिर श्वास छोड़ते हुये कमर से सामने की ओर तब तक झुकते जाइये जब तक कि मस्तक फर्श से स्पर्श न करने लगे।

सहज श्वास-प्रश्वास के साथ इस स्थिति में लम्बे समय तक रुकिये।
श्वास लेते हुये प्रारम्भिक स्थिति में लौट आइये।

शशांकासन ३

विधि

वज्रासन में बैठ कर मुट्ठियों को अमाशय के निचले भाग पर रखिये।

श्वास लीजिये और फिर श्वास छोड़ते हुये सामने की ओर झुकिये।

जितनी देर हो सके, श्वास बाहर रोकिये।

श्वास लेते हुये प्रारम्भिक स्थिति में वापस आ जाइये।

एकाग्रता

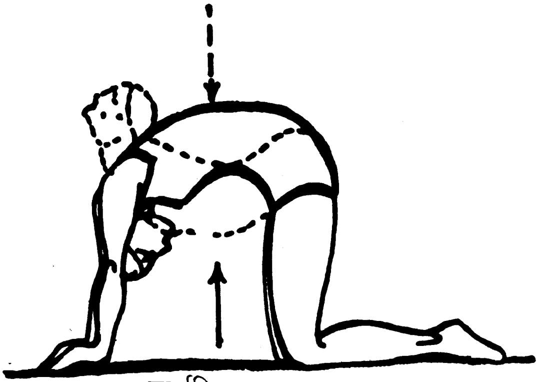
मूलाधार या मणिपुर चक्र अथवा श्वास-प्रश्वास क्रिया पर।

लाभ

यह कूल्हों और गुदा- स्थान के मध्य स्थित मांसपेशियों को सामान्य रखता है। साइटिका के स्नायुओं को शिथिल करता है और एड्रिनल ग्रन्थि के कार्य को नियमित करता है। यह कब्ज से छुटकारा दिलाने में सहायक है। सामान्य रूप से काम-विकारों को दूर करता है। जिन महिलाओं के बस्ति-प्रदेश अविकसित हों, उनके लिए लाभप्रद है।

आध्यात्मिक रूप से मूलाधार चक्र के जागरण में सहायक है।

मार्जारि आसन



मार्जारि आसन

मार्जारि आसन

विधि

वज्रासन में बैठ जाइये।

घुटनों के बल खड़े हो जाइये और हाथों को सामने फर्श पर इस प्रकार जमा दीजिये कि वे ठीक कन्धों के नीचे सीधे रहें।

रीढ़ की हड्डी को नीचे की तरफ झुकाते हुए सिर को ऊपर उठाइये।

सिर को नीचे लाते हुए रीढ़ को धनुषाकार रूप में ऊपर ले जाइये।

रीढ़ को फिर नीचे और सिर को ऊपर ले जाइये।

भुजाओं को लम्ब रूप में सीधा रखिये।

श्वास

रीढ़ नीचे झुकाते समय श्वास लीजिये।

रीढ़ ऊपर की तरफ धनुषाकार बनाते समय श्वास छोड़िये।

समय

सम्पूर्ण क्रिया १० बार कीजिये।

लाभ

यह आसन गर्दन, कन्धों और रीढ़ को लचीला बनाता है।

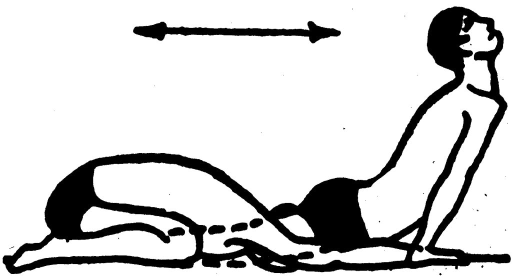
महिलाओं की प्रजनन-प्रणाली के लिये यह एक श्रेष्ठ अभ्यास है।

मासिक धर्म संबंधी अनियमितताओं व ल्यूकोरिया में उपयोगी है।

टिप्पणी

अधिक लाभ के लिये श्वास छोड़ते समय पेट को सिकोड़िये।

शशांक भुजंगासन



शशांक भुजंगासन

शशांक भुजंगासन

विधि

मार्जारि आसन में आइये। हाथों को लगभग १८ इंच दूर-दूर रखिये।

हाथों को बिना हटाए हुए, सीने से फर्श का स्पर्श करते हुए उसे आगे की तरफ तब तक लेते जाइये जब तक कि वह हाथों की सीध में न आ जाये। हाथों को सीधे करते हुए तथा आमाशय को जमीन से लगाते हुए सीने को और आगे व ऊपर की ओर कीजिये।

इस स्थिति में पीठ धनुषाकार बनाते हुए सिर को पीछे की ओर झुकाना चाहिये। धीरे-धीरे पीठ को ऊपर की ओर धनुषाकार बनाते हुए सिर तथा पूरे शरीर को पीछे की ओर ले जाते हुए शशांकासन की स्थिति में आ जाइये। कुछ क्षणों तक इस स्थिति में रहकर जाँघों व भुजाओं को सीधा करते हुए मार्जारि आसन में वापस आ जाइये।

श्वास

मार्जारि आसन में सामान्य।

भुजंगासन में सामने जाते हुए श्वास लीजिये।

शशांकासन में लौटते समय श्वास छोड़िये।

समय

इस आसन को १० बार करें।

लाभ

आमाशय, पेट, लीवर, साइटिका एवं स्लिप डिस्क में तथा महिलाओं की प्रजनन-प्रणाली के लिए लाभप्रद है।

प्रणामासन


प्रथम अवस्था


द्वितीय अवस्था

प्रणामासन

विधि

वज्रासन में बैठ जाइये। रीढ़ सीधी रहे और हाथ घुटनों पर। अपने हाथों से नीचे की तरफ से पिण्डलियों के नीचे के भाग को पकड़िये। सामने की ओर झुकिये और अपने सिर के ऊपरी भाग को जमीन पर रखिये नितम्बों को उठाते हुए जाँघों को लम्ब रूप में सीधा कर लीजिये वज्रासन में वापस आइये।

श्वास

वज्रासन की स्थिति में और उठते समय श्वास लीजिये।

झुकते समय श्वास छोड़िये।

प्रणाम की स्थिति में सहज श्वास-प्रश्वास चलने दीजिये।

समय

अधिक से अधिक १० बार अभ्यास कीजिये।

क्रम

किसी भी आसन-क्रम के प्रारम्भ में इस आसन का अभ्यास न करें।

सावधानी

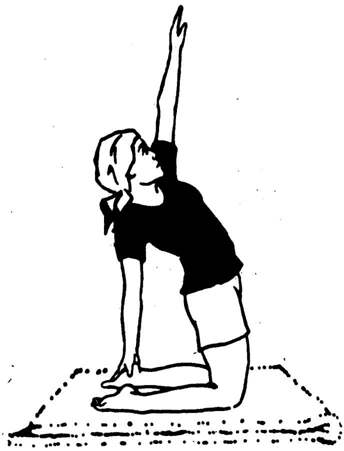
सिर में चक्कर आने पर अथवा रक्तचाप में यह आसन नहीं करना चाहिये।

लाभ

यह आसन सिर में खून की अच्छी आपूर्ति करता है।

यह शीर्षासन के अनेक लाभों को कुछ कम मात्रा में देता है।

उष्ट्रासन



उष्ट्रासन १

उष्ट्रासन १

विधि

वज्रासन में बैठ जाइये। घुटनों के बीच में फासला रहे। एड़ियाँ नितम्बों के दोनों ओर रहें। पंजों का ऊपरी भाग जमीन पर रहे। अपने घुटनों के बल खड़े हो जाइये। धड़ को दायीं तरफ मोड़ते हुए पीछे को झुकिये और दायें हाथ से बाएँ पैर की एड़ी को पकड़िये।

अपनी बायीं भुजा पर ध्यान दीजिये जिसे लम्ब रूप में सिर के ऊपर रहना चाहिये तथा हथेली आगे की ओर; जब तक कि बायीं एड़ी पर दूसरी हथेली स्थिर न हो जाये।

शरीर के ऊपरी भाग के भार को अपनी बायीं एड़ी पर पड़ने दीजिये।

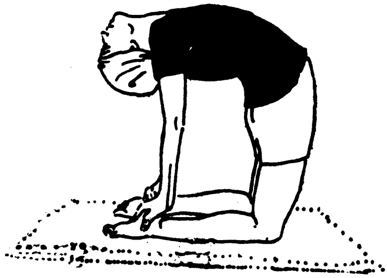
विपरीत दिशा में इसी प्रकार दुहराइये।

श्वास

घुटनों के बल उठते हुए श्वास लीजिये।

बगल की ओर मुड़ते हुए श्वास छोड़िये।

धड़ को मध्य स्थिति में लाते समय श्वास लीजिये।



उष्ट्रासन २

उष्ट्रासन २

विधि

उष्ट्रासन १ की स्थिति में आ जाइये।

घुटनों के बल खड़े हो पीछे झुक कर हाथों को एड़ियों पर रखिये।

गर्दन तथा शरीर को जितना सम्भव हो, पीछे की ओर झुकाइये।

घुटनों के बल सीधी स्थिति में लौट आइये।

श्वास

घुटनों के बल खड़े होते समय श्वास लीजिये।

पीछे को झुकते समय तथा वज्रासन में बैठते हुए श्वास छोड़िये

समय

गतिशील अभ्यास के रूप में अधिक से अधिक १० बार कीजिये।

स्थिर आसन के रूप में ३ मिनट तक कीजिये।

एकाग्रता

आध्यात्मिक – विशुद्धि अथवा अनाहत चक्र पर।

शारीरिक – आमाशय, चुल्लिका ग्रंथि (थायरॉयड) या रीढ़ पर।

क्रम

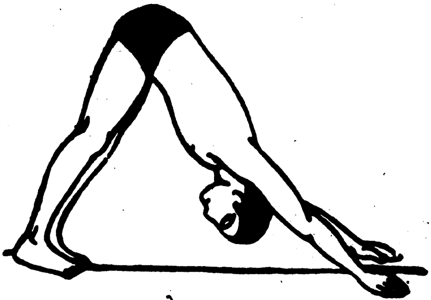
आगे की ओर झुक कर किए जाने वाले आसनों के बाद।

लाभ

पाचन, मल-निष्कासन और प्रजनन-प्रणालियों के लिए लाभप्रद है।

यह पीठ के दर्द व अर्ध-वृत्ताकार झुकी हुई पीठ को ठीक करता है

सुमेरु आसन



सुमेरु आसन

सुमेरु आसन

विधि

वज्रासन में बैठ जाइये।

मार्जारि आसन में आइये। पैरों की अंगुलियों को मोड़िये। नितम्बों को उठाइये और घुटनों को सीधा कीजिये। आपकी पीठ और भुजायें एक सीध में और सिर केहुनियों के बीच में रहे।

शरीर एक त्रिकोण के आकार में रहना चाहिये।

एड़ियों को जमीन पर लाइये।

एड़ियों को उठाइये और मार्जारि आसन में लौट आइये।

श्वास

उठते समय श्वास लीजिये और लौटते समय श्वास छोड़िये। पूर्ण स्थिति में सामान्य श्वास-प्रश्वास का अभ्यास करते रहें।

समय

१० बार तक अभ्यास करें। एड़ियाँ यदि फर्श तक न आएँ तो आसन के दौरान बार-बार उन्हें ऊपर-नीचे लाने का अभ्यास करें।

अन्तिम स्थिति में ३० सेकेण्ड तक रुकें।

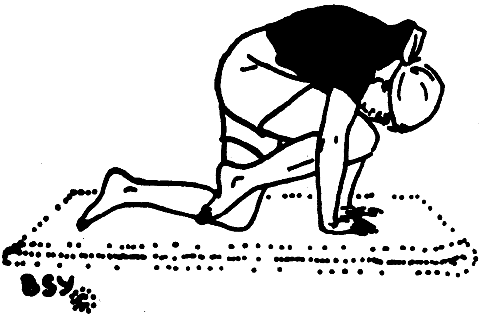
सीमाएँ

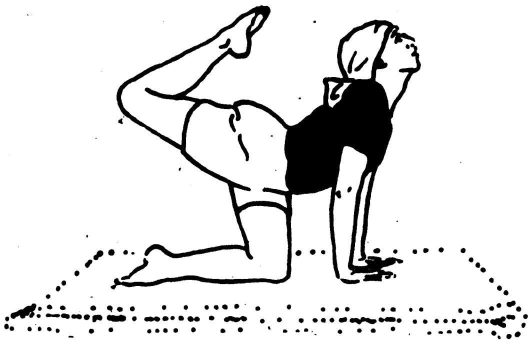
सिर में चक्कर आने अथवा उच्च रक्तचाप में इसका अभ्यास न करें।

लाभ

एड़ियों तथा पिण्डलियों की नसों, तंतुओं एवं मांसपेशियों को फैलाता है। साइटिका नस को भी सामान्य करता है।

व्याघ्रासन





व्याघ्रासन

व्याघ्रासन

विधि

वज्रासन में बैठ जाइये । मार्जारि आसन में आइये और सामने की तरफ देखिये । अपने दायें पैर को जमीन के समानान्तर पीछे की ओर फैलाइये । दाहिने घुटने को मोड़िये और पैर की अंगुलियों को सिर की तरफ कीजिये । ऊपर देखिये ।

उठे हुए पैर को नितम्ब से नीचे की ओर झुकाइये और घुटने को सीने पर दबाइये । ऐसा करते समय पैर की अंगुलियाँ जमीन से न लगने पायें । सिर को झुकाइये और नाक से घुटने को छूने का प्रयास कीजिए । आपकी रीढ़ ऊपर की ओर उभर जायेगी ।

पंजे को फिर से पीछे ले जाइये और पैर को फैला दीजिये ।

घुटने को मोड़िये और इसी प्रकार अभ्यास चालू रखिये ।

श्वास

पैर को पीछे फैलाते समय श्वास लीजिये।

घुटने को मोड़ते समय श्वास अन्दर रोकिये।

घुटने को सीने की तरफ लाते समय श्वास छोड़िये।

समय

प्रत्येक पैर से इस आसन को ५-५ बार कीजिये।

एकाग्रता

शरीर को शिथिल छोड़ने एवं उसकी गति पर एकाग्रता रखिये।

लाभ

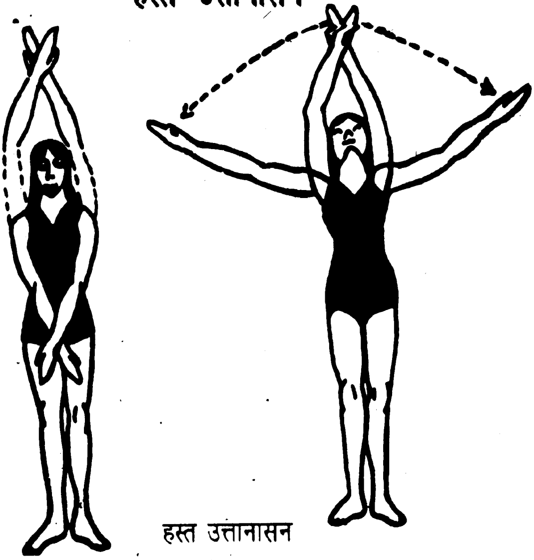
यह आसन रीढ़ के व्यायाम के लिये साइटिका नस को शिथिल करने एवं महिलाओं के प्रजनन अंगों को सामान्य बनाने में उपयोगी है।

यह आसन साइटिका के रोगियों, शिशु-जन्म के ठीक बाद तथा जो महिलाएँ अनेक बच्चों को जन्म दे चुकी हैं, उनके लिए विशेष रूप से लाभकारी है।

कूल्हों व जाँघों की बढ़ी हुई चर्बी को कम करने में भी यह उपयोगी है।

खड़े होकर और झुक कर किये जाने वाले आसन

हस्त उत्तानासन



हस्त उत्तानासन

हस्त उत्तानासन

विधि

पंजों को मिलाकर सीधे खड़े हो जाइये। अब हाथों को पेट के सामने कैंचीनुमा आकार में रखिये। हाथों को इसी स्थिति में ही ऊपर ले जाते हुए गर्दन को पीछे झुकाइये। भुजाओं को कंधों की सीध में दोनों ओर फैला दीजिए। कलाइयों को पुनः कैंचीनुमा बनाकर पहली स्थिति में ले आइये।

श्वास

हाथों को उठाते समय श्वास लीजिये तथा नीचे लाते हुए छोड़िये। हाथों की उठी हुई स्थिति में श्वास को अन्दर ही रोकिये।

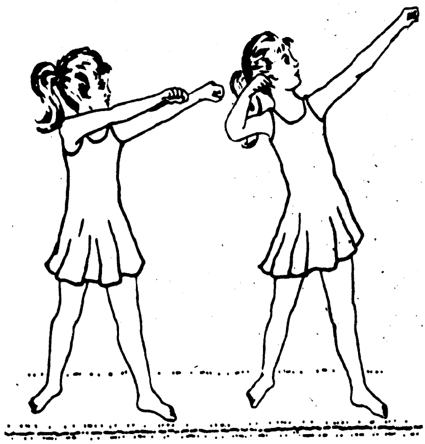
समय

इसे १० बार दुहराइये।

लाभ

यह कंधों के जोड़ों तथा गोल कन्धों को सुधार कर ठीक करता है। मेरुदण्ड को फैलाकर संबंधित स्नायु-दबाव को सामान्य करता है। मस्तिष्क-जागृति के केन्द्रों को उत्तेजित करने में यह उपयोगी है।

आकर्ण धनुरासन



प्रथम अवस्था   द्वितीय अवस्था

आकर्ण धनुरासन

विधि

पैरों में कंधों की चौड़ाई के बराबर फासला छोड़ कर खड़े हो जाइये।

दायें पैर से एक छोटा कदम आगे की ओर रखिये।

अपनी दायीं मुट्ठी को कसिये और ऊपर बगल में ले आइये। बायीं मुट्ठी कसिये और दायीं मुट्ठी से थोड़ी पीछे रखिये।

बायीं मुट्ठी को सीधा पीछे की ओर बायें कान तक खींचिये मानो आप कोई धनुष खींच रहे हों। इसके साथ सिर भी थोड़ा पीछे करें। काल्पनिक धनुष की डोरी को ढीली छोड़ते हुए, गर्दन सीधी करते हुए अपनी बायीं मुट्ठी को सामने की ओर दायीं मुट्ठी के पास ले आइये।

इसी अभ्यास को शरीर के दूसरी ओर से दुहराइये।

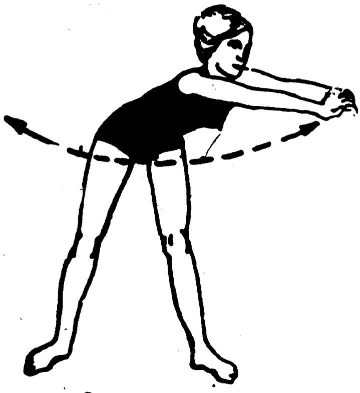
श्वास

हाथ खींचते समय श्वास लीजिये तथा ढीले छोड़ते समय छोड़िये।

लाभ

यह भुजाओं, सीने व गर्दन की मांसपेशियों का विकास करता है।

कटि चक्रासन



कटि चक्रासन १

कटि चक्रासन १

विधि

पैरों के बीच २-३ फुट का फासला छोड़कर खड़े हो जाइए।

नाभि के सामने अपनी अंगुलियों को आपस में फँसा कर रखिये।

भुजाओं को सिर के ऊपर उठाइये और कलाइयों को घुमाकर हथेलियों को ऊपर की ओर पलट दीजिये।

कमर से आगे की ओर झुकते हुए समकोण बनाइये।

पीठ को सीधी रखते हुए हाथों पर दृष्टि रखिये।

धीरे-धीरे धड़ को दायीं तरफ घुमाइये।

तत्पश्चात् बिल्कुल बायीं ओर घूम जाइये और फिर पूर्ण दायीं ओर की स्थिति में लौट आइये। इसे ४ बार दुहराइये।

श्वास

भुजाओं को उठाते समय, दायें घूमते समय तथा सिर के ऊपर हाथ वाली स्थिति में लौटते समय श्वास लीजिये।

शरीर को झुकाते समय, बायीं ओर घूमते हुए तथा भुजाओं को नीचे करते समय श्वास छोड़िये।

समय

इस अभ्यास को ५ बार कीजिये।



कटि चक्रासन २

कटि चक्रासन २

विधि

पैरों के मध्य २-३ फुट का फासला छोड़कर खड़े हो जाइये।
कन्धों की ऊँचाई पर भुजाओं को बगल में फैला दीजिये।

शरीर के ऊपरी भाग को दायीं ओर मोड़िये। बायाँ हाथ दायें कंधे पर एवं दायाँ हाथ पीछे की तरफ घूमता हुआ कमर से लिपट जाये। अभ्यास को दूसरी ओर से दुहराइये।

श्वास

सामान्य।

समय

इस अभ्यास को १० बार दुहराइये।

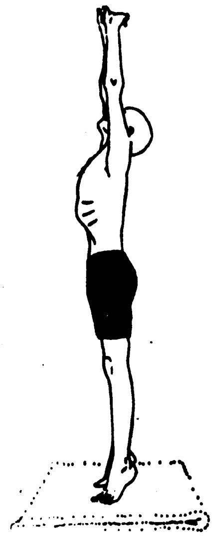
लाभ

यह कमर, पीठ, कूल्हों, मेरुदंड तथा शरीर के अन्य जोड़ों को सुधारता है।

टिप्पणी

यह हठयोग की क्रिया शंख प्रक्षालन (इसी पुस्तक में आगे इसका पूर्ण विवरण मिलेगा) के आसनों के समूह का एक आसन है।

ताड़ासन



ताड़ासन

ताड़ासन

विधि

अपने पैरों के बीच ४-६ इंच का फासला छोड़कर खड़े हो जाइये।

आँखों के सामने पड़ने वाली किसी वस्तु पर अपनी दृष्टि जमा लीजिये भुजाओं को सिर के ऊपर उठाइये। हथेलियाँ ऊपर की ओर रहें। अपने हाथों की ओर देखिये।

एड़ियों को उठाइये और अनुभव कीजिये जैसे आपको ऊपर की ओर खींचा जा रहा हो। शरीर को पूरी तरह खींचिये।

धीरे-धीरे एड़ियों को जमीन पर वापस ले आइये।

प्रकारान्तर १

दोनों भुजाओं को ऊपर करते हुए ताड़ासन में खड़े हो जाइये। पैरों की अंगुलियों पर शरीर के भार को संतुलित करते हुए एक पैर को उठाकर आगे या पीछे की ओर कीजिए।

दूसरे पैर से दुहराइये।

टिप्पणी

इस आसन का प्रयोग शंख प्रक्षालन के अभ्यास में किया जाता है।

प्रकारान्तर २

कलाइयों को सिर के ऊपर कैंचीनुमा बनाकर खड़े हो जाइये। अपने शरीर को कमर से जमीन के समानान्तर आगे की ओर झुकाइये।

एक ही बार में अपने धड़ को उठाइये तथा पैरों की अंगुलियों पर खड़े हो जाइये और अपनी रीढ़ को ऊपर की ओर खींचिये। अपनी भुजाओं को कन्धों की सीध में दोनों ओर फैला दीजिए।

पुनः अपने सिर के ऊपर कलाइयों की कैंची बनाइये। एड़ियों को नीचे लाइये और शरीर को सामने झुकाइये।

सीधी स्थिति में वापस लौट आइये।

श्वास

ऊपर उठते समय श्वास अन्दर व नीचे की ओर आते समय बाहर।

समय

१० बार कीजिए।

क्रम

यह शीर्षासन की तरह उल्टे होकर लगाए जाने वाले आसनों का विपरीत आसन है।

लाभ

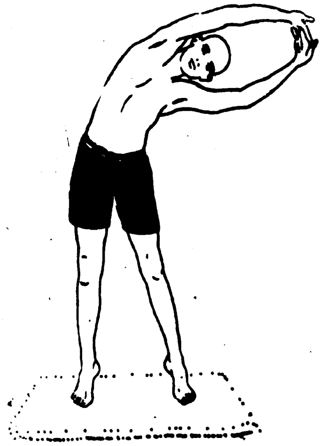
ताड़ासन मलाशय व आमाशय की मांसपेशियों को विकसित करता है और आँतों को फैलाता है।

यह मेरुदण्ड के सही विकास में सहायता करता है और जिन बिन्दुओं से स्नायु निकलते हैं, उनके अवरोधों को दूर करता है।

६ गिलास पानी पीकर ताड़ासन में १०० कदम चलने से यदा-कदा उत्पन्न हो जाने वाली आँतों की रुकावट दूर की जा सकती है।

गर्भ के प्रारम्भिक ६ महीनों की स्थिति में लाभप्रद है।

तिर्यक् ताड़ासन



तिर्यक् ताड़ासन

तिर्यक् ताड़ासन

विधि

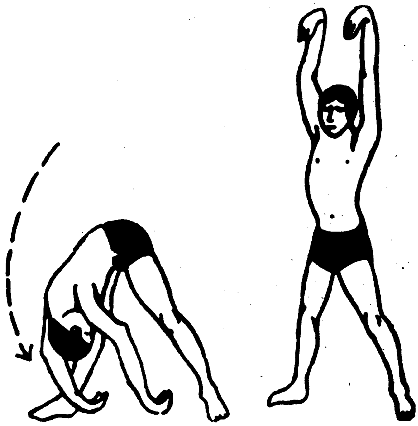
ताड़ासन (पहला प्रकार) में खड़े हो जाइये।

पैरों की अंगुलियों पर उठकर शरीर को पहले दायीं तथा फिर बायीं ओर झुकाइये। झुकने की गति कमर से होनी चाहिए। प्रत्येक ओर १०-१० बार झुकिये और फ़िर एड़ी व तलवों पर खड़े हो जाइये।

टिप्पणी

पैरों की अंगुलियों पर संतुलन बनाये रखना कुछ लोगों को कठिन लगेगा। उन्हें चाहिए कि जब तक संतुलन का अभ्यास ठीक न हो जाये पंजों के बल खड़े होकर ही इस आसन का अभ्यास करें। फिर भी जब कभी भी वे इस आसन को लगायें, प्रारम्भ में पैर की अंगुलियों पर शरीर के भार को संतुलित करने का अभ्यास कुछ सेकेण्ड अवश्य कर लिया करें ताकि धीरे-धीरे संतुलन का अभ्यास पक्का होता जाये। शंख प्रक्षालन में किये जाने वाले आसनों में यह दूसरा आसन है। अन्य विवरण ताड़ासन के पहले प्रकार जैसा ही है।

उत्थित लोलासन



उत्थित लोलासन

उत्थित लोलासन

विधि

अपने पंजों के बीच २-३ फुट का फासला लेकर खड़े हो जाइये। भुजाओं को सिर के ऊपर उठाइये। कलाइयाँ थोड़ी झुकी रहें। धड़ को कमर से आगे व नीचे की ओर झुला दीजिये। पैरों के बीच के स्थान में अपनी भुजाओं व सिर को अन्दर-बाहर झूलने दीजिये। झुकी हुई स्थिति में ५ बार झूलने के बाद सीधी स्थिति में आ जाइये।

श्वास

हाथों को उठाते समय श्वास लीजिये, नीचे झूलते समय छोड़िये।

समय

अधिक से अधिक १० बार अभ्यास कीजिये।

सावधानी

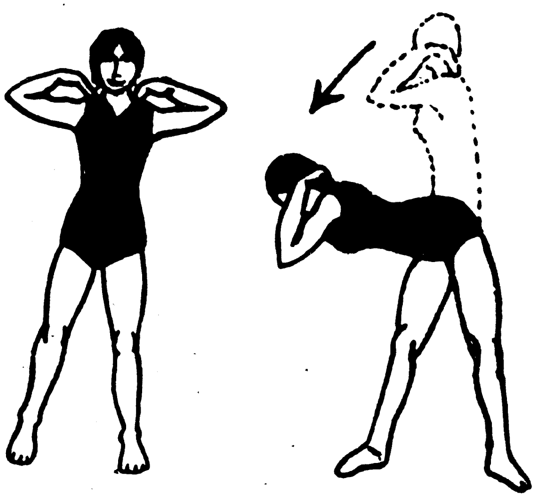
सिर में चक्कर आने से पीड़ित व उच्च रक्तचाप के रोगी इसे न करें।

लाभ

यह रक्त-संचालन को सक्रिय करके थकान दूर भगाता है।

यह घुटनों, कूल्हों और पीठ की मांसपेशियों को फैलाता है।

मेरुपृष्ठासन



मेरुपृष्ठासन

मेरुपृष्ठासन

विधि

पैरों के बीच २-३ फुट का फासला छोड़कर खड़े हो जाइये। अंगुलियों के अग्र भाग कन्धों पर रखें। धड़ को तेजी से दाहिनी ओर घुमाइये। फिर मध्य में आ जाइये। दूसरी बार दाहिनी ओर झुकिये। उस स्थिति से घूमकर मध्य में आइये। सीधे खड़े हो जाइये। शरीर के दोनों ओर १०-१० बार करें।

श्वास

मध्य में आते समय श्वास लीजिये।

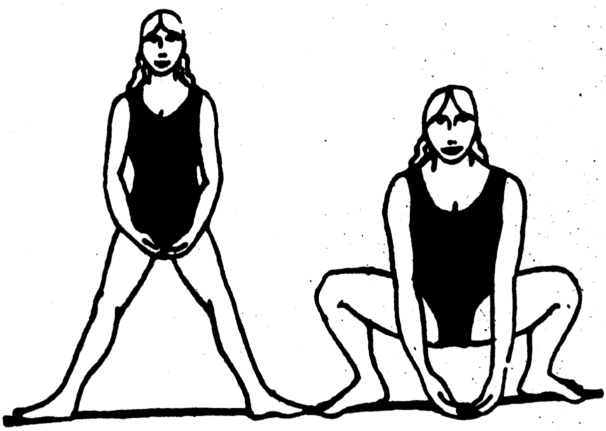
बगल में झुकते समय श्वास छोड़िये।

लाभ

यह अभ्यास रीढ़ को फैलाता है तथा कमर के चारों ओर एकत्रित अतिरिक्त चर्बी को शरीर के अन्य भागों में हटा देता है।

पीठ की मांसपेशियों को सामान्य स्थिति में लाता है।

उत्तान आसन



प्रारम्भिक अवस्था   अन्तिम अवस्था

उत्तान आसन

विधि

पैरों के मध्य २-३ फुट का फ़ासला लेकर खड़े हो जाइये।

अंगुलियों को आपस में फँसाकर भुजाओं को ढीला छोड़ दीजिये।

धीरे-धीरे घुटनों को मोड़ते हुए धड़ को लगभग ८ इंच नीचे ले जाइये।

सीधी स्थिति में आ जाइये।

इसी प्रकार तीन बार कीजिये और हर बार कुछ अधिक नीचे जाइये।

चौथी और अंतिम स्थिति में हाथ फर्श से थोड़े ऊपर रहें।

श्वास

ऊपर आते समय श्वास लीजिये व नीचे जाते समय श्वास छोड़िये।

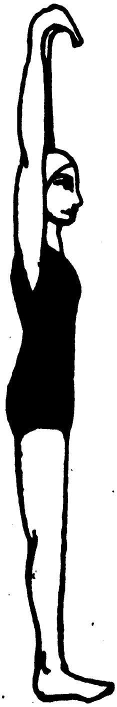
समय

अधिक से अधिक १० बार अभ्यास कीजिये।

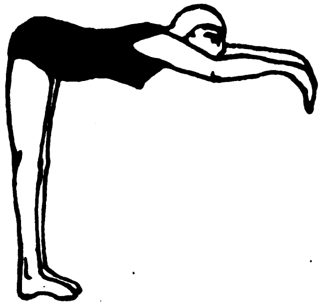
लाभ

जाँघों, घुटनों, टखनों व गर्भाशय की मांसपेशियों को शक्ति प्रदान करता है। गर्भवती महिलाओं के लिए बहुत लाभप्रद है।

समकोणासन



प्रथम-अवस्था



द्वितीय अवस्था

समकोणासन

विधि

हाथों को बगल में रखकर तथा पैरों के पंजों को मिलाकर खड़े हो जाइये। अंगुलियाँ सामने की ओर रखते हुए हाथों को सिर के ऊपर उठाइये। कमर से झुककर समकोण की स्थिति में सामने देखते हुए कुछ समय रुकिये, फिर वापस आइये। इसको १० बार कीजिये।

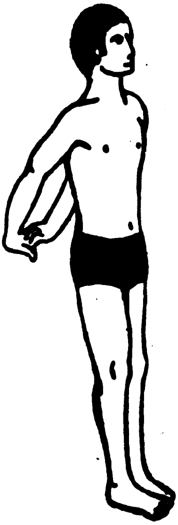
श्वास

भुजाओं और धड़ को उठाते हुए श्वास लीजिये व झुकते समय छोड़िए। समकोण की स्थिति में सामान्य श्वास-प्रश्वास का अभ्यास कीजिये।

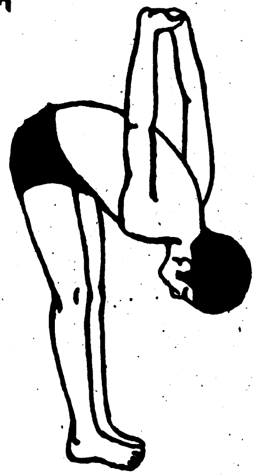
लाभ

यह आसन रीढ़ के टेढ़ेपन और तनावों को दूर करता है।

द्विकोणासन



प्रथम अवस्था



द्वितीय अवस्था

द्विकोणासन

विधि

पैरों के पंजों को मिला कर फर्श पर खड़े हो जाइये।

हाथों को पीठ के पीछे ले जाइये।

अंगुलियों को आपस में फँसा कर जितना सम्भव हो सके, भुजाओं को ऊपर उठाइये तथा आगे झुकिये।

अंतिम स्थिति में कुछ क्षण रुकिये और फिर सीधे खड़े हो जाइये।

श्वास

सीधे खड़े होने की स्थिति में श्वास लीजिये।

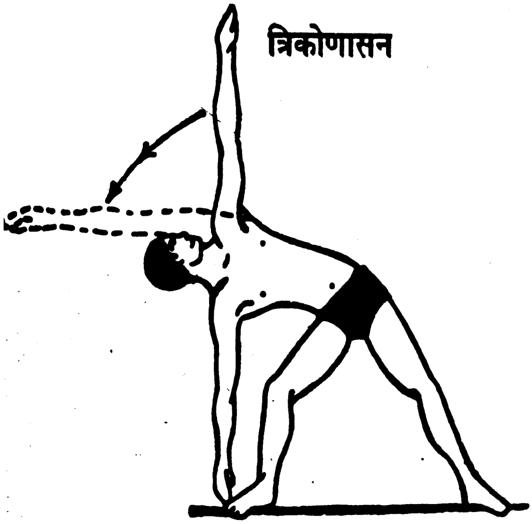
शरीर को झुकाते समय श्वास छोड़िये।

समय

इस आसन का अभ्यास अधिक से अधिक १० बार कीजिये।

लाभ

यह ऊपरी रीढ़ और कन्धों की हड्डियों के बीच की मांसपेशियों को शक्ति प्रदान करता है तथा सीने और गर्दन के विकास में सहायक है। बढ़ते हुए युवा-शरीरों के लिए यह विशेष रूप से लाभप्रद है।



त्रिकोणासन

त्रिकोणासन १

विधि

पैरों के बीच २-३ फुट का फासला छोड़ कर सीधे खड़े हो जाइये।

कन्धों की ऊँचाई तक दोनों भुजाओं को एक सीध में फैलाइये।

घुटनों को थोड़ा झुकाते हुए शरीर को दाहिनी ओर झुकाइये।

दोनों भुजाओं को एक सीध में रखते हुए खड़े हो जाइये।

इसे शरीर के दूसरी ओर से दुहराइये।

श्वास

भुजाओं को उठाते समय तथा सीधे खड़े होते समय श्वास लीजिये।

बगल में नीचे झुकते हुए श्वास छोड़िये।

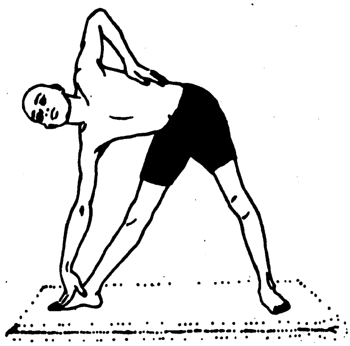
त्रिकोणासन २

विधि

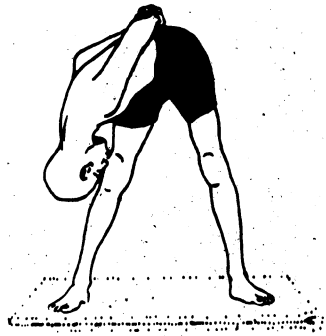
पहली अवस्था को दुहराइये, लेकिन अन्तिम स्थिति में ऊपर उठे हुए हाथ को कान के ऊपर से नीचे करते हुए फर्श के समानान्तर लाइये।

श्वास

पहली अवस्था के समान ही।



त्रिकोणासन (३)



त्रिकोणासन (४)

त्रिकोणासन ३

विधि

पहली स्थिति में आ जाइये। शरीर को धीरे-धीरे दाहिनी ओर झुकाइये। झुकाने के साथ ही साथ दाहिना हाथ नीचे पंजे की ओर तथा बायाँ हाथ बगल की ओर आयेगा।

पूरे अभ्यास के दौरान घुटने सीधे रहें।

इस क्रिया को दूसरी ओर से दुहराइये।

श्वास

पहली अवस्था के समान ही।

त्रिकोणासन ४

विधि

पैरों के बीच फासला लेकर खड़े हो जाइये।

पीठ के पीछे दाएँ हाथ से बाएँ हाथ की कलाई पकड़िये। शरीर को कमर से झुकाते हुए नाक से दाएँ घुटने को छूने का प्रयास कीजिये।

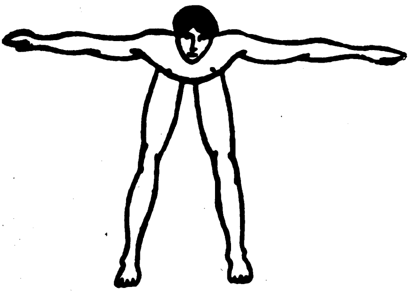
सीधी स्थिति में वापस आ जाइये। शरीर के दूसरे भाग से दुहराइये।

श्वास

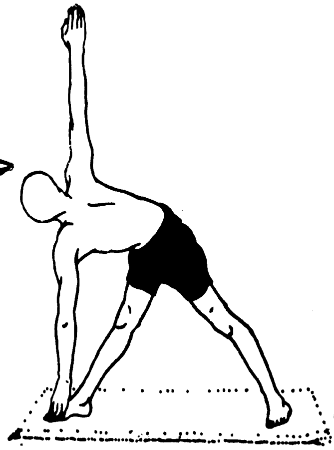
झुकते समय श्वास छोड़िये।

अंतिम स्थिति में कुछ क्षण श्वास बाहर ही रोकिये।

सीधी स्थिति में आते समय पुनः श्वास लीजिये।



त्रिकोणासन ५ (अ)



त्रिकोणासन ५ (ब)

त्रिकोणासन ५

विधि

खड़े होकर भुजाओं को बगल में जमीन के समानान्तर फैला दीजिये।

शरीर को कमर से इतना झुकाइये कि समकोण बन जाये। (अ)

धड़ को घुमाइये और बाएँ हाथ से दाएँ पैर का स्पर्श कीजिये। (ब)

दृष्टि दायें हाथ की अंगुलियों पर रहे।

इसी क्रिया को दूसरी ओर दुहराइये।

पहली स्थिति में वापस आ जाइये।

प्रत्येक अवस्था का ५-५ बार अभ्यास कीजिये।

श्वास

भुजाओं और धड़ को उठाते समय श्वास लीजिये।

धड़ को घुमाते समय श्वास बाहर ही रोकिये। भुजाओं और धड़ को झुकाते समय श्वास छोड़िये।

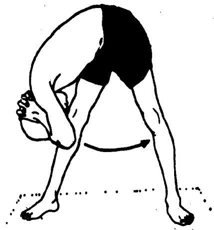
लाभ

स्नायविक तनाव, निराशा आदि में विशेष रूप से लाभकारी है।

कब्ज दूर कर भूख को बढ़ाता है।

बढ़ती उम्र की लड़कियों के लिए विशेष लाभदायी है।

दोलासन



दोलासन

दोलासन

विधि

पैरों के मध्य २-३ फुट का फासला लेकर सीधे खड़े हो जाइये। कन्धों के दोनों तरफ जमीन के समानान्तर अपनी भुजाओं को फैला दीजिये। हथेलियाँ नीचे की तरफ रहें।

श्वास लीजिये। हथेलियों को ऊपर की ओर कीजिये। मुट्ठी बाँधिये, भुजाओं को झुकाइये। सिर के पीछे, गर्दन पर मुट्ठियों को रखिये।

शरीर के ऊपरी भाग को थोड़ा दाहिनी तरफ घुमाइये। श्वास छोड़कर सामने की ओर इतना झुकिये कि सिर दाएँ घुटने से छूने लगे। श्वास को बाहर ही रोकिये, सिर और ऊपरी धड़ को दाएँ से बाएँ फिर बाएँ से दाएँ घुटने तक वापस झुलाइये।

तीन बार दुहराइये। फिर दाएँ घुटने से वापस ऊपर आ जाइये।

इसी अभ्यास को दुहराइये लेकिन इस बार सीधी स्थिति से बाएँ घुंटने पर झुकिये।

टिप्पणी

पूरे आसन के अभ्यास के दौरान पैर सीधे रहें।

समय

शरीर के प्रत्येक तरफ से ५-५ बार कीजिये।

लाभ

भुजाओं, कन्धों व पीठ को मजबूत व लचीला बनाने के लिए यह श्रेष्ठ आसन है।

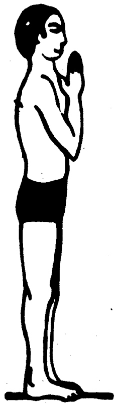
यह कमर को शक्तिशाली और पतला बनाता है।

रीढ़ के निचले भाग के स्नायुओं के दबाव को सामान्य करता है।

सूर्य नमस्कार

इस गतिशील अभ्यास को परम्परा से योग अभ्यासों के अंतर्गत नहीं माना गया है लेकिन शरीर के सभी जोड़ों व मांसपेशियों को ढीला करने का तथा आंतरिक अंगों की मालिश करने का यह एक इतना प्रभावशाली ढंग है कि इसे इस पुस्तक में स्थान दिया गया है। प्रातः स्नान के बाद एवं अन्य योग-विधियों के पूर्व इसे करना श्रेष्ठ माना गया है। दिन में किसी भी समय यदि आपको थकान का अनुभव होता है तो इस अभ्यास के द्वारा आप अपनी खोई हुई शारीरिक व मानसिक शक्ति को पुनः प्राप्त कर सकते हैं।

सूर्य नमस्कार १२ स्थितियों से मिलकर बना है जिसमें से प्रत्येक का राशिचक्र के १२ चिन्हों से सम्बन्ध है। सूर्य नमस्कार के एक पूर्ण चक्र में इन्हीं १२ स्थितियों को क्रम से दो बार दुहराया जाता है। १२ स्थितियों में से प्रत्येक के साथ एक मंत्र जुड़ा है। इस अभ्यास से अधिक से अधिक लाभ लेने के लिए इनका मौखिक अथवा मानसिक रूप से उच्चारण करना चाहिए। मंत्र क्या है ? मंत्र अक्षर-समूहों, शब्दों, शब्द-समूहों या वाक्यों से मिलकर बनी संरचना है। मंत्र के दुहराने का मन पर बड़ा शक्तिशाली व तेज प्रभाव पड़ता है। सुनाई देने वाली अथवा न सुनाई देने वाली ध्वनि-तरंगों के मन पर सूक्ष्म प्रभाव पड़ने के कारण ऐसा होता है। यहाँ तक कि इस वातावरण का उपयोग आधुनिक विज्ञान भी कर रहा है। उदाहरण के लिए, विश्व के विभिन्न भागों में स्थित कुछ प्रगतिशील अस्पतालों में अनेक मनो-चिकित्सक ध्वनि के रूप में अपने रोगियों को लम्बे समय तक सुझाव या अन्य व्यक्ति द्वारा दिये सुझावों के अधीन रखकर उनका इलाज करते हैं। इन पाश्चात्य सुझावों तथा योग व अनेक धर्मों में प्रयुक्त मंत्रों में केवल इतना अंतर है कि सुझावों का प्रयोग शारीरिक व मानसिक दशा के सुधारने में किया जाता है जबकि मंत्रों का प्रयोग शुद्ध आध्यात्मिक कारणों से किया जाता है। हिन्दू धर्म (और योग का भी) सबसे अधिक ज्ञात एवं प्रचलित मंत्र ॐ है। यह ईसाई धर्म के 'आमेन' तथा इस्लाम के 'आमीन' का मूल है।



स्थिति १

स्थिति १ : प्रार्थना की मुद्रा

विधि

प्रार्थना की मुद्रा में पंजों को मिलाकर सीधे खड़े हो जाइये। पूरे शरीर को शिथिल छोड़ दीजिये। मंत्र का उच्चारण मौखिक अथवा मानसिक रूप से कीजिये।

श्वास

सामान्य।

एकाग्रता

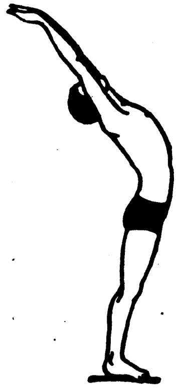
अनाहत चक्र पर।

मंत्र

ॐ मित्राय नमः

लाभ

व्यायाम की तैयारी के रूप में एकाग्र एवं शान्त अवस्था लाता है।



स्थिति २

स्थिति २ : हस्त उत्तानासन

विधि

दोनों भुजाओं को सिर के ऊपर उठाइये।

कंधों की चौड़ाई के बराबर दोनों भुजाओं में फासला रखिये।

सिर और ऊपरी धड़ को थोड़ा सा पीछे झुकाइये।

मंत्र का उच्चारण कीजिये।

श्वास

भुजाओं को उठाते समय श्वास लीजिये।

एकाग्रता

विशुद्धि चक्र पर।

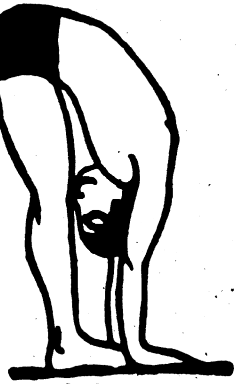
मंत्र

ॐ रवये नमः

लाभ

आमाशय की अतिरिक्त चर्बी को हटाता और पाचन को सुधारता है।

इसमें भुजाओं और कंधों की मांसपेशियों का व्यायाम होता है।



स्थिति ३

स्थिति ३ : पादहस्तासन

विधि

सामने की ओर झुकते जाइये जब तक कि अंगुलियाँ या हाथ जमीन को पैरों के सामने तथा बगल में स्पर्श न कर लें।

मस्तक को घुटने से स्पर्श कराने की कोशिश कीजिये।

जोर न लगायें। पैरों को सीधे रखिये।

श्वास

सामने की ओर झुकते समय श्वास छोड़िये।

अधिक से अधिक साँस बाहर निकालने के लिए अन्तिम स्थिति में आमाशय को सिकोड़िये।

एकाग्रता

स्वाधिष्ठान चक्र पर।

मंत्र

ॐ सूर्याय नमः

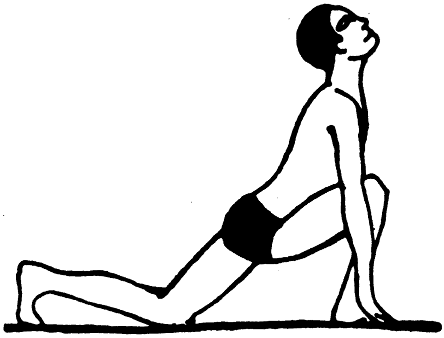
लाभ

पेट व आमाशय के दोषों को रोकता तथा नष्ट करता है। आमाशय प्रदेश की अतिरिक्त चर्बी को कम करता है।

कब्ज को हटाने में सहायक है।

रीढ़ को लचीला बनाता एवं रक्त-संचार में तेजी लाता है।

रीढ़ के स्नायुओं के दबाव को सामान्य बनाता है।



स्थिति ४

स्थिति ४ : अश्व संचालनासन

विधि

बायें पैर को जितना सम्भव हो सके पीछे फैलाइये।

इसी के साथ दायें पैर को मोड़िये; लेकिन पंजा अपने स्थान पर ही रहे। भुजाएँ अपने स्थान पर सीधी रहें।

इसके बाद शरीर का भार दोनों हाथों, बायें पैर के पंजे, बायें घुटने व दायें पैर की अंगुलियों पर रहेगा।

अंतिम स्थिति में सिर पीछे को उठाइये, कमर को धनुषाकार बनाइये और दृष्टि ऊपर की तरफ रखिये।

श्वास

बाएँ पैर को पीछे ले जाते समय श्वास लीजिये।

एकाग्रता

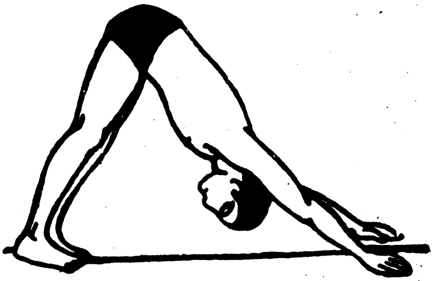
आज्ञा चक्र पर।

मंत्र

ॐ भानवे नमः

लाभ

आमाशय के अंगों की मालिश कर कार्य-प्रणाली को सुधारता है। पैरों की मांसपेशियों को शक्ति मिलती है।



स्थिति ५

स्थिति ५ : पर्वतासन

विधि

दायें पैर को सीधा करके बायें पंजे के पास रखिये।

नितम्बों को ऊपर उठाइये और सिर को भुजाओं के बीच में लाइये।

अन्तिम स्थिति में पैर और भुजाएँ सीधी रहें।

इस स्थिति में एड़ियों को जमीन से स्पर्श कराने का प्रयास कीजिये।

श्वास

दायें पैर को सीधा करते एवं धड़ को उठाते समय श्वास छोड़िये।

एकाग्रता

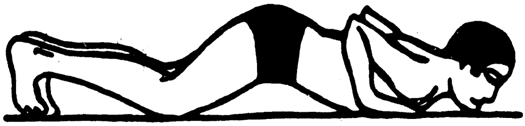
विशुद्धि चक्र पर।

मंत्र

ॐ खगाय नमः

लाभ

भुजाओं एवं पैरों के स्नायुओं एवं मांसपेशियों को शक्ति प्रदान करता है। अभ्यास ४ के विपरीत आसन के रूप में रीढ़ को उल्टी दिशा में झुकाकर उसे लचीला बनाता है। रीढ़ के स्नायुओं के दबाव को सामान्य बनाता है तथा उनमें ताजे रक्त का संचार करने में सहायक है।



स्थिति ६

स्थिति ६ : अष्टांग नमस्कार

विधि

शरीर को भूमि पर इस प्रकार झुकाइये कि अन्तिम स्थिति में दोनों पैरों की अंगुलियाँ, दोनों घुटने, सीना, दोनों हाथ तथा ठुड्डी भूमि का स्पर्श करें।

नितम्ब व आमाशय जमीन से थोड़े ऊपर उठे रहें।

श्वास

स्थिति ५ में छोड़ी हुई श्वास को बाहर ही रोके रखिये।

एकाग्रता

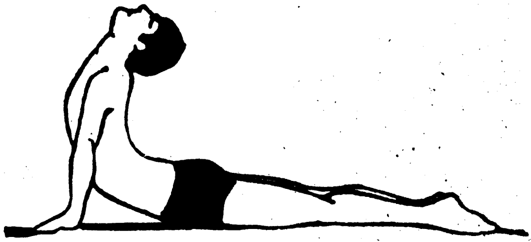
मणिपुर चक्र पर।

मंत्र

ॐ पूष्णे नमः

लाभ

पैरों और भुजाओं की मांसपेशियों को शक्ति प्रदान करता है। सीने को विकसित करता है।



स्थिति ७

स्थिति ७ : भुजंगासन

विधि

हाथों को सीधे करते हुए शरीर को कमर से ऊपर उठाइये। सिर को पीछे की ओर झुकाइये।

यह अवस्था भुजंगासन की अन्तिम स्थिति के समान ही है। (विवरण के लिए इसी पुस्तक के अन्य अध्याय में देखिये)।

श्वास

कमर को धनुषाकार बना कर उठते हुए श्वास लीजिये।

एकाग्रता

स्वाधिष्ठान चक्र पर।

मंत्र

ॐ हिरण्यगर्भाय नमः

लाभ

आमाशय पर दबाव पड़ता है; यह आमाशय के अंगों में जमे हुए रक्त को हटा कर ताजा रक्त-संचार करता है। बदहजमी व कब्ज सहित यह आसन पेट के सभी रोगों में उपयोगी है। रीढ़ को धनुषाकार बनाने से उसमें व उसकी मांसपेशियों में लचीलापन आता है एवं रीढ़ के प्रमुख स्नायुओं को नयी शक्ति मिलती है।

स्थिति ८ : पर्वतासन

यह स्थिति ५ की आवृत्ति है।

मंत्र

ॐ मरीचये नमः

स्थिति ९ : अश्व संचालनासन

यह स्थिति ४ की आवृत्ति है।

मंत्र

ॐ आदित्याय नमः

स्थिति १० : पादहस्तासन

यह स्थिति ३ की आवृत्ति है।

मंत्र

ॐ सवित्रे नमः

स्थिति ११ : हस्त उत्तानासन

यह स्थिति २ की आवृत्ति है।

मंत्र

ॐ अर्काय नमः

स्थिति १२ : प्रार्थना की मुद्रा

यह अन्तिम स्थिति प्रथम स्थिति की आवृत्ति है।

मंत्र

ॐ भास्कराय नमः

स्थिति १३-२४

१ से १२ तक वर्णित स्थितियाँ मिलकर सूर्य नमस्कार का आधा चक्र हुआ। शेष स्थितियों को थोड़े रूपान्तर से दुहराना पड़ता है।

(अ) चौथी स्थिति में बाएँ पैर को पीछे ले जाने के बजाय दाएँ पैर को पीछे ले जाइये।

(ब) नवीं स्थिति में बायाँ पैर मोड़िये और बायाँ पंजा हाथों के पास ले जाइये।

ये २४ स्थितियाँ मिलकर सूर्य नमस्कार का एक पूर्ण चक्र हैं।

बीज मंत्र

सूर्य के १२ नामों के बदले में बीज मंत्रों के क्रम का भी उपयोग किया जा सकता है। ये बीज मंत्र आह्वान करने वाली ध्वनियाँ हैं जिनका अपने आप में कोई शाब्दिक अर्थ नहीं है, लेकिन ये शरीर और मस्तिष्क में बड़ी शक्तिशाली तरंगों को जन्म देती हैं।

बीज मंत्र इस प्रकार हैं–

१. ॐ ह्राम्	७. ॐ ह्राम्
२. ॐ ह्रीम्	८. ॐ ह्रीम्
३. ॐ ह्रूम्	९. ॐ ह्रूम्
४. ॐ ह्रैम्	१०. ॐ ह्रैम्
५. ॐ ह्रौम्	११. ॐ ह्रौम्
६. ॐ ह्रः	१२. ॐ ह्रः

बीज मंत्र संख्या में कुल ६ हैं और सूर्य नमस्कार के एक चक्र के दौरान चार बार दुहराए जाते हैं। सूर्य मंत्रों को दुहराने के हिसाब से यदि कोई सूर्य नमस्कार का अभ्यास तेजी से करता है तो बीज मंत्रों को कहते जाना ही पर्याप्त है।

समय

आध्यात्मिक लाभ के लिए ३ से १२ चक्र धीरे-धीरे पूरे कीजिये।

शारीरिक लाभ के लिए ३ से १२ चक्र अधिक तेजी से कीजिये। नये अभ्यासियों को प्रारम्भ में अधिक चक्रों का अभ्यास नहीं करना चाहिए। उन्हें २ या ३ से शुरू करके प्रतिदिन एक-एक चक्र बढ़ाते जाना चाहिए। पुराने अभ्यासी सूर्य नमस्कार के चक्र को बड़ी संख्या में कर सकते हैं।

आसन सत्र में क्रम

आदर्श रूप में सूर्य नमस्कार का अभ्यास अन्य आसनों से पूर्व करना चाहिए। ऐसा करने से शरीर ढीला होता है और नींद व आलस्य दूर होते हैं।

सूर्य नमस्कार के अभ्यास के बाद कुछ मिनटों के लिए शवासन अवश्य करना चाहिए। इससे हृदय की धड़कन व श्वास को सामान्य स्थिति में आने का समय मिलेगा। शरीर की समस्त मांसपेशियाँ शिथिल हो जायेंगी।

सावधानी

शरीर में अधिक विषैले पदार्थ होने से सूर्य नमस्कार के अभ्यास के दौरान यदि ज्वर की दशा उत्पन्न हो जाये तो सूर्य नमस्कार का अभ्यास बन्द कर देना चाहिए। कुछ समय तक अन्य आसनों के अभ्यास से इन विषैले तत्वों को शरीर से निकाल देने के बाद सूर्य नमस्कार का अभ्यास पुनः शुरू किया जा सकता है।

बिना किसी थकान के अभ्यासी जितने चक्रों का अभ्यास कर सकता है, उसे उतना ही करना चाहिए।

सीमाएँ

सूर्य नमस्कार के अभ्यास के लिए आयु का कोई बन्धन नहीं है, युवा व वृद्ध दोनों ही इसे कर सकते हैं। महिलाओं को मासिक धर्म के दिनों में अथवा गर्भ के चौथे महीने के बाद इसका अभ्यास नहीं करना चाहिए।

लाभ

प्रत्येक स्थिति के वर्णन के साथ कुछ लाभों का वर्णन किया गया है जो मुख्य रूप से उसी अभ्यास विशेष से संबंधित हैं। वैसे सूर्य नमस्कार से अनेक दूसरे लाभ भी हैं जो अभ्यास के सामूहिक प्रभाव के रूप में मिलते हैं, न कि किसी एक अभ्यास से।

शरीर की विभिन्न प्रणालियों जैसे नलिकाविहीन ग्रन्थि प्रणाली, रक्त संचार प्रणाली, श्वास-प्रश्वास प्रणाली, पाचन प्रणाली आदि पर इसका बड़ा शक्तिशाली प्रभाव पड़ता है और इसके अभ्यास से इन प्रणालियों में सन्तुलन स्थापित हो जाता है। जब इनमें से एक या अनेक प्रणालियाँ सन्तुलन खो बैठती हैं तो अनेक रोग उत्पन्न होने लगते हैं।

सूर्य नमस्कार उनमें पुनः सन्तुलन लाकर उन अनेक रोगों से छुटकारा दिलाने में सहायक है जो मानवता को शैतान की तरह घेरे रहते हैं। अशुद्ध रक्त, नलिकाविहीन ग्रन्थियों के सामान्य से कम या अधिक क्रियाशील होने या अधिक पाचक रसों के स्राव से अनेक बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। इस प्रकार की त्रुटिपूर्ण कार्य-प्रणाली को सुधारने या रोगों के कारणों को दूर करने में सूर्य नमस्कार किसी भी प्रकार से कम सहायक नहीं है। आधुनिक युग का मनुष्य प्रायः बैठे रहकर ही अपना समय व्यतीत करता है। उसकी मांसपेशियों को सही व्यायाम मिले, इसके लिए सूर्य नमस्कार से उत्तम कोई अन्य अभ्यास नहीं है। इसके दैनिक अभ्यास से शरीर पूर्ण स्वस्थ रहेगा व अतिरिक्त चर्बी हटेगी। अभ्यासी को शारीरिक व मानसिक स्तर पर नयी शक्ति व स्फूर्ति मिलेगी। वह अनुभव करेगा कि उसकी विचारशक्ति तेज व पैनी हो रही है।

इस आसन में आमाशय के सभी अंग बारी-बारी से फैलते और संकुचित होते हैं। फलतः यदि वे अंग ठीक से कार्य नहीं कर रहे हैं तो कुछ समय में सामान्य ढंग से क्रियाशील हो जाते हैं।

अनेक व्यक्ति ठीक से श्वास नहीं लेते हैं। सूर्य नमस्कार के क्रमों के साथ श्वास-प्रश्वास क्रम को जोड़ा गया है। अतः यह निश्चित हो जाता है कि जैसी गहरी और लयपूर्ण श्वास लेनी चाहिए, वैसी अभ्यासी सूर्य नमस्कार के साथ प्रतिदिन कुछ मिनटों के लिए अवश्य लेगा। इससे फेफड़ों में भरी दूषित व कीटाणुओं से युक्त स्थिर वायु निकलेगी और उसके स्थान पर कुछ शुद्ध ऑक्सीजन मिश्रित वायु फेफड़ों को मिलेगी। ऑक्सीजन मिश्रित शुद्ध रक्त जब निरन्तर मस्तिष्क को मिलता है तो मस्तिष्क की स्थिति भी शुद्ध, स्वस्थ और निर्मल हो जाती है।

पसीना निकलना शरीर का एक प्रमुख कार्य है क्योंकि इससे दूषित तत्त्व बाहर निकलते हैं। लेकिन बहुत से लोग इतनी मेहनत नहीं करते कि पसीना निकले। नतीजा यह होता है कि ये दूषित तत्त्व शरीर में ही रहते हैं और रोगों को उत्पन्न करते या बढ़ाते हैं। कम से कम चर्म-विकार तो पैदा कर ही देते हैं।

ऐसे अनेक व्यक्तियों ने सूर्य नमस्कार के अभ्यास से स्वस्थ और सुन्दर शरीर प्राप्त किया है। उनके समस्त प्रकार के चर्म-विकार दूर हो गये। इस तेजी से भागते आज के संसार में स्नायविक समस्याओं, तनावों, आशंकाओं से मुक्ति दिलाने में सूर्य नमस्कार के नियमित अभ्यास से बढ़कर और क्या हो सकता

है ? अभ्यास के दौरान होने वाली विभिन्न गतियाँ शरीर के विभिन्न भागों से संबंधित स्नायुओं की धीरे-धीरे मालिश करके उन्हें शिथिल एवं शक्ति-सम्पन्न करती है।

संक्षेप में, जो अच्छे स्वास्थ्य की कामना करते हैं उन्हें सूर्य नमस्कार के अभ्यास से वैसा स्वास्थ्य मिलता है और ऐसा कौन है जो अच्छे स्वास्थ्य की इच्छा न रखता हो ? अतः हम सभी व्यक्तियों से सूर्य नमस्कार करने का अनुरोध करते हैं, चाहे वे स्वस्थ हों या अस्वस्थ, युवक हों या वृद्ध, बड़े हों या छोटे, पुरुष हों या स्त्री।

सन्दर्भ

यहाँ सूर्य नमस्कार का केवल मुख्य विवरण दिया गया है।

विस्तृत विवरण के लिए पाठकों को 'सूर्य नमस्कार' नामक पुस्तक पढ़नी चाहिए जो बिहार योग विद्यालय, मुंगेर अथवा सम्बन्धित संस्थाओं से प्राप्त की जा सकती है।

२

मध्यम आसन समूह

पद्मासन या पद्मासन में होने वाले आसन

इन आसनों का अभ्यास उन व्यक्तियों को नहीं करना चाहिए जिन्हें पद्मासन में बैठने पर जरा भी कष्ट या तनाव मालूम पड़ता हो। ऐसे अभ्यासियों को इस पुस्तक में दिये गये अभ्यासों के द्वारा अपने शरीर को धीरे-धीरे पहले पद्मासन में बैठ सकने लायक बना लेना चाहिए।

योग मुद्रा



योग मुद्रा

योग मुद्रा

विधि

पद्मासन में बैठ कर आँखें बन्द कर लीजिये।

पीठ के पीछे एक हाथ से दूसरे हाथ की कलाई पकड़ लीजिये।

शरीर को शिथिल कर धड़ को धीरे-धीरे सामने झुकाते हुए माथा जमीन पर रखिये और कुछ समय इस स्थिति में रुक कर आराम कीजिये।

धीरे-धीरे फिर पहले जैसी स्थिति में आ जाइये।

टिप्पणी

यद्यपि पारंपरिक नाम के रूप में इस अभ्यास को मुद्रा कहा जाता है किन्तु साधारण तौर पर इसे आसन ही माना गया है।

नये अभ्यासी नितम्बों के नीचे गद्दा या कम्बल रख सकते हैं।

श्वास

प्रारम्भिक स्थिति में लम्बी और गहरी श्वास अन्दर लीजिए।

सामने की ओर झुकते हुए धीरे-धीरे श्वास छोड़िये।

रुकी हुई स्थिति में श्वास साधारण रूप से लीजिये व छोड़िये।

वापस आते समय धीरे-धीरे गहरी श्वास लीजिए।

समय

अंतिम स्थिति में कुछ मिनट रुकने का प्रयत्न कीजिये; अगर ऐसा कर सकने में असमर्थ हों तो आसन की कुछ आवृतियाँ कीजिये।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : मणिपुर चक्र पर।

शारीरिक : पीठ, उदर या पेड़ू या श्वास-प्रक्रिया पर।

सावधानी

स्नायुओं को साधारण लचीलेपन से अधिक खींचकर या झुकाकर पीठ, टखनों, घुटनों या जाँघों पर अधिक जोर मत डालिये।

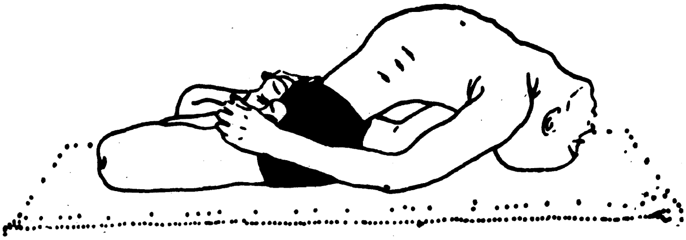
लाभ

यह पेट और उससे सम्बन्धित शरीर के अन्य भागों की मालिश तथा कोष्ठबद्धता, अपचन व अन्य उदर संबंधी सभी रोगों को दूर करने के लिए एक बहुत ही अच्छा आसन है।

यह रीढ़ की हड्डी की समस्त कशेरुकाओं को एक-दूसरे से अलग करता है और सुषुम्ना नाड़ी को, जो इनके बीच के स्थानों से निकलती है, धीरे-धीरे साफ व हल्का करता है।

ये ज्ञान-तन्तु या कशेरुकायें समस्त शरीर के प्रत्येक भाग को मस्तिष्क से संबंधित करती हैं, अतएव उनकी सफाई व हल्कापन शारीरिक स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत ही उपयोगी व लाभदायक है जो कि रीढ़ की हड्डी में नाभि के ठीक पीछे की ओर स्थित है।

यह आसन मणिपुर चक्र को जागृत करने के लिए एक बहुत ही शक्तिशाली आसन है और यह चक्र प्रत्येक व्यक्ति के अन्दर छिपी हुई शक्ति का एक प्रमुख केन्द्र है।



मत्स्यासन

मत्स्यासन

विधि

पद्मासन में हाथों का सहारा लेते हुए पीछे की ओर तब तक झुकिये जब तक कि सिर का ऊपरी हिस्सा जमीन से छूने न लगे। पैरों के अंगूठों को पकड़िये। कुहनियाँ जमीन से सटी रहें।

प्रकारान्तर

दोनों हाथों की अंगुलियों को एक-दूसरे में फँसा लीजिये और हथेलियाँ ऊपर की ओर करके दोनों हाथों को सिर के नीचे जमीन पर रखिये। सिर के पिछले भाग को हथेलियों पर आराम से टिकने दीजिये।

श्वास

अन्तिम स्थिति में लम्बी व गहरी श्वास लीजिये। जिनके टॉन्सिल में कोई दोष हो या गले में खट्टापन लगता हो, वे अन्तिम स्थिति में शीतकारी प्राणायाम (बाद के अध्याय में देखिये) कर सकते हैं।

समय

अंतिम स्थिति में ५ मिनट रुकिये। शरीर पर जोर मत डालिये।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : मणिपुर या अनाहत चक्र पर।

शारीरिक : उदर प्रदेश. वक्ष या श्वास-प्रक्रिया पर।

क्रम

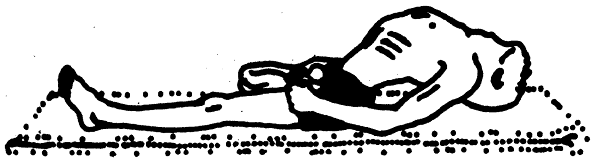
इसे सर्वांगासन व हलासन के बाद करना चाहिए।

वैकल्पिक आसन

इस आसन के स्थान पर सुप्त वज्रासन भी किया जा सकता है।

लाभ

उदर सम्बन्धी सभी प्रकार की बीमारियों के लिए बहुत उपयोगी है। कोष्ठबद्धता तथा पीठ में जमे रक्त के संचारण में मदद करता है।



मत्स्यासन (सरल रूप १)

मत्स्यासन (सरल रूप १)

विधि

एक पैर को मोड़कर दूसरे पैर की जाँघ पर अर्ध पद्मासन की स्थिति में रखिये। दूसरा पैर सीधा रखिये।

कुहनियों का सहारा लेते हुए धीरे-धीरे पीछे की ओर झुकिये।

धीरे से धड़ के ऊपरी भाग को जमीन पर रखिये।

मुड़े हुए पैर के पंजे को दोनों हाथों से पकड़िये।

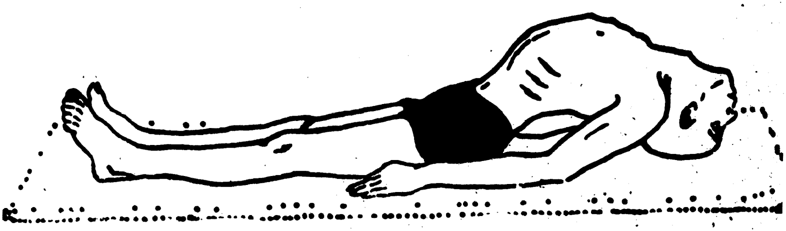
अंतिम स्थिति में जब तक आराम से रह सकें, रहिये; फिर पूर्व स्थिति में आ जाइये।

टिप्पणी

वैकल्पिक रूप में सिर के पिछले हिस्से को जमीन पर टिका सकते हैं।

लाभ

पूर्ण मत्स्यासन की तरह।



मत्स्यासन (सरल रूप २)

मत्स्यासन (सरल रूप २)

विधि

दोनों पैर सामने की ओर सीधे रखिये।

शरीर के ऊपरी हिस्से को धीरे-धीरे पीछे की ओर उसी प्रकार झुकाइये जिस प्रकार मत्स्यासन में झुकाते हैं।

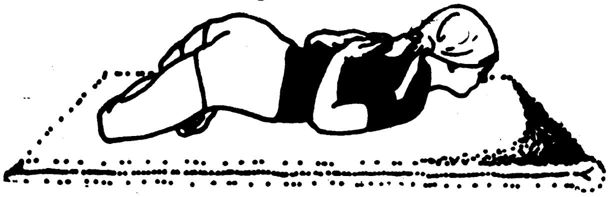
सिर के ऊपरी हिस्से को आराम से जमीन पर रखिये तथा पीठ को गोलाकार झुकाकर दोनों हाथों को जाँघों पर रख लीजिये।

अंतिम स्थिति में कुछ देर रुकें; फिर पूर्व स्थिति में वापस आ जायें।

लाभ

पहले की तरह।

गुप्त पद्मासन



गुप्त पद्मासन

गुप्त पद्मासन

विधि

पद्मासन में बैठ कर दोनों हाथों को घुटनों के सामने रखिये।

नितम्बों को ऊपर उठाइये और घुटनों पर खड़े हो जाइये।

शरीर को नीचे की ओर झुकाते जाइये जब तक कि आपकी ठुड्डी या एक गाल जमीन से न छू जाये।

दोनों हथेलियों को जोड़कर पीठ पर इस तरह रखिये कि आपकी अंगुलियाँ सिर की ओर रहें।

इसी स्थिति में अंगुलियाँ पीठ के निचले हिस्से पर रहेंगी या रीढ़ के ऊपर। यथासंभव अंगुलियों को इस स्थिति में और ऊपर सरकाते हुए सिर के पिछले हिस्से को छूने का प्रयत्न कीजिये।

श्वास

सामान्य।

समय

इस आसन का अभ्यास चाहे जितनी देर तक किया जा सकता है।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : अनाहत चक्र पर।

शारीरिक : सारे शरीर के शिथिलीकरण व मस्तिष्क पर।

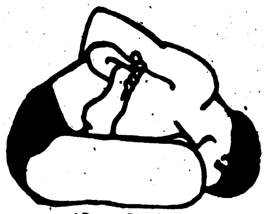
लाभ

यह आसन रीढ़ की हड्डी पर बिना कोई तनाव डाले उसके समस्त दोषों को दूर करता है और मेरुदण्ड को सीधा रखने में भी सहायक है। इस आसन को ध्यान के आसन के रूप में भी किया जा सकता है।

बद्ध पद्मासन



पहली स्थिति



अंतिम स्थिति

बद्ध पद्मासन

विधि

पद्मासन में दाहिना हाथ पीछे ले जाकर दायें पैर का अंगूठा पकड़िये। बायें हाथ को पीठ के पीछे ले जाकर बायें पैर का अंगूठा पकड़ने का प्रयत्न कीजिये। अभ्यासी अगर श्वास बाहर छोड़ दे और थोड़ा आगे की ओर झुक जाये तो दोनों पैरों के अंगूठे पकड़ने में आसानी होगी।

आगे झुकिये तथा माथे को जमीन से लगाने का प्रयत्न कीजिये।

इसी स्थिति में कुछ देर रुक कर पुनः पूर्व स्थिति में वापस आइये।

श्वास

झुकते हुए श्वास छोड़िये तथा श्वास लेते हुए वापस आइये।

एकाग्रता

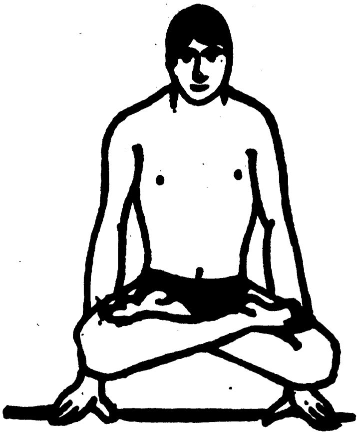
आध्यात्मिक : अनाहत चक्र पर।

शारीरिक : नाभि या श्वास-प्रक्रिया पर।

लाभ

उदर सम्बन्धी रोगों के लिए फायदेमन्द है।
बच्चों के विकास में तथा अविकसित सीने को पुष्ट और मजबूत करने में उपयोगी है। हाथों, कंधों व पीठ को मजबूत व पुष्ट करता है।

लोलासन



लोलासन

लोलासन

विधि

पद्मासन में बैठकर हथेलियों को जाँघों के बगल में जमीन पर रखिये।

हाथों पर पूरे शरीर को साधते हुए जमीन से ऊपर उठाइये।

अब शरीर को आगे-पीछे झुलाइये।

पहली स्थिति में वापस आइये।

इसी प्रकार कई बार कीजिये।

श्वास

शरीर को ऊपर उठाते समय श्वास लीजिये।

शरीर को आगे-पीछे हिलाते समय अंतर्कुंभक लगाइये।

जमीन पर वापस लौटते समय श्वास बाहर छोड़िये।

एकाग्रता

श्वास प्रक्रिया पर।

लाभ

यह आसन हाथों, कलाइयों, कंधों व सीने को पुष्ट करता है।

कुक्कुटासन



कुक्कुटासन

कुक्कुटासन

विधि

पद्मासन में पिंडलियों और जाँघों के बीच से हाथों को अन्दर ले जाइये।

हथेलियों को जमीन पर रखें तथा अंगुलियाँ सामने की ओर रहें।

अब पूरे शरीर को हाथों के सहारे ऊपर उठाकर अंतिम स्थिति में जितनी देर आराम से रुक सकें, रुकिये।

फिर जमीन पर वापस आ जाइये।

इसी प्रकार कुछ आवृत्तियाँ कीजिये।

श्वास

श्वास साधारण रूप से चलेगी।

एकाग्रता

श्वास-प्रक्रिया पर।

सावधानी

जिन व्यक्तियों के पैरों में बहुत अधिक बाल हैं, उन्हें पिंडलियों और जाँघों के बीच से हाथ अन्दर डालने में कठिनाई मालूम पड़ेगी। इस समस्या का निदान पैरों में तेल लगाकर किया जा सकता है या फिर इस आसन का अभ्यास नहाने के बाद करना चाहिये जिससे कि हाथ बालों के ऊपर आसानी से फिसलकर अन्दर जा सकें।

लाभ

हाथों, कंधों व सीने को पुष्ट व चौड़ा करता है।

गर्भासन



गर्भासन

गर्भासन

विधि

पद्मासन में बैठकर हाथों को पिण्डलियों और जाँघों के बीच इतना अन्दर डालिए कि कुहनियाँ पिण्डलियों में से आसानी से ऊपर मोड़ी जा सकें। हाथों को ऊपर की ओर मोड़िये और कानों को पकड़िये तथा सारे शरीर को नितम्बों पर साधिये।

आराम से जब तक सम्भव हो, इसी स्थिति में रुकिये।

अब पैरों को नीचे कर लीजिये और हाथों को बाहर निकाल लीजिये।

श्वास

कानों को हाथों से पकड़ते समय श्वास बाहर छोड़िये।

अंतिम स्थिति में साधारण रूप से श्वास लीजिये।

एकाग्रता

शरीर को ठीक तरह से साधने पर या श्वास-प्रक्रिया पर।

लाभ

यह आसन उत्तेजित, उद्विग्न, क्रोधित या असन्तुष्ट मस्तिष्क को शान्त करता है। यह स्नायु-दौर्बल्यता को भी दूर करता है। अपने आप पर काबू न पा सकने वाले स्वभाव के व्यक्तियों को इस आसन का अभ्यास दिन में जितनी बार भी सम्भव हो सके, करना चाहिए। यह पाचन-क्रिया को उत्तेजित करता है तथा भूख को बढ़ाता है। यह शरीर को साधने (संतुलन) का आसन है।

तोलांगुलासन



तोलांगुलासन

तोलांगुलासन

विधि

पद्मासन में बैठकर पीठ के बल लेट जाइये। हथेलियों को नितम्बों के नीचे रख लीजिये और धड़ को इस तरह उठाइये कि शरीर कुहनियों पर सध जाये।

सिर, पैरों तथा धड़ को जमीन से और ऊपर उठाने का प्रयत्न कीजिये जिससे सारा शरीर केवल नितम्बों व हाथों पर सधा रहे।

जालंधर बंध लगाइये। (विस्तृत विवरण के लिए आगे देखिये)।

बिना तनाव के अंतिम स्थिति में कुछ देर रुकिये; फिर वापस आइये।

श्वास

अंतिम स्थिति में श्वास लीजिये और जालंधर बंध लगाइये।

पूर्व स्थिति में वापस लौटते समय श्वास बाहर छोड़ दीजिये।

आवृत्ति

इस आसन को ५ बार दुहराइये।

एकाग्रता

श्वास रोकने की प्रक्रिया पर।

लाभ

इस आसन से मोटापा दूर होता है।

उदर व उससे संबंधित सभी भाग दोषरहित होते हैं।

कंधे, पीठ व गर्दन मजबूत तथा पुष्ट होते हैं।

सीना चौड़ा और मजबूत होता है।

पीछे की ओर झुकने वाले आसन

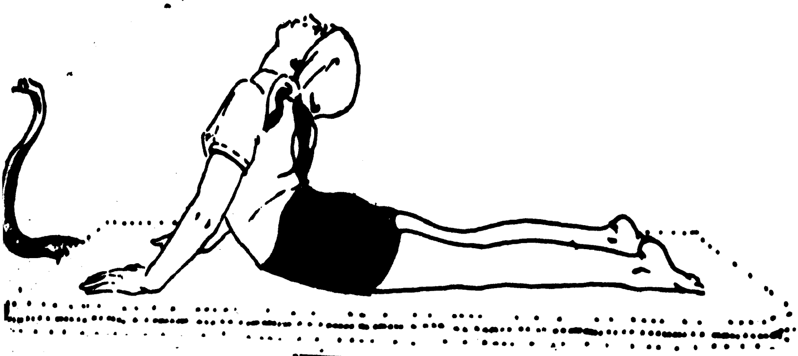
इस अध्याय में दिये गये आसन रीढ़ को पीछे की ओर झुकाते हैं और साथ ही साथ उदर व उससे संबंधित स्नायुओं पर अच्छा तनाव डालते हैं। इस तरह वे सारे स्नायु जो रीढ़ को नियंत्रित करते हैं, भलीभाँति खिंचते और विकसित होते हैं तथा मजबूत बनते हैं। इन स्नायुओं के मजबूत होने से पीठ या कमर से संबंधित किसी भी प्रकार के रोगों की संभावना नहीं रहती, क्योंकि स्नायुओं में इस प्रकार रोगों को रोकने की व उनसे संघर्ष कर सकने की शक्ति आती है। सुषुम्ना नाड़ी (जो कि रीढ़ की कशेरुकाओं के बीच के स्थान से निकलती है) पर भी अच्छा दबाव पड़ता है व उसकी सफाई और विकास होता है। यह भी अपने आप में एक बहुत बड़ा लाभ है क्योंकि यह विशेष नाड़ी शरीर के करीब-करीब सभी अंगों व स्नायुओं से संबंधित है। सुषुम्ना नाड़ी से जुड़ी हुई रीढ़ की हड्डी के पीछे शरीर की अनुकंपी नाड़ियों (sympathetic nerve chain) की संरचना है जो कि परानुकंपी तंत्रिका तंत्र की नाड़ियों (parasympathetic nerve chain) के साथ शरीर के सारे अंगों को ठीक रखती व उन्हें भली प्रकार कार्य करने लायक बनाती है। दूसरे शब्दों में 'अनुकंपी तंत्रिका तंत्र' शरीर के सभी अंगों को अच्छा कार्य करने के लिये उत्तेजित करता है जबकि 'परानुकंपी तंत्रिका तंत्र' शरीर के अंगों की कार्य कुशलता को उस सीमा तक उत्तेजित नहीं करता। परिणामस्वरूप शरीर के सारे अंग संतुलित रूप से कार्य करते रहते हैं तथा आंतरिक एवं बाह्य रूप से आयी हुई किसी भी परिस्थिति को भली प्रकार सँभालते व शरीर का कुशलतापूर्वक संचालन करते रहते हैं। पीछे की ओर झुकने वाले सभी आसन इन समस्त स्नायुओं व शिराओं पर अच्छा प्रभाव डालते हैं जिससे सभी अंगों की कार्यक्षमता में अपूर्व वृद्धि होती है और परिणामतः शरीर हल्का व स्वस्थ होता है।

पीठ में रक्त का प्रवाह स्वाभाविक रूप से धीमा होता है। इससे अशुद्ध रक्त स्वयमेव इन स्थानों में इकट्ठा हो जाता है और शरीर के अंगों एवं नाड़ियों की कार्य क्षमता को धीरे-धीरे कम कर देता है। पीछे झुकने वाले आसन इस जमे हुए रक्त को भली प्रकार प्रवाहित करने और इसके स्थान पर ओषजनयुक्त शुद्ध रक्त को पहुँचाने के लिए बहुत ही उपयोगी हैं।

पीछे झुकने वाले आसनों को करते समय उदर से संबंधित अंगों पर दबाव पड़ता है– विशेष तौर पर उदर के निम्न भाग में स्थित मांसपेशियों (rectus abdominal muscles) पर। इस प्रकार यह आसन आंतरिक उदर के अवयवों व स्नायुओं की अच्छी मालिश करता है जिससे उन सभी अंगों की कार्य-क्षमता में अपूर्व वृद्धि होती है जो कि उन्हें दोष रहित बनाने व बीमारियों को दूर करने के लिए बहुत ही उपयोगी हैं।

इन आसनों में तीन आसनों भुजंगासन, शलभासन व धनुरासन को यदि नियमपूर्वक किया जाये तो ये विशेष रूप से बहुत ही लाभदायक आसन हैं। सम्पूर्ण मेरुदण्ड पर एवं ऊपर से लेकर नीचे तक तथा पीठ पर फैले हुए समस्त नाड़ी संस्थान पर इन आसनों का बहुत ही शक्तिशाली प्रभाव पड़ता है। इसके साथ-साथ ये आसन उदर व पेड़ू को भी अच्छी तरह तानते व उन सारे अंगों को अच्छी तरह दबाते हैं। अभ्यासियों को या अच्छे स्वास्थ्य की कामना रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति को उपरोक्त तीनों आसन नित्य नियमपूर्वक करने चाहिए।

भुजंगासन



भुजंगासन

भुजंगासन

विधि

पेट के बल लेट जाइये तथा पैरों को सीधा व लम्बा फैला दीजिये।

हथेलियों को कंधों के नीचे जमीन पर रखिये।

माथे को जमीन से छूने दीजिये।

सावधानी से सारे शरीर को ढीला कीजिये।

विशेष रूप से पीठ की मांसपेशियों को शिथिल कीजिये।

धीरे-धीरे सिर को व कंधों को जमीन से ऊपर उठाइये तथा सिर को जितना पीछे की ओर ले जा सकें, ले जाइये।

अभ्यासियों को हाथों की सहायता के बिना कंधों को केवल पीठ के सहारे ऊपर उठाने का प्रयत्न करना चाहिए।

अब हाथों को काम में लाइये और धीरे-धीरे पूरी पीठ को ऊपर की ओर तथा पीछे की ओर झुकाते हुए गोलाकार करते जाइये; जब तक कि हाथ पूर्ण रूप से सीधे न हो जायें। उपरोक्त क्रिया करते समय इस बात का ध्यान रहे कि पीठ पर विशेष तनाव या अनावश्यक खिंचाव न पड़ने पाये। शरीर को नाभि से ऊपर तक उठाइये। अंतिम स्थिति में आराम के साथ कुछ देर रुकिये; फिर धीरे-धीरे उपरोक्त क्रिया को विपरीत रूप में करते हुए पूर्व स्थिति में वापस लौटिये।

श्वास

जमीन से शरीर को ऊपर उठाते समय श्वास अन्दर लीजिये।

अन्तिम स्थिति में श्वास अन्दर रोक कर रखें।

पूर्व स्थिति में लौटते समय धीरे-धीरे श्वास बाहर छोड़ दीजिये।

समय

अन्तिम स्थिति में १ मिनट रुकिये।

इस आसन को पाँच बार दुहराइये।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : विशुद्धि चक्र या आज्ञा पर।

शारीरिक : पीठ, उदर या श्वास-प्रक्रिया पर।

सीमाएँ

जो व्यक्ति पेट के घाव, हर्निया, आँत की बीमारी या चुल्लिका ग्रन्थि की अधिक क्रियाशीलता से पीड़ित हैं, उन्हें किसी अच्छे डॉक्टर या योग प्रशिक्षक की सलाह के बिना इस आसन को नहीं करना चाहिए।

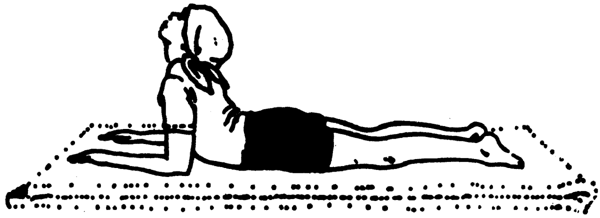
लाभ

वह स्त्रियों के प्रजनन सम्बन्धी विकारों को जैसे प्रदर, कष्टप्रद मासिक धर्म और अनियमित मासिक धर्म आदि के कष्ट को दूर करने में सहायक है। साधारण तौर पर अण्डाशय और गर्भाशय को भी इस आसन से लाभ पहुँचता है।

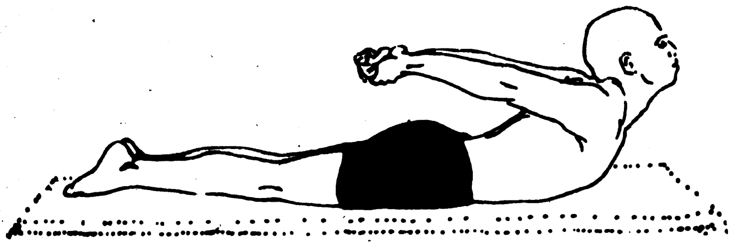
यह भूख को उत्तेजित करता है तथा कोष्ठबद्धता और कब्ज का नाश करता है। साधारणतया यह आसन उदर के सभी संबंधित अंगों, विशेष रूप से जिगर (liver) और गुर्दों (kidneys) के लिए लाभदायक है।

स्लिप डिस्क सम्बन्धी छोटे-मोटे दर्द को तथा पीठ के समस्त प्रकार के दर्दों को भी यह आसन दूर करता है।

इस आसन से मेरुदण्ड संस्थान लचीला, स्वस्थ व पुष्ट बनता है।



स्फिंक्स की आकृति



सर्पासन

प्रकारान्तर १ (स्फिंक्स की आकृति)

विधि

हाथों को कंधों के नीचे रखने के बदले कुहनियों से नीचे का भाग हथेलियों की ओर से जमीन पर रखें। अन्तिम स्थिति में हथेलियों को बिना खिसकाये कुहनियों को सीधा करें।

नये अभ्यासियों के लिए यह भुजंगासन का सरल रूप है।

प्रकारान्तर २ (सर्पासन)

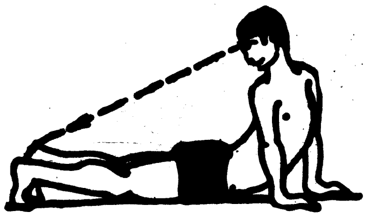
विधि

पेट के बल लेट जाइये।

हाथों को पीठ के ऊपर रख एक हाथ से दूसरे हाथ की कलाई पकड़ लीजिये। दोनों हाथों व पीठ के स्नायुओं को तानते हुए सीने को जमीन से ऊपर उठाइये तथा सिर को पीछे झुकाइये।

टिप्पणी

शेष पूर्ण विवरण भुजंगासन की तरह है।



तिर्यक् भुजंगासन

प्रकारान्तर ३ (तिर्यक् भुजंगासन)

विधि

मूल भुजंगासन की अन्तिम स्थिति में आइये।

सिर व धड़ को एक दिशा में मोड़कर दूसरे पैर की एड़ी को देखिये।

विपरीत दिशा में इसी क्रिया को दुहराइये।

श्वास

बायीं या दाहिनी ओर मुड़ते समय श्वास को बाहर रोके रखिये।

मूल भुजंगासन की अन्तिम स्थिति में वापस आकर पूरक कीजिये।

पूर्व स्थिति में लौटते समय श्वास बाहर छोड़िये।

आवृत्ति

बारी-बारी से दोनों ओर १०-१० बार मुड़िये।

टिप्पणी

यह आसन शंख प्रक्षालन की क्रिया करते समय किया जाता है।



पूर्ण भुजंगासन

प्रकारान्तर ४ (पूर्ण भुजंगासन)

विधि

पैरों को सीधे रखने के बजाय उन्हें घुटनों पर से मोड़ लीजिये और पैरों के अंगूठों से सिर के पिछले हिस्से को छूने का प्रयत्न कीजिये। थोड़ी देर इसी स्थिति में रुकने के बाद वापस आइये।

श्वास

भुजंगासन की स्थिति में श्वास लीजिये।

पैरों के अंगूठों को सिर से स्पर्श कराते समय श्वास छोड़िये।

सीमाएँ

यह केवल उन अभ्यासियों के लिए है जिनकी पीठ लचीली है।

बच्चों व नौजवानों के लिए भी यह बहुत ही अच्छा आसन है।

शलभासन



शलभासन

शलभासन

विधि

हाथों को जाँघों के नीचे रखिये । पैरों को खींचिये व हाथों को तानिये ।

पेट व पैरों को बिना मोड़े हुए ऊपर उठाइये ।

इसी स्थिति में कुछ देर रुकिये । फिर पूर्व स्थिति में वापस लौटिये ।

श्वास

जमीन पर लेटी हुई स्थिति में श्वास अंदर लीजिए ।

अन्तिम स्थिति में श्वास को अन्दर रोक कर रखिये ।

वापस लौटते समय श्वास बाहर छोड़िये ।

आवृत्ति

५ बार कीजिए ।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : विशुद्धि चक्र पर ।

शारीरिक : उदर, पीठ के निचले हिस्से या हृदय पर ।

क्रम

भुजंगासन व धनुरासन के साथ ।

सीमाएँ

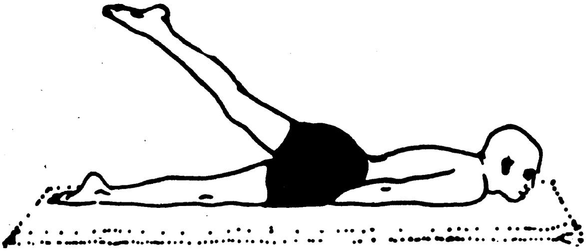
पेप्टिक अल्सर, हर्निया व आँत के कष्ट से पीड़ित या कमजोर हृदय वालों को इसका अभ्यास बिना सलाह के नहीं करना चाहिये ।

लाभ

उदर व उससे संबंधित अंगों पर विशेष प्रभाव डालता है ।

मेरुदण्ड के निचले हिस्से को पुष्ट करता है, साइटिका नाड़ी को खींचता व हल्का करता है तथा हृदय को मजबूत बनाता है ।

अर्ध शलभासन



अर्ध शलभासन

अर्ध शलभासन

विधि

पेट के बल जमीन पर लेट जाइये तथा हथेलियों को जाँघों के नीचे रख लीजिए।

अब एक पैर को जमीन पर सीधा रखते हुए दूसरे पैर को जितना ऊपर उठा सकते हैं, उठाइये।

इसी स्थिति में कुछ देर रुकिये, फिर पैर को जमीन पर वापस ले आइये।

यही क्रिया दूसरे पैर से कीजिये।

श्वास

लेटी हुई अवस्था में श्वास अंदर।

पैर को ऊपर उठाते समय व अंतिम अवस्था में श्वास को अंदर रोकिये।

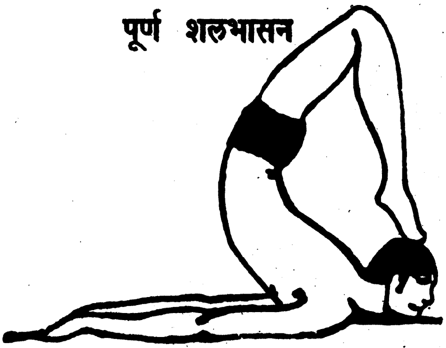
पूर्व स्थिति में वापस लौटते समय श्वास बाहर छोड़ दीजिये।

टिप्पणी

नये अभ्यासियों के लिए यह शलभासन का बहुत आसान तरीका है।

शेष सभी विवरण शलभासन के अनुसार ही हैं।

पूर्ण शलभासन



पूर्ण शलभासन

पूर्ण शलभासन

विधि

पैरों को जितना ऊपर उठा सकें, उठा कर अंतिम अवस्था में आ जायें। ठुड्डी, हाथों व कन्धों पर जोर देते हुए पैरों को झटके के साथ ऊपर ले जाने का प्रयत्न कीजिये और कोशिश कीजिये कि पैरों के अंगूठे सिर के पिछले भाग को छू लें।

यह अवस्था धीरे-धीरे शरीर को साधते हुए झटके के द्वारा पैरों को पीछे ले जाकर ३-४ बार में भी प्राप्त की जा सकती है। पैरों को हर बार इतना मोड़ना चाहिए कि वे पहली बार से अधिक ऊपर जायें।
अंतिम अवस्था में बिना कष्ट या तनाव के कुछ देर रुकें और तब सावधानी के साथ पूर्व स्थिति में वापस लौट आयें।

श्वास

शरीर को ऊपर ले जाते समय व नीचे लाते समय श्वास अन्दर।

आसन की अन्तिम अवस्था में श्वास बिल्कुल साधारण।

सीमाएँ

इस आसन का अभ्यास केवल उन्हीं व्यक्तियों के लिए है जो शारीरिक रूप से स्वस्थ हों तथा जिनकी पीठ या रीढ़ लचीली हो।

लाभ

शलभासन के अलावा शीर्षासन से प्राप्त होने वाले कुछ लाभ भी।



धनुरासन

धनुरासन

विधि

पैरों को घुटनों से मोड़िये और दोनों पैरों के टखनों को पकड़िये।

हाथों को सीधे रखते हुए पैरों के स्नायुओं को इस प्रकार खींचिये, मानो आप उन्हें नितम्बों से अलग ऊपर ले जा रहे हों। उसी समय जाँघों के साथ सिर और सीने को भी जमीन से जितना ऊपर ले जा सकें, ले जाने का प्रयत्न करें। इस अवस्था में आगे-पीछे झूलें।

श्वास

अन्तिम स्थिति में श्वास को अन्दर रोक कर रखिये।

आवृत्ति

इसे ५ बार दुहराइये।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : विशुद्धि चक्र पर।

शारीरिक : उदर संस्थान या पीठ पर ।

सीमाएँ

हर्निया, पेप्टिक अल्सर व आँत की बीमारी वाले इसे न करें।

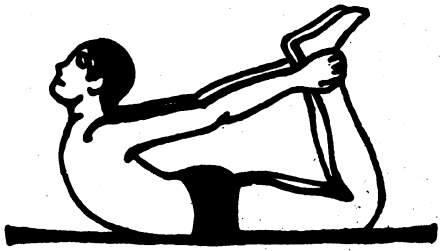
लाभ

कोष्ठबद्धता, मंदाग्नि, अजीर्ण, जिगर की कमजोरी दूर करता है।

चर्बी को हटाता तथा साइटिका नाड़ी पर दबाव डालता है।

उखड़ी हुई पसलियों व आँतों को सही स्थान पर लाता है।

सरल धनुरासन



सरल धनुरासन

सरल धनुरासन

विधि

धनुरासन की पूर्व स्थिति में आ जाइये और मुड़े हुए पैरों के टखनों को दोनों हाथों से पकड़ लीजिये।

पैरों को तानिये तथा सिर व सीने को जमीन से ऊपर उठाइये।

थोड़ी देर इसी स्थिति में रुकिये और फिर पूर्वावस्था में लौट आइये।

श्वास की स्थिति सामान्य हो जाने पर क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

श्वास

जमीन पर लेटी हुई अवस्था में सहज श्वास।

शरीर को ऊपर उठाने से पहले श्वास अन्दर।

अंतिम स्थिति में गहरी श्वास लीजिये; लौटते समय बाहर छोड़िये।

टिप्पणी

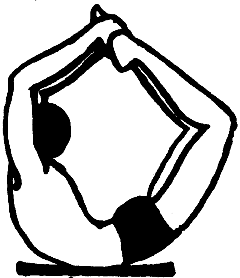
यह नये अभ्यासियों के लिए एक अच्छा आसन है। जिन व्यक्तियों की पीठ काफी कड़ी है और जो धनुरासन कर सकने में असमर्थ हैं, वे भी इस आसन को सरलतापूर्वक कर सकते हैं।

लाभ

इस आसन के भी वही लाभ हैं जो धनुरासन के हैं, किन्तु इसका असर उतनी तीव्रता से नहीं होता जितना कि धनुरासन से होता है।

शेष विवरण धनुरासन के समान ही है।

पूर्ण धनुरासन



पूर्ण धनुरासन

पूर्ण धनुरासन

विधि

प्रारम्भ की बिल्कुल उसी अवस्था में आ जाइये जिसमें धनुरासन करते हैं। अन्तर केवल इतना ही रहेगा कि पैरों के टखनों को पकड़ने के बदले पैरों के अंगूठों को पकड़ा जायेगा। हाथों से अंगूठों को पकड़ने का ढंग ऐसा होगा कि हाथों के अंगूठे पैरों के तलवों की तरफ रहें और अंगुलियाँ पैरों के पंजों पर रहें।

इसमें पैर, जाँघ, सीना व सिर अपेक्षाकृत अधिक ऊपर उठाये जाते हैं। शरीर को अधिक ऊपर उठाने के लिए हाथों को पहले तो बाजू में रखिये, फिर कन्धों से ऊपर ले जाइये।

श्वास

धनुरासन के अभ्यास में वर्णित श्वास के समान।

टिप्पणी

श्वास स्वाभाविक होने तक आसन को न दुहराया जाये।

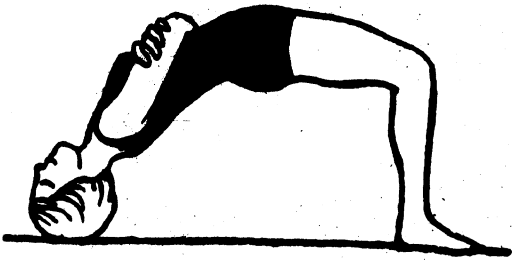
जिन अभ्यासियों की पीठ लचीली नहीं है, वे इसे न करें।

लाभ

इस आसन से भी वे सभी लाभ ज्यादा प्रभावशाली ढंग से होते हैं जो धनुरासन से होते हैं।

बाकी सभी विवरण वही रहेंगे जो धनुरासन के लिए दिये गये हैं।

ग्रीवासन



ग्रीवासन

ग्रीवासन

विधि

पीठ के बल इस प्रकार लेट जाइये कि आपके घुटने मुड़े हुए रहें।

हथेलियों व पंजों के सहारे धड़ को ऊपर उठाइये।

दोनों हाथों को कैंचीनुमा आकृति में अपने सीने के ऊपर रखिये।

श्वास

लेटी हुई अवस्था में श्वास अन्दर तथा लौटते हुए श्वास बाहर।

शरीर की उठी हुई स्थिति में श्वास अन्दर रोक कर रखें।

समय

श्वास रोक सकने तक इस आसन को करें।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : मणिपुर या विशुद्धि चक्र पर।

शारीरिक : गर्दन (चुल्लिका ग्रन्थि) या श्रोणि प्रदेश पर।

क्रम

इसे आगे की ओर झुक कर किये जाने वाले आसन के बाद करें।

सावधानी

इस बात का ध्यान रखिये कि आसन करते समय सिर के नीचे तह किया कम्बल अवश्य रहे ताकि सिर में किसी प्रकार की चोट न लगे।

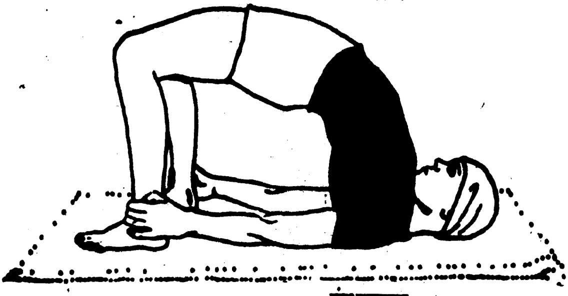
सीमाएँ

कमजोर गर्दन, उच्च रक्तचाप, अनियमित मासिक धर्म रहने पर न करें।

लाभ

ऊपरी कशेरुकाओं को समतल करता है एवं स्त्रियों के रोगों को दूर करता है। यह गर्दन की शिराओं व तन्तुओं को मजबूत करता है।

कंधरासन


कंधरासन

कंधरासन

विधि

घुटनों को नितम्बों के पास रखते हुए पीठ के बल लेट जाइये।

पैरों के टखनों को पकड़िए। नितम्बों को ऊपर उठाइये।

पैरों व कंधों को इधर-उधर मत सरकाइये।

शरीर को पैरों, कन्धों, गर्दन व हाथों पर साधे रखिये और इसी स्थिति में कुछ देर रुककर पूर्व स्थिति में वापस आ जाइये।

श्वास

इसे करते वक्त श्वास अन्दर रोककर रखिये।

आवृत्ति

साधारण अवस्था में १० बार कीजिये।

विशेष रोग में साधारण श्वास के साथ अंतिम अवस्था में रुकिये।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : विशुद्धि चक्र पर।

शारीरिक : उदर प्रदेश या चुल्लिका ग्रन्थि पर।

क्रम

इसे सामने की ओर झुकने वाले आसनों के बाद कीजिये।

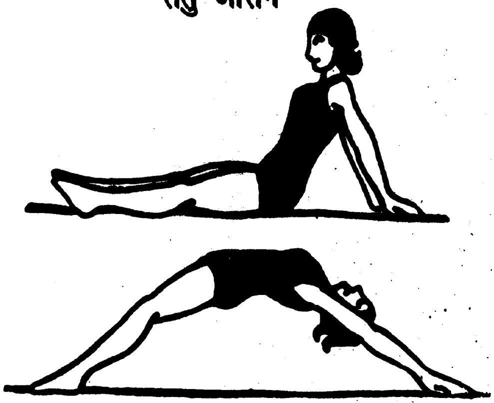
सीमाएँ

गर्भावस्था में न करें।

लाभ

अपने स्थान विशेष से खिसकी हुई हड्डी को बैठाने में तथा पीठ के दर्द, गोल कन्धों व गर्भपात के संदर्भ में बहुत ही लाभप्रद है।

सेतु आसन



सेतु आसन

सेतु आसन

विधि

हाथों के सहारे पैरों को सामने की ओर फैला कर बैठ जायें।

कुहनियाँ सीधी हों व शरीर का ऊपरी हिस्सा थोड़ा झुका रहे।

पूरे शरीर को ऊपर उठाते हुए सिर को पीछे झुकाइये।

पैरों की एड़ियाँ जमीन से चिपकी हुई तथा सीधी रहें।

वापस आ जाइये। ऐसा ही दस बार कीजिए।

श्वास

बैठी हुई अवस्था में श्वास अन्दर लीजिए।

शरीर को उठाते समय श्वास रोककर रखिये।

पूर्व स्थिति में वापस लौटते समय श्वास बाहर छोड़िये।

एकाग्रता

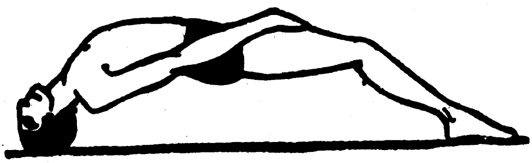
आध्यात्मिक : मणिपुर चक्र पर।

शारीरिक : पीठ और उदर पर।

समय

यह आसन मेरुदण्ड के निचले हिस्से व एड़ियों के स्नायुओं और मांसपेशियों को लाभ पहुँचाता है

शीर्ष पादासन



शीर्ष पादासन

शीर्ष पादासन

विधि

शवासन में चित लेट जाइये।

सारे शरीर की मांसपेशियों को खींचते हुए तथा पैरों को सीधे रखते हुए सारे शरीर को इस प्रकार ऊपर उठाइये कि पूरा शरीर केवल सिर के सबसे ऊपरी व पैरों के निचले हिस्से पर सधा रहे।

जब तक शरीर सध न जाये, हाथों को जमीन पर रखा जा सकता है। शरीर संतुलित हो जाने के बाद हाथों को जाँघों पर रख लें।

थोड़ी देर इसी स्थिति में ठहरिये, फिर वापस जमीन पर लौटिये।

श्वास

लेटी हुई अवस्था में श्वास लीजिए व वापस आते समय श्वास छोड़िये।

शरीर को ऊपर उठाते समय व अंतिम स्थिति में श्वास अंदर रोकिंये।

आवृत्ति

इसे ५ बार दुहराइये।

एकाग्रता

शरीर के संतुलन पर।

सावधानी

सिर के नीचे तह किया हुआ कंबल रखें।

सीमाएँ

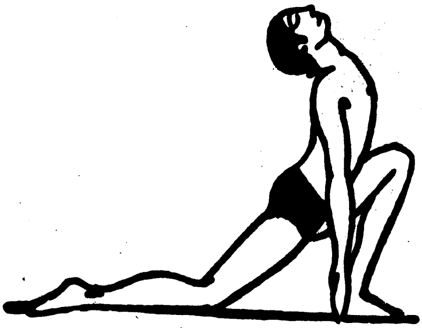
कमजोर हृदय वाले और उच्च रक्त-चाप से पीड़ित व्यक्ति न करें।

लाभ

यह आसन रीढ़ की मांसपेशियों को मजबूत तथा लचीला बनाता है। मेरुदण्ड के स्नायुओं और रक्त-शिराओं में ताजा रक्त पहुँचाता है। जाँघों, पेट व गर्दन की मांसपेशियों को स्वस्थ व मजबूत बनाता है।

यह शरीर को शिथिलीकरण व आराम देने के लिए उत्तम आसन है।

अर्ध चंद्रासन



अर्ध चंद्रासन

अर्ध चन्द्रासन

विधि

घुटनों पर खड़े हो जाइये। हाथ बगल में हों व पैर जुड़े रहे।

बायें पैर को आगे कीजिए। हाथों को बगल में रखिये।

दाहिने पैर को पीछे की ओर खींचते हुए गर्दन व पीठ पीछे झुकाइये। फिर वापस घुटनों पर खड़े हो जाइये। दायें पैर से दुहराइये।

श्वास

पीठ को मोड़ते समय श्वास लीजिये।

अन्तिम अवस्था में लौटते समय श्वास छोड़िये।

आवृत्ति

अधिक से अधिक ५ बार।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : विशुद्धि या स्वाधिष्ठान चक्र पर।

शारीरिक : पीठ या श्वास-प्रश्वास प्रक्रिया पर।

क्रम

सामने झुकने वाले किसी आसन के बाद।

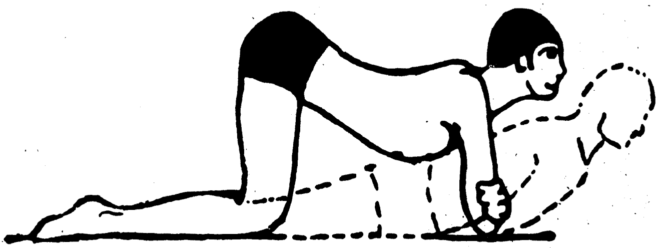
लाभ

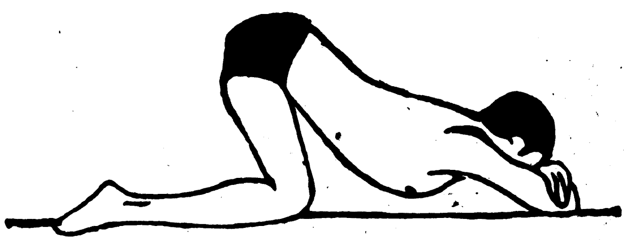
यह शरीर के पूरे ढाँचे को मजबूत व लचीला बनाता है।

प्रकारान्तर

इस आसन की अन्तिम स्थिति में हाथ सिर के ऊपर की ओर ले जाकर सिर को भी पीछे की ओर जितना झुका सकें, झुकाएँ।

उत्तान पृष्ठासन





उत्तान पृष्ठासन

उत्तान पृष्ठासन

विधि

पेट के बल लेट जाइये और हाथों को कैंचीनुमा आकृति में सीने के निचले भाग पर रखिये। भुजायें मजबूती से जकड़ी हुई रहें।

पैर तने हुए हों, मुँह सामने की ओर हो और सारे शरीर का वजन कुहनियों और उसके निचले भाग पर रहे।

आसन के समय कुहनियाँ अपने स्थान से हटनी नहीं चाहिए।

नितम्बों को ऊपर उठाइये और इसे हाथों व घुटनों पर साधिये।

उदर को खिंचा हुआ रखते हुए ठुड्डी व सीने को जमीन पर रखिये।

फिर उठी हुई अवस्था में लौट आइये।

श्वास

नितम्बों को उठाते समय श्वास अन्दर तथा नीचे लाते समय बाहर।

आवृत्ति

इसका अभ्यास अधिक से अधिक १० बार कीजिए।

एकाग्रता

पीठ के ऊपर।

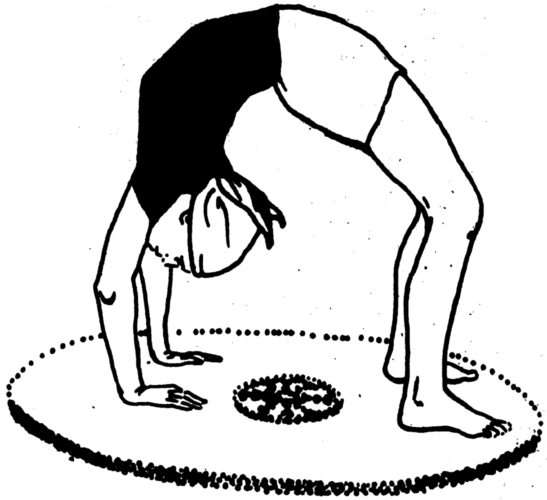
क्रम

आगे झुकने वाले किसी भी आसन के बाद।

लाभ

यह आसन सम्पूर्ण शारीरिक ढाँचे का अच्छा व्यायाम कराता है।

चक्रासन



चक्रासन

चक्रासन

विधि

पीठ के बल इस प्रकार लेट जाइये कि घुटने मुड़े हुए हों व एड़ियाँ नितम्बों को छूती रहें। दोनों पैरों में करीब एक फुट का अन्तर रहे। हथेलियों को जमीन पर कनपटियों के बगल से घुमाकर इस प्रकार रखिये कि अंगुलियों का अग्र भाग कंधों की ओर रहे।

धीरे-धीरे पूरे धड़ को ऊपर उठाइये। सिर को भी धीरे-धीरे सरकाते हुए इस स्थिति में आइए कि शरीर के ऊपरी हिस्से का भार सिर के सबसे ऊपरी हिस्से पर पड़े। इस समय घुटने समकोण की स्थिति में रहेंगे। अब हाथों व पैरों को सीधे करते हुए सिर और शरीर को पूरी गोलाई में ऊपर उठाइये। शरीर को ऊपर की ओर खींच कर घुटनों को भी सीधा किया जा सकता है।

पहले सिर पर सधी हुई स्थिति में; फिर चित लेटी हुई स्थिति में वापस लौट आइए।

इस आसन के अच्छी तरह सध जाने के बाद अभ्यासी को अंतिम स्थिति में दोनों हाथों व पैरों को नजदीक लाने का प्रयत्न करना चाहिए।

श्वास

साधारणतः चक्रासन का अभ्यास श्वास को अन्दर रोककर ही किया जाता है।

अनुभव और सफल अभ्यास के बाद चक्रासन की अन्तिम अवस्था में साधारण रूप से श्वास लेते हुए लंबे समय तक भी रुका जा सकता है।

समय

जितने लम्बे समय तक आप आरामदायक स्थिति में रह सकें।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : मणिपुर चक्र पर।

शारीरिक : पीठ, उदर या श्वास-प्रक्रिया पर।

क्रम

चक्रासन के पश्चात् आगे की ओर झुकने वाला आसन करना चाहिए।

सीमाएँ

उच्च रक्त-चाप, हृदय-रोग, पेट के आन्तरिक घाव, अस्वस्थ आँत, अस्थि-दोष, नेत्र-दोष या ऊँचा सुनने के रोगों से पीड़ित व्यक्तियों के लिए चक्रासन का अभ्यास वर्जित है।

अभ्यासी जब तक पीछे झुकने वाले अन्य साधारण अभ्यासों को करके पीछे की ओर आसानी से झुक सकने के आदी न हो जायें, तब तक इसे नहीं करना चाहिए।

लाभ

यह आसन शरीर की सभी नाड़ियों एवं ग्रंथियों के लिए लाभदायक है। यह रस-स्रावों को उचित ढंग से प्रभावित करता है तथा स्त्रियों के प्रजनन संबंधी कई रोगों का समूल नाश करता है।

यह पेट और पीठ की मांसपेशियों तथा उदर संस्थान के सभी अंगों के लिए लाभकारी है।

पृष्ठासन



पृष्ठासन

पृष्ठासन

विधि

पैरों में कम से कम १ फुट का अंतर रख कर सीधे खड़े हो जाइये।

हाथों को उठाते हुए शरीर को कमर से पीछे की ओर झुकाइये।

हाथों को घुमाकर पैरों के टखनों को पकड़ लीजिये।

सिर को पीछे झुकाइये और पीठ तथा सिर को जमीन के नजदीक लाने का प्रयत्न कीजिये। सीधे खड़े हो जाइये। इसी क्रिया को दुहराइये।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : मणिपुर चक्र पर।

शारीरिक : पीठ की मांसपेशियों को शिथिल करने में।

क्रम

इसके बाद आगे की ओर झुकने वाला आसन अवश्य करें।

सीमाएँ

उच्च-रक्तचाप, हृदय-विकार, पेट के अल्सर या पीठ के दोष में न करें।

लाभ

उदर संस्थान के स्नायुओं व मांसपेशियों को मजबूत बनाता है।

गोमुखासन



मोमुखासन

गोमुखासन

विधि

बायें पैर की एड़ी को दाहिने नितम्ब के समीप रखिये। दाहिने पैर को बायीं जाँघ के ऊपर रखिये। घुटने एक-दूसरे के ऊपर रहें।

बायें हाथ को पीठ के पीछे ले जाइये।

दाहिने हाथ को भी दाहिने कन्धे पर से पीछे ले जाइये। हाथों को परस्पर बाँध लीजिये। धड़ सीधा लम्बवत् रहे। नेत्रों को बन्द रखिये।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : आज्ञा चक्र पर।

शारीरिक एवं मानसिक : श्वसन-प्रक्रिया पर।

लाभ

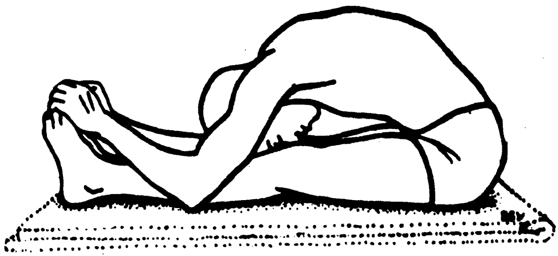
मधुमेह रोग, पीठ-दर्द, कंधों के कड़ेपन, ग्रीवा के दोष तथा लैंगिक-विकारों को दूर करने में मदद करता है। छाती को पुष्ट बनाता है। वृक्कों को उत्प्रेरित करता है तथा साइटिका को कम करता है।

आगे की ओर झुकने वाले आसन

आसनों का यह वर्ग मेरुदंड की समस्त रक्त-शिराओं, पीठ की मांसपेशियों व उदर-प्रदेश को दबाने, खींचने एवं उसकी भली-भाँति मालिश करने में बहुत उपयोगी एवं गुणकारी है। लचीला मेरुदंड स्वास्थ्य के लिये आवश्यक है। प्रायः यह देखा जाता है कि जिनके मेरुदंड लचीले और मुलायम होते हैं, वे उतने स्वस्थ व रोगमुक्त पाये जाते हैं। ठीक इसके विपरीत जिनकी मांसपेशियाँ व मेरुदंड कड़े और कठोर होते हैं, वे अनेक रोगों से ग्रस्त रहते हैं। अतः पीठ, रीढ़ या मेरुदंड का लचीला होना एक वरदान है। यह भी सर्वमान्य सत्य है कि जिन व्यक्तियों ने इन आसनों का अभ्यास किया है, उन्हें अपने जीवन में अनेक परिवर्तन दृष्टिगोचर हुए हैं। उनके स्वास्थ्य तथा स्वभाव में पहले से बहुत अधिक अन्तर आ गया है तथा उन्हें नव-जीवन मिला है। रोगी चिड़चिड़े व नीरस जीवन को छोड़कर अब स्वस्थ जीवन का उपभोग कर रहे हैं।

विशेषकर नये अभ्यासियों को जो शारीरिक परिश्रम की अपेक्षा बैठकर मानसिक परिश्रम अधिक करते हैं, उन्हें प्रारम्भ में कुछ कठिनाई महसूस होगी; परन्तु इन आसनों का नियमित अभ्यास करते रहने से मांसपेशियाँ व मेरुदण्ड लचीले हो जायेंगे। फिर आगे की ओर झुकने में किसी प्रकार का कष्ट नहीं होगा। शरीर में विशेष स्फूर्ति व ताजगी का अनुभव होने लगेगा। इन अभ्यासों के बाद कठिन से कठिन आसनों को करने के लिए शरीर को रबर की तरह किसी ओर भी मोड़ा जा सकता है। उचित लाभ हेतु एक तरफ झुकने वाले आसन के बाद उसके विपरीत ओर झुकने वाला आसन करना चाहिए। आसनों के अभ्यास के लिए कुछ आसनों का चयन कर लेना चाहिए और उन्हें एक-दो सप्ताह नियमित रूप से कर लेने के बाद क्रमशः कठिन अभ्यासों की ओर बढ़ना चाहिए।

पश्चिमोत्तानासन



पश्चिमोत्तानासन

पश्चिमोत्तानासन

विधि

हथेलियों को जाँघों पर रखते हुए पैरों को सामने की ओर फैलाकर बैठ जाइये।

शरीर को धीरे-धीरे आगे की ओर झुकाइये।

पैरों के अंगूठों को पकड़ने का प्रयत्न कीजिए। यदि संभव न हो तो टखनों को पकड़िये।

माथे से घुटनों को स्पर्श करने का प्रयत्न कीजिए।

नये अभ्यासी शुरू में केवल उतना ही झुकें, जितना वे आराम से झुक सकें।

किसी भी हालत में शरीर पर जोर मत डालें।

अंतिम स्थिति में जितनी देर आराम से रह सकें, रहिये।

तत्पश्चात् शरीर को ढीला करते हुए पहले की स्थिति में लौट आइये।

टिप्पणी

अभ्यास के दौरान घुटने नहीं मोड़ने चाहिए।

श्वास

आगे झुकते समय श्वास बाहर छोड़िये।

समय

जितनी देर रुक सकें।

आध्यात्मिक लाभ के लिए अधिक देर तक रुका जा सकता है।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : स्वाधिष्ठान चक्र पर।

शारीरिक और मानसिक : उदर या पीठ की मांसपेशियों पर या श्वास पर।

सीमाएँ

साइटिका, जोड़ों के दीर्घकालिक दर्द, पीठ-दर्द या उदर-रोग में न करें।

क्रम

इसे पीछे की ओर झुक कर किये जाने वाले आसन के बाद करें।

लाभ

कमर एवं नितम्बों की मांसपेशियों को स्वस्थ करता है।

पेट की अनावश्यक चर्बी को कम करता है।

मोटापे, कोष्ठबद्धता, कब्ज आदि से छुटकारा दिलाता है।

उदर-संस्थान के सभी अंगों पर विशेष दबाव डालता है व इस भाग की सभी बीमारियों जैसे मधुमेह आदि को अच्छा करता है तथा गुर्दों, जिगर, क्लोम व उपवृक्क ग्रन्थि को क्रियाशील बनाता है।

कटि प्रदेश के सभी अंगों पर दबाव डालता है व उन्हें हल्का करता है, इसलिए यह स्त्रियों के प्रजनन अंगों के रोगों को दूर करने में विशेष रूप से लाभदायक है।

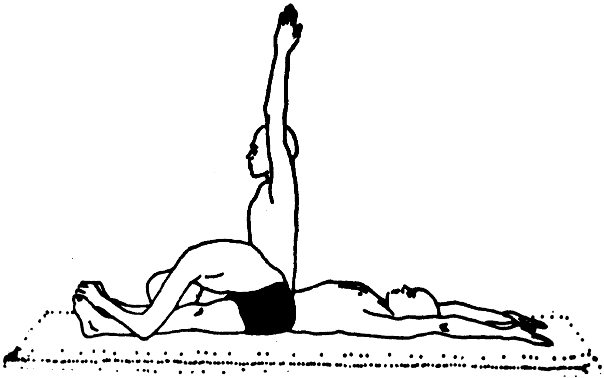
रीढ़ की नसों व मांसपेशियों में नये ताजे रक्त का संचार करता है।

पीठ के हर प्रकार के दर्द को दूर करता है।

यह आसन मस्तिष्क की नाड़ियों पर आश्चर्यजनक प्रभाव डालता है और मस्तिष्क के समस्त तनावों को दूर कर मानसिक सन्तुलन बनाये रखने में विशेष उपयोगी है।

परम्परागत रूप से आध्यात्मिक लाभ के लिए यह एक बहुत ही शक्तिशाली आसन माना गया है और योग-संबंधी सभी प्राचीन ग्रंथों में इसको अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

गत्यात्मक पश्चिमोत्तानासन



गत्यात्मक पश्चिमोत्तानासन

गत्यात्मक पश्चिमोत्तानासन

विधि

हाथों को पीछे की ओर फैलाकर जमीन पर चित लेट जाइये।

पूरे शरीर को ढीला छोड़ दीजिये। ऊपरी धड़ को उठाते हुए बैठने की स्थिति में आइये। दोनों हाथ सिर के ऊपर रहेंगे।

आगे की ओर झुकिये।

अंतिम स्थिति में थोड़ी देर रुकिये और पुनः वापस लौट आइये।

इसी क्रिया की कुछ आवृत्तियाँ कीजिए।

श्वास

लेटी हुई स्थिति में श्वास साधारण।

बैठते समय श्वास अन्दर व झुकते समय श्वास बाहर।

एकाग्रता

शरीर को साधने या श्वास-प्रक्रिया पर।

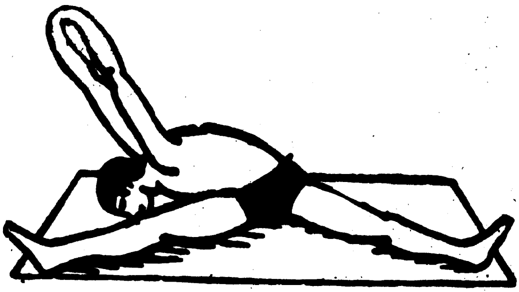
आवृत्ति

अधिक से अधिक १० बार कीजिए।

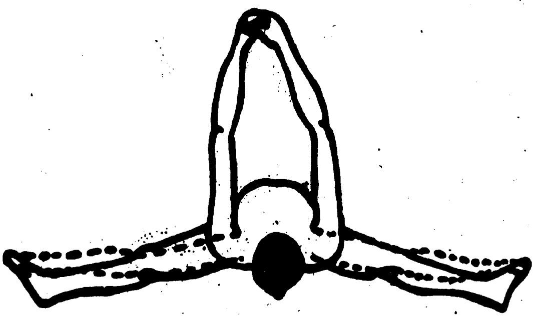
लाभ

पश्चिमोत्तानासन के समान ही।

पाद प्रसार पश्चिमोत्तानासन



पाद प्रसार पश्चिमोत्तानासन (१)



पाद प्रसार पश्चिमोत्तानासन (२)

पाद प्रसार पश्चिमोत्तानासन १

विधि

पैरों को सामने की ओर जितना फैला सकें, फैलाकर बैठ जाइये।

हाथों को पीछे की ओर ले जाकर अंगुलियों को फँसाकर बाँध लीजिए।

अब हाथों को पीछे की ओर ऊपर उठाते हुए धड़ को दाहिनी ओर झुकाइये।

दाहिने घुटने को नाक से छूने का प्रयत्न कीजिये।

धड़ को उठाइये और बैठी हुई पूर्व स्थिति में वापस आ जाइये।

इसी प्रकार दूसरी ओर से भी कीजिए।

पाद प्रसार पश्चिमोत्तानासन २

विधि

सामने पैर फैलाकर व हाथों को पीछे की ओर फँसाकर बैठ जाइये।

धड़ को नीचे झुकाते हुए तथा हाथों को ऊपर उठाते हुए नाक से दोनों घुटनों के बीच की जमीन को छूने का प्रयत्न कीजिये ।

धड़ को ऊपर उठाकर पूर्व स्थिति में लौटिये।

पाद प्रसार पश्चिमोत्तानासन ३

विधि

ऊपर दी हुई विधि के अनुसार बैठ जाइये, लेकिन हाथों को पीछे मत ले जाइये।

हाथों को सामने की ओर लाकर पैरों के दोनों अंगूठों को पकड़िये तथा दोनों घुटनों के बीच की जमीन को माथे से स्पर्श करने का प्रयत्न कीजिये। घुटनों को नहीं मोड़िये।

श्वास

बैठी हुई अवस्था में स्वाभाविक रूप से श्वास लीजिये।

सामने की ओर झुकते समय, अंतिम स्थिति में पहुँचकर एवं वापस लौटते समय श्वास को अन्दर ही रोककर रखिये।

आवृत्ति

५ बार तक कीजिये।

क्रम

इस आसन के बाद पीछे की ओर झुकने वाला आसन कीजिये।

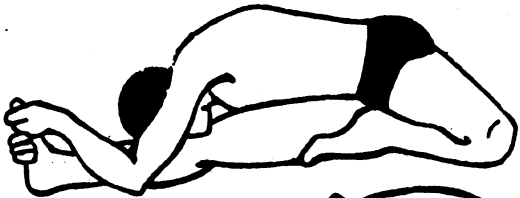
सीमाएँ

साइटिका, पीठ के दर्द, जोड़ों की सूजन या उदरस्थ रोगों से ग्रसित व्यक्तियों को यह आसन नहीं करना चाहिए।

लाभ

इस आसन से भी करीब-करीब वे सभी लाभ हैं जो पश्चिमोत्तानासन से होते हैं।

जानु शिरासन व अर्ध पद्म पश्चिमोत्तानासन



जानु शिरासन



अर्ध पद्म पश्चिमोत्तानासन

जानु शिरासन

विधि

सामने की ओर पैर फैलाकर बैठ जाइये।

बायें पैर को मोड़िये और इस प्रकार रखिये कि एड़ी पेरेनियम से छूती रहे व पंजा दायें पैर की जाँघ से सटा हुआ रहे।

आगे की ओर झुकिये व पैर के अंगूठे को पकड़ने का प्रयत्न कीजिये। धड़ को इतना आगे झुकाइये कि माथा घुटने से छूने लगे।

थोड़ी देर इस स्थिति में रुककर पूर्व स्थिति में वापस आइये।

इसी क्रिया को दूसरा पैर मोड़कर कीजिये।

श्वास

आगे की ओर झुकते समय श्वास छोड़िये।

यदि अन्तिम स्थिति में थोड़ी देर रुकते हैं तो श्वास रोकिये।

अर्ध पद्म पश्चिमोत्तानासन

विधि

जानु शिरासन में बतलाई गयी विधि के अनुसार दायें पैर को सामने की ओर फैलाकर तथा बायें पैर का पंजा दायें पैर की जाँघ पर रखकर बैठ जाइये। जानु शिरासन की क्रिया दुहराइये।

यदि हो सके तो बायें हाथ को पीठ के पीछे से घुमाकर बायें पैर को पकड़िये। शेष सभी विवरण जानु शिरासन के अनुसार ही होंगे।

शीर्ष अंगुष्ठ योगासन



शीर्ष अंगुष्ठ योगासन

शीर्ष अंगुष्ठ योगासन

विधि

हाथों को पीछे बाँधकर पैरों में २ या ३ फुट का अंतर रखकर खड़े हो जाइये। ऊपरी धड़ को बायीं ओर मोड़िये। शरीर को कमर से नीचे की ओर झुकाइये तथा हाथों को ऊपर की ओर जाने दीजिए। नाक को पैर के अंगूठे से स्पर्श कराने का प्रयत्न कीजिये।

इस स्थिति में आने के लिए आपको बायाँ पैर कुछ झुकाना पड़ेगा। धड़ को ऊपर उठाते हुए पूर्व स्थिति में वापस लौट आइये।

श्वास

खड़ी हुई स्थिति में श्वास अन्दर लीजिये।

झुकते व लौटते समय श्वास अंदर ही रोकिये।

पूर्व स्थिति में लौटकर श्वास बाहर छोड़िये।

आवृत्ति

शरीर के दोनों ओर से पाँच-पाँच बार कीजिये।

सीमाएँ

स्लिप डिस्क या पीठ की किसी अन्य समस्या वाले इसे न करें।

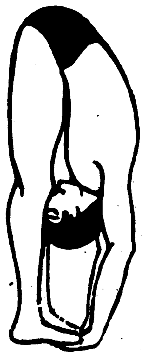
लाभ

यह पैर के निचले प्रदेश व मेरुदण्ड की मांसपेशियों को खींचता है।

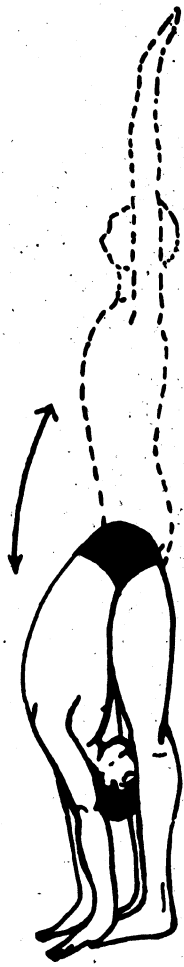
सम्पूर्ण नाड़ी-संस्थान को उत्तेजित कर अधिक क्रियाशील बनाता है।

उदर-सम्बन्धी दोषों तथा कोष्ठबद्धता को दूर करता है।

पाद हस्तासन



पाद हस्तासन



पाद हस्तासन

विधि

हाथों को बाजू में रखकर सीधे खड़े हो जाइये।

आगे झुकिए।

अंगुलियों को पंजों के नीचे दबाने या हथेलियों को जमीन पर रखने का प्रयत्न कीजिए।

यदि ऐसा न कर सकें तो अंगुलियों को जमीन के जितना हो सके, नजदीक लाइये।

सिर को घुटनों से लगाने का प्रयत्न कीजिये।

पूर्व स्थिति में वापस आइए।

इसी क्रिया को फिर दुहराइये।

टिप्पणी

आसन के दौरान पैरों को सीधा रखिये। अनावश्यक जोर न लगाइये।

श्वास

आगे की ओर झुकते समय श्वास छोड़िये।

अन्तिम अवस्था में धीरे-धीरे गहरी श्वास लीजिये।

श्वास लेते हुए वापस लौटिए।

समय

अन्तिम अवस्था में एक या दो मिनट तक रुका जा सकता है।

एकाग्रता

पीठ की मांसपेशियों को शिथिल करने में।

गत्यात्मक पाद हस्तासन

विधि

सीधे खड़े हो जाइये। हाथों को ताड़ासन की तरह ऊपर तानिए।

फिर नीचे झुककर अंगुलियों से जमीन को छूने का प्रयत्न कीजिए।

कुछ देर रुकिए, फिर पूर्व अवस्था में वापस लौट आइये।

श्वास

झुकते हुए श्वास बाहर छोड़िए।

झुकी हुई अवस्था में श्वास रोके रहिये।

ऊपर उठते हुए श्वास लीजिए।

आवृत्ति

जितनी बार आप सहज रूप से कर सकें, कीजिए।

सीमाएँ

पीठ के रोगों से पीड़ित व्यक्तियों को यह आसन नहीं करना चाहिए

लाभ

चर्बी कम कर मोटापा दूर करता है।

उदर-संबंधी सभी रोगों को दूर करता है।

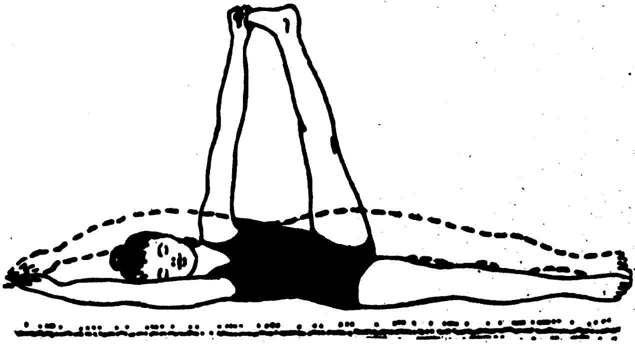
मेरुदण्ड व उससे संबंधित मांसपेशियों को ढीला और लचीला बनाकर रीढ़ की सभी रक्त-शिराओं को उत्तेजित तथा साफ करता है।

प्रजनन अंगों पर अच्छा प्रभाव डालता है व उनके समस्त विकारों को दूर करता है। गर्भाशय की स्थिति को ठीक करता है।

चेहरे और मस्तिष्क की ओर रक्त को अच्छी तरह प्रवाहित करता है।

सारे शरीर के दूषित विकारों को निष्कासित कर रोग-मुक्त करता है।

हस्त पाद अंगुष्ठासन



हस्त पाद अंगुष्ठासन

हस्त पाद अंगुष्ठासन

विधि

बायीं ओर लेट जाइये। दोनों हाथ सिर की ओर तने रहें।

दाहिना पैर बायें पैर पर तथा दाहिनी हथेली बायीं हथेली पर रहे।

दाहिने पैर एवं हाथ को धीरे-धीरे उठाइये जब तक कि वे जमीन से ४५ अंश का कोण न बना लें। शरीर कहीं से भी झुकने न पाये।

अब पुनः उन्हें पूर्व स्थिति में ले आइये। पुनः उसी पैर एवं हाथ को उठाइये। घुटने को बिना झुकाये ही हाथ से पैर के अंगूठे को पकड़िये।

पुनः धीरे-धीरे उन्हें पूर्व स्थिति में ले आइये।

दूसरी ओर लेटकर बायें पैर एवं हाथ से इसी की आवृत्ति कीजिये।

प्रत्येक ओर अधिक से अधिक १० बार अभ्यास कीजिये।

श्वास

पैर को उठाते समय पूरक (श्वास लेना) तथा झुकाते समय रेचक (श्वास छोड़ना) कीजिये।

एकाग्रता

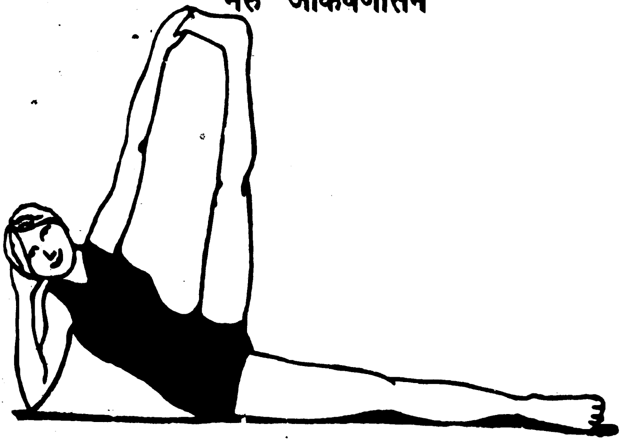
शारीरिक हलचल पर।

लाभ

नितम्बों के जोड़ों को लचीला बनाता है एवं चर्बी को दूर करता है।

युवतियों के लिए विशेष लाभप्रद है।

मेरु आकर्षणासन



मेरु आकर्षणासन

मेरु आकर्षणासन

विधि

दाहिनी ओर लेट जाइये। बायाँ पैर दाहिने पैर पर रहे।

सिर तथा ऊपरी धड़ को दायीं केहुनी के सहारे उठाइये।

धीरे-धीरे बाएँ पैर को उठाइये; जितना आप उठा सकें।

बायें हाथ से धीरे-धीरे बायें पैर के सामने के भाग को पकड़िये।

श्वास

हाथ एवं पैर को उठाते समय श्वास लीजिये।

उन्हें नीचे लाते समय श्वास छोड़िये।

एकाग्रता

शारीरिक गतिविधियों पर।

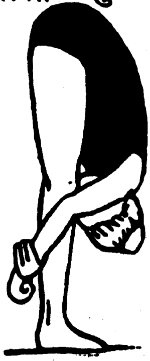
लाभ

जाँघों एवं उदर-प्रदेश की मांसपेशियों को शिथिल करता है।

बाजू की मांसपेशियों का व्यायाम कराता है।

नितम्बों एवं जाँघों की चर्बी को दूर करने के लिए लाभप्रद है।

उत्थित जानु शिरासन



उत्थित जानु शिरासन

उत्थित जानु शिरासन

विधि

दोनों पैरों के मध्य २ या ३ फुट की दूरी रखकर खड़े हो जाइये। सामने झुकिये। पैरों के पीछे से दोनों हाथों को बाँध लीजिये।

दोनों घुटनों के मध्य सिर को लाने का प्रयत्न कीजिए। पैर सीधे रहें।

श्वास

झुकने के पूर्व लम्बी श्वास लेकर श्वास छोड़िये।

झुकी अवस्था में बहिर्कुम्भक (श्वास बाहर रोकना) कीजिये।

सीधी अवस्था में वापस आने पर पूरक (श्वास लेना) कीजिये।

आवृत्ति

अधिक से अधिक ५ बार करें।

सीमाएँ

स्लिप डिस्क, हड्डियों के दीर्घकालीन दर्द, साइटिका आदि में न करें।

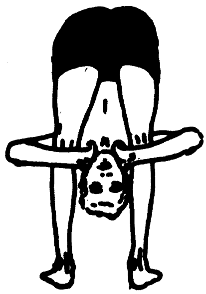
लाभ

क्लोम को उत्तेजित करता है।

नितम्बों के जोड़ों और जाँघों की मांसपेशियों को शिथिल करता है।

मेरुदण्ड से सम्बन्धित नाड़ियों की मालिश करता है।

शरीर में रक्त प्रवाहित कर थकावट व आलस दूर करता है।



उत्थित जानु शिरासन (प्रकारान्तर)

उत्थित जानु शिरासन (प्रकारान्तर)

विधि

पैरों को एक-दूसरे से करीब २-३ फुट की दूरी पर रखकर खड़े हो जाइये। शरीर सीधा रहे।

घुटनों से पैरों को कुछ सामने की ओर मोड़िये।

हाथों को पैरों के पीछे से लपेटिये। दोनों हाथ आड़ी स्थिति में (भूमि के समानांतर) रहें तथा केहुनियाँ बाहर की ओर रहें।

सिर को आगे पैरों के मध्य में लाने का प्रयास कीजिये। सिर के पृष्ठ भाग को हाथों से पकड़िये। घुटने मुड़े ही रहें।

सजगतापूर्वक पीठ की मांसपेशियों को शिथिल कीजिये।

धीरे-धीरे पैरों को सीधा कीजिये। हाथ सिर के पीछे ही रहें। तनाव न डालिये। अंतिम स्थिति में कुछ देर रुककर लौट आइये।

श्वास

पैरों को सीधा करते समय रेचक कीजिये। अंतिम अवस्था में कुम्भक लगाइये या स्वाभाविक श्वसन-क्रिया कीजिये। यह इस बात पर निर्भर है कि आप इस अवस्था में कितनी देर रहते हैं।

पुनः पैरों को मोड़कर जब आप आराम की अवस्था में आयें तो पूरक कीजिये।

टिप्पणी

शेष वर्णन सामान्य उत्थित जानु शिरासन की भाँति ही हैं।

एक पाद पद्मोत्तानासन



एक पाद पद्मोत्तानासन

एक पाद पद्मोत्तानासन

विधि

पैरों को सामने फैलाकर बैठ जाइये।

दाहिने पैर को मोड़िये। दाहिने पैर को पेरेनियम के नीचे रखिये।

बायें तलवे के नीचे दोनों हाथों को बाँध लीजिये।

बायें पैर को उठाइये। घुटने को सीधा तानिये।

बायें घुटने को अपनी नासिका तक लाइये।

श्वास

बैठे हुए पूरक कीजिये।

पैर को उठाते एवं नीचे करते समय श्वास को रोककर रखिये।

पुनः बैठी हुई अवस्था में आने पर रेचक कीजिये।

लाभ

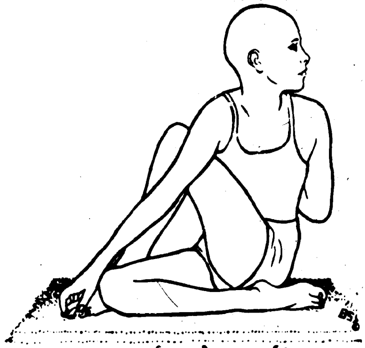
नितम्बों के जोड़ों एवं पैरों की मांसपेशियों को शिथिल करता है।

मेरुदण्ड मोड़कर किये जाने वाले आसन

इस वर्ग के अन्तर्गत आने वाले आसन सामने या पीछे झुककर किये जाने वाले आसनों के पूरक हैं। आसनों के प्रत्येक कार्यक्रम में इस वर्ग के कम से कम एक आसन को अवश्य ही सम्मिलित किया जाना चाहिए। पीठ के तनावों को बड़े ही प्रभावशाली ढंग से ये आसन दूर करते हैं। इन आसनों के अभ्यास में मेरुदण्ड एवं कमर को मोड़ने से मेरुदण्ड लचीला बनता है तथा सम्बन्धित मांसपेशियाँ और नाड़ियाँ क्रमशः शिथिल और अपेक्षाकृत क्रियाशील बनती हैं। अभ्यास काल में शरीर एक ओर तथा दूसरी ओर मुड़ता है तथा उदरस्थ अंगों में आकुंचन एवं संकुचन होता है। परिणामस्वरूप इन अंगों पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है।

प्रारम्भिक अभ्यासी इस बात का ध्यान रखें कि शरीर को उतना ही मोड़ें जितना वे आसानी से मोड़ सकें। शरीर के लचीलेपन के परिमाण में ही उसे मोड़ें। कुछ ही हफ़्तों के नियमित अभ्यास से मांसपेशियों में अधिक लचीलापन आता जायेगा तो शरीर शनैः शनैः अधिक मुड़ने लगेगा। इसके लिए धैर्यपूर्वक नियमित अभ्यास की आवश्यकता है। किसी प्रकार की शारीरिक क्षति न होने पाये। इस प्रकार स्वास्थ्य एवं शारीरिक शक्ति की प्राप्ति कुछ ही प्रयास से हो जाती है।

अर्ध मत्स्येन्द्रासन



अर्ध मत्स्येन्द्रासन

अर्ध मत्स्येन्द्रासन

विधि

सामने की ओर पैरों को फैलाकर बैठ जाइये।

दाहिने पैर को सीधा जमीन पर बायें घुटने के बाहर की ओर रखिये।

बायें पैर को दाहिनी ओर मोड़िये। एंड़ी दाहिने नितम्ब के पास रहे।

बायें हाथ को दाहिने पैर के बाहर की ओर रखिये तथा दाहिने पैर या टखने को पकड़िये।

दाहिना घुटना बायीं भुजा के अधिक से अधिक समीप रहे।

दाहिना हाथ पीछे की ओर रखिये। शरीर को दाहिनी ओर मोड़िये।

ग्रीवा एवं पीठ को अधिक से अधिक मोड़ने का प्रयास कीजिये।

कुछ देर इस अवस्था में रहकर धीरे-धीरे पूर्व स्थिति में आ जाइये।

यही क्रिया विपरीत दिशा में कीजिये।

श्वास

कमर को मोड़ते समय रेचक कीजिए।

अंतिम अवस्था में गहरी श्वास खींचकर पूरक कीजिये।
पूर्व स्थिति में आते समय रेचक कीजिए।

टिप्पणी

यह अत्यधिक महत्वपूर्ण आसन है। दिन में कम से कम एक बार इसका अभ्यास अवश्य कीजिये।

बड़े आंसनों के वर्ग में 'पूर्ण मत्स्येन्द्रासन' का यह सरल रूप है।

समय

प्रीठ की मांसपेशियाँ पर्याप्त लचीली हो जाने पर प्रत्येक ओर कम से कम एक मिनट तक इस आसन में स्थिर रहिये।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : आज्ञा चक्र पर।

भौतिक : अंतिम स्थिति में श्वास पर।

लाभ

पीठ की मांसपेशियों की मालिश करता है, नाड़ियों को शक्ति प्रदान करता है व मेरुदंड को लचीला बनाता है।

उदर-प्रदेश के अंगों की मालिश कर पाचन-संबंधी रोगों को दूर करता है।

उपवृक्क ग्रंथियों की क्रिया को नियमित कर उनके रस-स्राव के कार्यों को व्यवस्थित करता है।

क्लोम ग्रंथि को क्रियाशील बनाता है। अतः मधुमेह रोग के प्रकोप को कम करता है।

वात की शिकायत को दूर करंमे में मदद करता है। स्लिप डिस्क की प्रारंभिक अवस्था के उपचार में उपयोगी है।

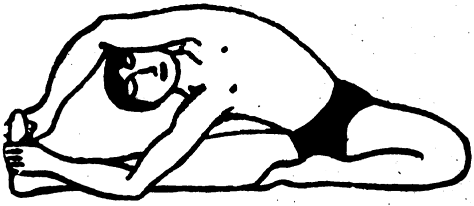
पीठ में स्थित अनेक नाड़ियों का शक्तिदाता है।

सम्पूर्ण शरीर में फैली हुई मस्तिष्क से संबंधित नाड़ियों को शक्तिशाली और स्वस्थ बनाता है। इस प्रकार समस्त नाड़ी-संस्थान पर अच्छा प्रभाव डालता है।

प्रारम्भिक अभ्यातियों के लिए सरल रूप

यदि शरीर में कड़ापन हो तथा आसन का अभ्यास असंभव हो तो अभ्यासी पैर को मोड़कर नितम्ब के समीप न रखे वरन् उस पैर को सीधा ही रहने दें। शेष क्रिया अर्ध मत्स्येन्द्रासन की भाँति ही रहेगी। जब शरीर में लचीलापन आ जाये तो उचित विधिपूर्वक ही आसन का अभ्यास किया जाना चाहिए ताकि उसका पूरा लाभ मिल सके।

परिवृत्ति जानुशिरासन



परिवृत्ति जानुशिरासन

परिवृत्ति जानुशिरासन

विधि

पैरों को जमीन पर फैला लीजिये।

बायें पैर को मोड़कर एड़ी को पेरेनियम के समीप रखिये।

कमर को दाहिनी ओर झुकाइये।

दाहिने हाथ से दाहिने पैर को पकड़िये। केहुनी इस पैर के भीतर की ओर रहे।

बायें हाथ को सिर के ऊपर से लाकर दाहिने पैर की अंगुलियों को पकड़ें। भुजाओं को संकुचित कर दाहिने कन्धे को दाहिने पैर की ओर लाने का प्रयत्न कीजिये।

सिर को बायें हाथ के नीचे आरामदायक स्थिति में रखिये।

कमर को बिना किसी तनाव के अधिक से अधिक झुकायें।

छत की ओर दृष्टि कीजिये।

श्वास

शरीर को बगल में झुकाते समय रेचक कीजिये।

आसन की अंतिम स्थिति में स्वाभाविक श्वास रहेगी।

सीमाएँ

गर्भवती महिलाओं के लिए वर्जित है।

पीठ की तकलीफ से पीड़ित व्यक्ति इसका अभ्यास न करें।

लाभ

पश्चिमोत्तानासन के सब लाभ प्रदान करता है। साथ ही उदर के दोनों तरफ के अंगों तथा फेफड़ों सहित छाती का आकुंचन-संकुचन करता है। अर्ध मत्स्येन्द्रासन से दुगुना लाभ प्रदान करता है।

मेरु वक्रासन



मेरु वक्रासन

मेरु वक्रासन

विधि

पैरों को सीधे सामने फैलाकर बैठ जाइये। नितम्बों के पीछे दोनों ओर दोनों हाथों को बाजू में रखिये।

हाथों की अंगुलियाँ बाहर की ओर खुली रहें। बायें हाथ को दाहिनी ओर दाहिने हाथ के बगल में और बाएँ पैर को दाहिने घुटने के समीप बाहर की ओर लाएँ। दाहिने हाथ को कुछ पीछे की ओर ले जाइये। सिर और कमर दाहिनी ओर मोड़िये। दोनों ओर १० बार कीजिये।

श्वास

शरीर को मोड़ने के पूर्व पूरक कीजिए।

मोड़ते समय कुंभक लगाइये।

पूर्व स्थिति में आने पर रेचक कीजिए।

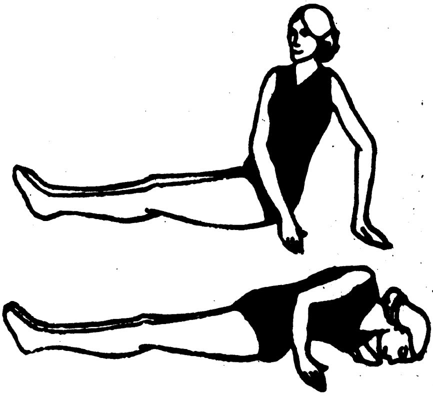
एकाग्रता

पीठ की मांसपेशियों के शिथिलीकरण पर।

लाभ

मेरुदण्ड का व्यायाम कराकर उसे अर्ध मत्स्येन्द्रासन के लिए तैयार करता है। सामान्य पीठ दर्द के लिए भी उपयोगी है।

भू नमनासन



प्रथम स्थिति

द्वितीय स्थिति

भू नमनासन

भू नमनासन

विधि

पैरों को सामने सीधे फैलाकर बैठ जाइयें। मेरुदण्ड सीधा रहे।

दोनों हाथों को बायें नितम्ब के बाजू में रखिये।

ऊपरी धड़ बायीं ओर ९० अंश पर मोड़िये; नितम्ब न उठने पायें।

शरीर को झुकाकर नासिका से भूमि को स्पर्श कीजिये।

कमर तथा मुख को सीधे कर प्रारम्भिक स्थिति में आ जाइये।

श्वास

प्रारम्भिक स्थिति में श्वास लीजिये।
झुकते समय श्वास छोड़िये।

आवृत्ति

प्रत्येक ओर अधिक से अधिक १० बार अभ्यास कीजिये।

एकाग्रता

पृष्ठ प्रदेश की मांसपेशियों के शिथिलीकरण या श्वास-प्रक्रिया पर।

लाभ

यह आसन मेरुदण्ड तथा पीठ के निम्न प्रदेश का व्यायाम कराता है।

पीठ की मांसपेशियों तथा नाड़ियों को क्रियाशील बनाता है।

सिर के बल किये जाने वाले आसन

यह महत्वपूर्ण आसनों का समुदाय है। इस वर्ग के अन्तर्गत ऐसे आसन सम्मिलित हैं जो मस्तिष्क एवं सम्पूर्ण शरीर को लाभ प्रदान करते हैं। परन्तु आवश्यकता इस बात की है कि इनका अभ्यास उचित परिस्थिति में विधिपूर्वक किया जाये। विपरीत परिस्थिति में इनके अभ्यास से लाभार्जन नहीं किया जा सकता या बहुत ही अल्प मात्रा में लाभ की प्राप्ति होती है या अभ्यासी को हानि भी पहुँच सकती है।

सिर के बल किये जाने वाले आसन मस्तिष्क में उचित मात्रा में रक्त-प्रवाह करते हैं। परिणामतः असंख्य नाड़ी-तन्तुओं को शक्ति प्राप्त होती है एवं मस्तिष्क के विषैले पदार्थों का निष्कासन होता है। सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त विषाक्त द्रव्य शरीर के बाहर निकल जाते हैं। समस्त अंग, मांसपेशियाँ, नाड़ियाँ आदि अधिकतम मात्रा में क्रियाशील बन जाते हैं; अतः सम्पूर्ण शरीर की क्रियाशीलता में वृद्धि होती है। शरीर को नियंत्रित करने वाले अंगों की कार्य-क्षमता में वृद्धि होती है। सोचने-विचारने की शक्ति व एकाग्रता बढ़ जाती है। बिना तनाव के अधिक कार्य करने की क्षमता आ जाती है। इन आसनों के नियमित अभ्यास से चिंता, मानसिक तनाव या विकार पूर्णतः दूर भले ही न हों, लेकिन कम अवश्य ही हो जाते हैं। पर्याप्त मात्रा में मस्तिष्क में रक्त पहुँचने से अंतःस्रावी ग्रंथि-संस्थान की प्रमुख 'पीयूष ग्रंथि' की कार्य क्षमता अपेक्षाकृत बढ़ जाती है। इसका प्रभाव हमारी विचार प्रणाली, समस्त शरीर एवं व्यक्तित्व पर पड़ता है। इस प्रकार इनसे पूर्ण शरीर को लाभ मिलता है।

इन आसनों के अभ्यास से पैरों तथा उदर प्रदेश में एकत्रित रक्त का बहाव वापस छाती की ओर हो जाता है। तत्पश्चात् यह रक्त फेफड़ों में भेज दिया जाता है जहाँ ऑक्सीजन ग्रहण कर कार्बन डाइ ऑक्साइड का निष्कासन कर दिया जाता है। शुद्ध किया हुआ यह रक्त पुनः शरीर के विभिन्न अंगों में भेज दिया जाता है। इनसे शरीर का निर्माण करने वाले कोषों का पोषण होता है।

सिर के बल किये जाने वाले आसनों की नियमावली

(१) भोजनोपरांत कम से कम तीन घंटे तक इन आसनों का अभ्यास मत कीजिये।

(२) कठिन व्यायाम के तुरंत बाद इनका अभ्यास न कीजिये। कम से कम आधा घण्टा रुकिये ताकि रक्त के विषाक्त द्रव का निष्कासन मांसपेशियों से पूर्णतः हो जाये।

(३) रक्त को अशुद्ध करने वाली बीमारी में अभ्यास न किया जाये। रक्त-शुद्धिकरण तक अभ्यास वर्जित है। रक्त की शुद्धता का पता लगाने के लिए डॉक्टर या योग शिक्षक की सहायता लीजिये।

(४) अभ्यास-स्थान के समीप कोई ऐसी वस्तु न रहे जिससे अभ्यासी को किसी प्रकार की चोट लगने की सम्भावना हो। अभ्यास करते समय यदि अभ्यासी सामने या पीछे की ओर गिरता हो तो उसे शरीर को शिथिल कर देना चाहिए तथा पैरों के सहारे शरीर को साधना चाहिए।

(५) बिना किसी कठिनाई के आसन करने में समर्थ होने पर प्रारम्भिक अवस्था में आसन की अन्तिम स्थिति में कुछ सेकेण्ड के लिए ही रहना चाहिए। धीरे-धीरे प्रतिदिन अवधि को कुछ सेकेण्ड बढ़ाते जाइये। उतना ही समय बढ़ाइये जितना आपके लिए व्यक्तिगत रूप से लाभप्रद है। व्यक्तिगत अन्तर के साथ आसनों की अवधि में भी भिन्नता होती है।

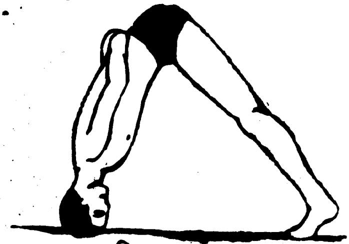
(६) यदि विशेष आसन के अभ्यास से आपको कुछ असुविधा का अनुभव हो तो उस समय तुरन्त ही उस आसन का अभ्यास त्याग दीजिए।

(७) चटाई, नरम गद्दे या तकिये पर इन आसनों का अभ्यास कीजिए। पर्याप्त मोटे कम्बल को मोड़कर उस पर अभ्यास कीजिये ताकि गर्दन या सिर में किसी प्रकार की चोट न आने पाये।

(८) आसनों का अभ्यास धीरे-धीरे बिना किसी तनाव के कीजिये।

(९) इन आसनों के पश्चात् शवासन में तब तक आराम कीजिये, जब तक कि श्वास की गति सामान्य न हो जाये।

भूमि पाद मस्तकासन



भूमि पाद मस्तकासन

भूमि पाद मस्तकासन

विधि

मार्जारि आसन की स्थिति में शरीर को रखिये।

दोनों हाथों के मध्य भूमि पर सिर के शीर्ष प्रदेश को टिकाइये।

घुटनों एवं नितम्बों को उठाइये।

सिर एवं पैरों के सहारे शरीर को सन्तुलित कीजिये।

दोनों हाथों को पीठ पर बाँध कर रखिये। कुछ देर बाद पुनः हाथों को पूर्व स्थिति में ले आइये। मार्जारि आसन में आइये।

टिप्पणी

सिर के नीचे पर्याप्त नर्म कंबल होना चाहिए।

समय

सुविधापूर्वक जितनी देर किया जा सके।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : सहस्रार चक्र पर।

शारीरिक एवं मानसिक : श्वसन, मस्तिष्क या सन्तुलन पर।

सीमाएँ

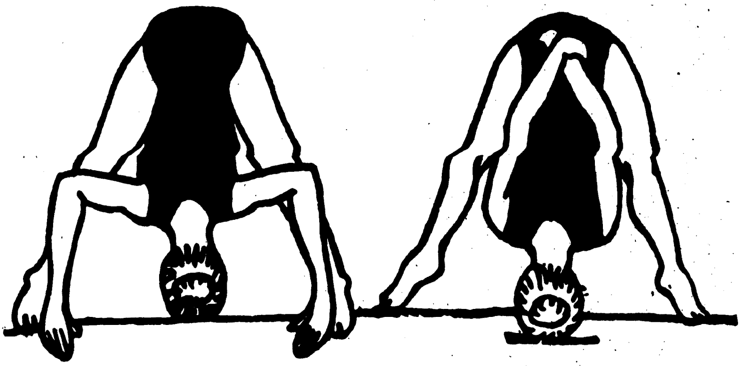
उच्च रक्तचाप या चक्कर आने पर वर्जित है।

लाभ

निम्न रक्त-चाप की अवस्था में लाभप्रद है।

स्नायु-संस्थान में सन्तुलन रखता है, सिर एवं गर्दन की मांसपेशियों को शक्ति प्रदान करता है तथा मस्तिष्क में रक्त की आपूर्ति करता है।

मूर्धासन



प्रथम अवस्था　　　　　　　　द्वितीय अवस्था

मूर्धासन

विधि

दोनों पैरों को ३ या ४ फुट की दूरी पर रखकर खड़े हो जाइये। शरीर को नितम्बों से सामने की ओर झुकाइये। पैरों के समीप दोनों हाथों को रखिये। दोनों हाथों के मध्य भूमि पर सिर का शीर्ष प्रदेश टिका रहेगा (प्रथम अवस्था)। हाथों को उठाकर पीठ पर बाँधकर रखिये। एड़ियों को ऊपर उठाइये। सम्पूर्ण शरीर सिर एवं पैरों की अंगुलियों पर सन्तुलित रहेगा। (द्वितीय अवस्था)। कुछ देर इस अन्तिम अवस्था में रहिये। प्रारम्भिक स्थिति में लौट आइये। दो या तीन बार कीजिए।

श्वास

अन्तिम स्थिति में तथा पूर्व स्थिति में लौटते समय अन्तर्कुम्भक।

सन्तुलित अवस्था में श्वसन क्रिया सामान्य रहेगी।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : सहस्रार चक्र पर।

शारीरिक एवं मानसिक : श्वसन एवं सन्तुलन पर।

लाभ

मस्तिष्क में उचित मात्रा में रक्त का संचार करता है।

सिर को सम्पूर्ण शरीर का भार वहन करने एवं मस्तिष्क को अतिरिक्त रक्त-संचार के लिए प्रशिक्षित करता है।

शीर्षासन



शीर्षासन

विधि

प्रथम अवस्था – वज्रासन में बैठ जाइये।

सामने झुकिये। केहुनियों को दूर-दूर जमीन पर टिकाइये।

अंगुलियों को फँसाकर जमीन पर रखिये।

दोनों केहुनियों के मध्य डेढ़ फुट का अन्तर रहे।

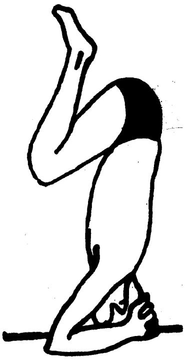
बँधी हुई अंगुलियों के समीप भूमि पर सिर के शीर्ष भाग को टिकाइये।

द्वितीय अवस्था – यह ठीक से जाँच कर लीजिये कि सिर हाथों के मध्य ठीक तरह से जमा रहे तथा वजन पड़ने पर पीछे गिरने न पाये।

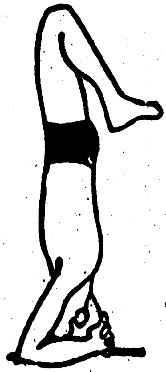
घुटनों को जमीन से ऊपर उठाइये। पैर बिल्कुल सीधे रहें।

तृतीय अवस्था – धीरे-धीरे पैरों को धड़ के समीप लाइये। घुटनों को मोड़िये ताकि पीठ सीधी तनी रहे। जाघों का दबाव उदर एवं निचली छाती पर रहे।

धीरे-धीरे शरीर का वजन पैरों की अंगुलियों से हटाकर हाथों तथा सिर पर स्थानान्तरित कीजिये। एक पैर को जमीन से कुछ ऊपर उठाइये। तत्पश्चात् यही क्रिया दूसरे पैर से कीजिए। इस अवस्था में शरीर हाथों एवं सिर के सहारे सन्तुलित रहेगा।



चतुर्थ अवस्था



पंचम अवस्था

चतुर्थ एवं पंचम अवस्था – इस प्रकार सन्तुलन प्राप्त होने के पश्चात् नितम्बों को उठाकर सीधा कीजिये। इससे पैरों का ऊपरी भाग धड़ से दूर होकर ऊपर की ओर उठ जायेगा।

घुटनों को पूर्णतः सीधी अवस्था में ले आइये। इस अवस्था में शरीर पूरी तरह सीधा एवं उल्टा रहेगा। इस अवस्था में आपका शरीर पूरी तरह सीधा है या नहीं, यह जानने के लिए दूसरे व्यक्ति की मदद लें तो उचित होगा।

यथासम्भव इस स्थिति में रुकिए।

तत्पश्चात् पैरों को मोड़िये और अंगुलियाँ जमीऩ पर टिका दीजिए।

श्वास

अन्तिम स्थिति में जाते एवं पूर्व स्थिति में लौटते हुए अंतर्कुम्भक।

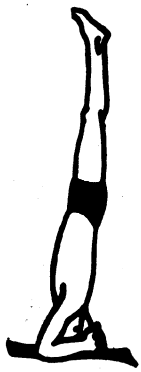
अन्तिम स्थिति में श्वास-प्रश्वास की क्रिया स्वाभाविक रहेगी।

टिप्पणी

इस आसन के नियमित अभ्यास से श्वास की सूक्ष्मता बढ़ती है।

समय

पुराने अभ्यासी अन्तिम स्थिति में ३० मिनट तक रुक सकते हैं। प्रारम्भिक अवस्था में केवल ३० सेकेण्ड रुकें। प्रति सप्ताह अवधि १ मिनट बढ़ाते जाइये जब तक कि इच्छित अवधि तक न पहुँच जाये। सामान्य स्वास्थ्य-प्राप्ति हेतु ३ से ५ मिनट तक करना पर्याप्त है।



अंतिम अवस्था

एकाग्रता

आध्यात्मिक : सहस्रार चक्र पर।

शारीरिक एवं मानसिक : मस्तिष्क, श्वास एवं सन्तुलन पर।

क्रम

नये अभ्यासी शीर्षासन का अभ्यास आसनों के कार्यक्रम के अन्त में करें। तत्पश्चात् 'ताड़ासन' का अभ्यास कर शवासन करना चाहिए।

पुराने अभ्यासी इच्छानुसार प्रारम्भ या अन्त में कर सकते हैं।

प्रस्तावना में वर्णित निर्देश एवं नियमावली का पालन करना चाहिए।

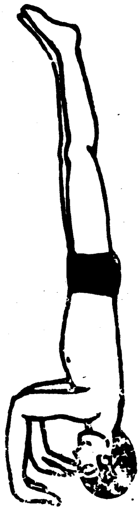
सीमाएँ

उच्च रक्तचाप, चक्कर आने, दिल की बीमारी, बदहजमी, मोतियाबिन्द या समीप दृष्टि-दोष में न करें।

लाभ

सभी शारीरिक संस्थानों को शक्ति प्रदान करता है। मस्तिष्क एवं पीयूष ग्रन्थि में रक्त-संचार बढ़ाता है। पैरों एवं उदर प्रदेश में एकत्रित रक्त का विपरीत प्रवाह कोषों के नव-निर्माण में सहायता करता है। सभी प्रकार की ग्रंथियों, विशेषकर प्रजनन-संस्थान से सम्बन्धित ग्रन्थियों का असन्तुलन दूर करता है। अनेक मनोवैज्ञानिक विकारों, दमा, सिर दर्द, शक्ति की कमी, जुकाम आदि को दूर करता है।

सालम्ब शीर्षासन



सालम्ब शीर्षासन

सालम्ब शीर्षासन

विधि

हथेलियों को जमीन पर रखिये। केहुनियाँ खड़ी रखें।

हाथों के मध्य भूमि पर सिर के मध्य भाग को टिकाइये।

घुटनों को ऊपर उठाइये। पैरों को धीरे-धीरे भीतर की ओर लाकर जाँघों को छाती के समीप लाइये।

शरीर का वजन पैरों से हटाकर हाथों एवं सिर पर लाइये।

क्रमशः दोनों पैरों को उठाइये।

घुटनों को सीधा कर पैरों को ऊपर उठाइये। शरीर सीधा रहे।

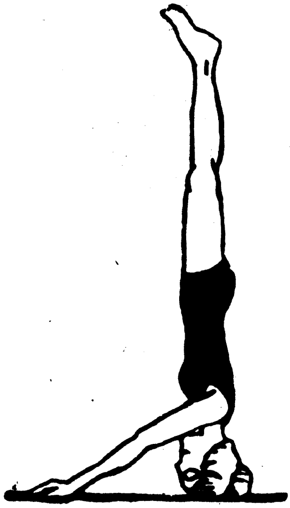
आरामदायक स्थिति में कुछ देर रहकर वापस आ जाइये।

श्वास

आसन की पूर्ण स्थिति के निर्माण तक एवं पूर्व स्थिति में लौटते समय तक श्वास को अन्दर रोकिये। पूर्णावस्था में श्वास स्वाभाविक रहे।

शेष विवरण 'शीर्षासन' की भाँति ही है।

निरालम्ब शीर्षासन



निरालम्ब शीर्षासन

निरालम्ब शीर्षासन

विधि

इसमें 'सालम्ब शीर्षासन' से अन्तर यह है कि हाथ मुख के सामने सीधे तने हुए रहते हैं। पूरे आसन-काल में हाथ इसी दशा में रहेंगे।

प्रकारान्तर – पद्मनिरालम्ब शीर्षासन

विधि

पद्मासन में घुटनों के बल खड़े हो जाइये।

हाथों के मध्य सिर को रखिये।

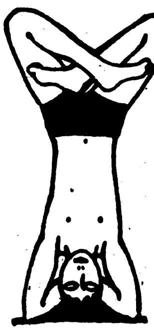
हाथों को पैरों के नीचे के स्थान पर ले आइये। केहुनियाँ सीधी रहें। भुजाओं का उपयोग छड़ की भाँति कीजिये और पैरों को उठाकर छाती के पास लाइये। नितंबों पर जोर देकर पैरों को ऊपर उठाइये।

अब आप 'पद्म निरालम्ब शीर्षासन' की अवस्था में हैं।

इसी की विपरीत क्रिया कर पूर्व स्थिति में लौट आइये।

शेष विवरण शीर्षासन की तरह ही है।

ऊर्ध्व पद्मासन



ऊर्ध्व पद्मासन

ऊर्ध्व पद्मासन

विधि

शीर्षासन कीजिये ।

इसी अवस्था में पैरों को धीरे-धीरे मोड़कर पद्मासन लगाइये ।

कुछ देर इस स्थिति में रहिए ।

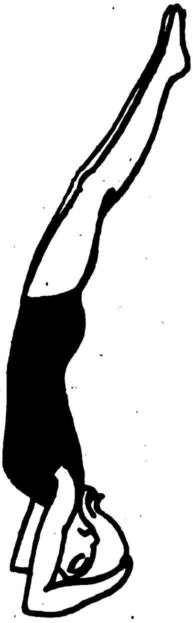
शीर्षासन में वर्णित विधि द्वारा सामान्य स्थिति में आ जाइये ।

टिप्पणी

जब तक आप सरलतापूर्वक शीर्षासन करने में समर्थ न हों तब तक यह आसन मत कीजिये अन्यथा गिरने पर गंभीर चोट लगने की संभावना रहती है ।

अन्य विवरण शीर्षासन की भाँति ही हैं ।

कपालि आसन



कपालि आसन



गत्यात्मक विधि (१)



गत्यात्मक विधि (२)

कपालि आसन

विधि

शीर्षासन कीजिये।

सिर को कुछ सामने झुकाकर शरीर का वजन कपाल-प्रदेश पर रखें।

सामान्य स्थिति में आने के पूर्व पुनः शीर्षासन की अवस्था में आइये।

गत्यात्मक विधि

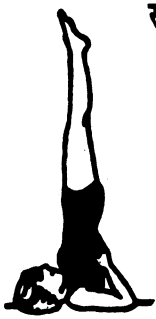
दाहिने घुटने को मोड़िये। इस पैर के तलवे को बायीं जाँघ के सामने की ओर रखिये। दाहिना घुटना सामने की ओर रहेगा।

बायें घुटने को मोड़िये। बायीं एड़ी का स्पर्श नितम्ब से कीजिये।

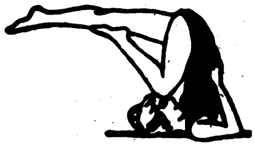
नितम्ब से झुकिये और दाहिने घुटने को छाती के समीप ले आइये।

सीधी अवस्था में आ जाइये। शेष विवरण शीर्षासन की भाँति ही है।

सर्वांगासन



सर्वांगासन



प्रकारान्तर

सर्वांगासन

विधि

पीठ के बल सीधे लेट जाइये।

दोनों हाथ जमीन पर बाजू में तथा हथेलियाँ नीचे की ओर खुली रहें।

हाथों का सहारा देकर दोनों पैरों को धीरे-धीरे ऊपर उठाइये।

हाथों को केहुनियों से मोड़िये तथा हथेलियों से दबाव डालकर पीठ को सीधा कीजिये।

धड़ एवं पैर ग्रीवा से समकोण बनाते हुए सीधे रहें।

ठुड्डी का स्पर्श छाती से कीजिये।

प्रकारान्तर

(१) दाहिने पैर के घुटने को मोड़िये तथा बायीं जाँघ पर रखिये। नितम्ब से सामने की ओर झुककर दायें घुटने को मस्तक पर टिकाइये। दाहिने पैर को बायीं जाँघ से हटा लीजिये। अब बायें पैर को मोड़कर उसके घुटने का स्पर्श कपाल से कीजिये।

(२) पैरों को नितम्बों से सामने की ओर झुकाइये और उन्हें सिर के ऊपर पृथ्वी से समानांतर स्थिति में रखिये।

श्वास

आसन करते समय एवं वापस लौटते समय श्वास अन्दर रोकिये।

उठी हुई अवस्था में श्वास स्वाभाविक रहेगी।

पुराने अभ्यासी १५ मिनट तक इसका अभ्यास कर सकते हैं।

नये अभ्यासी कुछ सेकेण्ड ही इसका अभ्यास करें तथा प्रतिदिन कुछ सेकेण्ड की अवधि बढ़ाते जायें।

सामान्य स्वास्थ्य-लाभ हेतु पाँच मिनट तक का अभ्यास पर्याप्त है।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : विशुद्धि चक्र पर।

शारीरिक एवं मानसिक : चुल्लिका ग्रन्थि या श्वास-प्रक्रिया पर।

क्रम

हलासन के पूर्व सर्वांगासन का अभ्यास सर्वोत्तम है।

इसके विपरीत आसन मत्स्यासन, उष्ट्रासन या सुप्त वज्रासन हैं।

सर्वांगासन एवं हलासन का अभ्यास जितनी देर किया जाये, उसकी आधी अवधि तक विपरीत आसन का अभ्यास करना चाहिए।

सीमाएँ

उच्च रक्त-चाप, दिल की बीमारी, चुल्लिका ग्रन्थि व यकृत की समस्या में तथा तिल्ली बढ़ने पर इस आसन का अभ्यास वर्जित है।

लाभ

चुल्लिका ग्रन्थि को क्रियाशील बनाता है, फलतः रक्त-परिवहन, पाचन, जननेन्द्रिय, स्नायुओं एवं ग्रन्थि-संस्थानों में संतुलन लाता है।

शरीर का उचित विकास करता है।

मस्तिष्क को उचित मात्रा में रक्त पहुँचाकर मनोवैज्ञानिक बीमारियों को दूर करता है।

दमा, खाँसी तथा हाथी पाँव की बीमारी को दूर करता है।

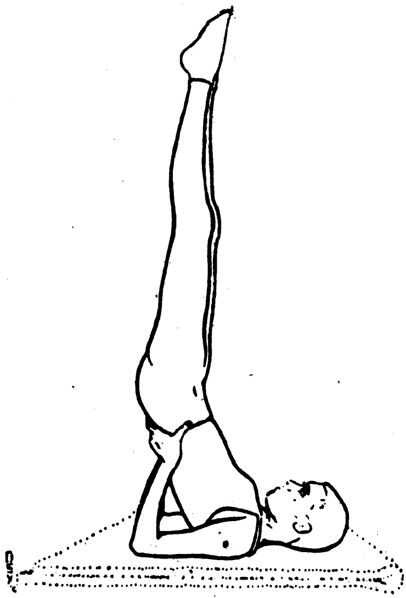
गुदा-द्वार की मांसपेशियों के तनाव को दूर करता है जिससे बवासीर की बीमारी में लाभ पहुँचता है।

पैरों, उदर-प्रदेश, प्रजननांग, मेरुदण्ड तथा गर्दन को शक्ति देता है। छाती की चर्बी दूर करता है। हाइड्रोसील की बीमारी को रोकता है।

प्रदर एवं मधुमेह की बीमारी का उपचार करता है।

इस आसन से शारीरिक तापक्रम पर नियंत्रण रखा जा सकता है।

विपरीतकरणी मुद्रा



विपरीतकरणी मुद्रा

विपरीतकरणी मुद्रा

यह आसन सर्वांगासन की भाँति ही है। यह सर्वांगासन से सरल है।

अतः प्रारम्भिक अवस्था में इसका अभ्यास करना चाहिए।

जिनकी गर्दन की मांसपेशियाँ कठोर हैं तथा जो धड़ को सीधा नहीं कर सकते, उन्हें इस आसन का अभ्यास करना चाहिए।

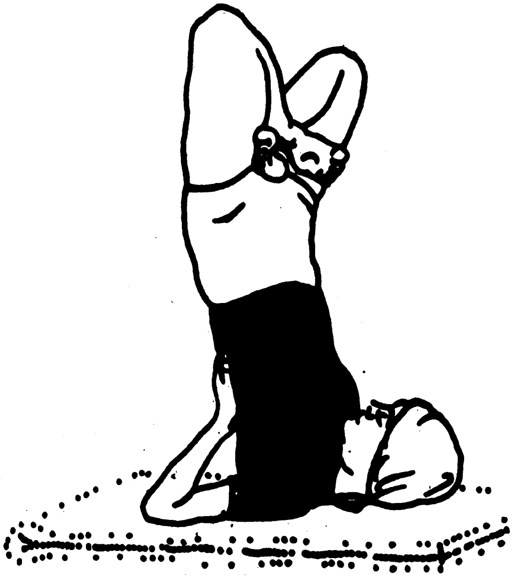
विधि

सर्वांगासन की तरह ही है। किंचित अन्तर यह है कि इसके अभ्यास में ठुड्डी का स्पर्श छाती से नहीं किया जाता। धड़ को जमीन से उठाकर ४५ अंश के कोण पर ही रखा जाता है जबकि सर्वांगासन में ९० अंश का कोण बनाते हुए धड़ सीधा सधा रहता है।

टिप्पणी

'कुण्डलिनी योग' में इस आसन का अधिक उपयोग किया जाता है।

पद्म सर्वांगासन



पद्म सर्वांगासन

पद्म सर्वांगासन

विधि १

सर्वांगासन कीजिये।

सर्वांगासन की अन्तिम स्थिति में पद्मासन लगाइये।

विधि २

पद्मासन में बैठिये।

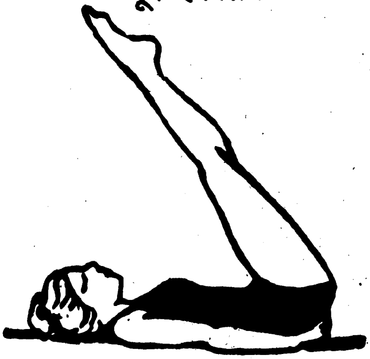
पीछे की ओर झुककर पीठ के बल लेट जाइये।

सामान्य सर्वांगासन की भाँति मुड़े हुए पैर को ऊपर उठाइये।

अंतिम अवस्था में कुछ देर रुकिये।

तत्पश्चात् विपरीत क्रिया करते हुए प्रारम्भिक अवस्था में आ जाइये।

पूर्व हलासन



पूर्व हलासन

पूर्व हलासन

विधि

पीठ के बल लेट जाइये। हाथों की मुट्ठियाँ नितम्बों के नीचे रखिये। नितम्बों का वजन उन पर रहे। पैर सीधे रहें। उन्हें ऊपर उठाइये। ४५ अंश का कोण बनाते हुए उन्हें सिर से ऊपर लाइये।

दोनों पैरों को एक-दूसरे से दूर कीजिए। पुनः उन्हें समीप लाइये।

अब धीरे-धीरे प्रारम्भिक स्थिति में आ जाइये। दस बार कीजिए।

श्वास

लेटी हुई स्थिति में पूरक कीजिये।

पैरों को उठाते, दूर करते तथा नीचे लाते समय श्वास रोकिये।

प्रारंभिक अवस्था में आने पर रेचक कीजिये।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : विशुद्धि चक्र पर।

शारीरिक एवं मानसिक : चुल्लिका ग्रंथि, उदर या श्वसन-क्रिया पर।

क्रम

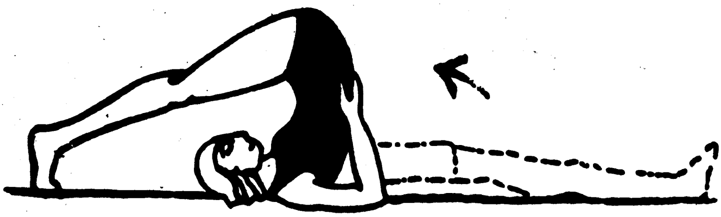
इसके पश्चात् पीछे मुड़ने वाला आसन कीजिये।

सीमाएँ

साइटिका-दर्द एवं स्लिप डिस्क की अवस्था में वर्जित है।

लाभ

यह पेड़ू को तनाव रहित, वृक्कों को व्यवस्थित, आँतों को क्रियाशील तथा एकत्रित चर्बी की मात्रा को कम करने में उपयोगी है।



हलासन

हलासन

विधि

पीठ के बल लेट जाइये। हाथ नितम्बों के बगल में तथा हथेलियाँ ऊपर की ओर खुली रहें। पैरों को सीधी स्थिति में धीरे-धीरे ऊपर की ओर उठाइये। उन्हें उठाते समय हाथों पर बल न डालकर उदर की मांसपेशियों पर जोर दें।

पैरों को सिर के पीछे ले जाकर अंगूठों को जमीन पर रखिये।

सर्वांगासन की तरह हाथों को कमर पर रखिये।

प्रारम्भिक अवस्था में लौट जाइये या निम्न अतिरिक्त क्रियाएँ कीजिये –

१. पैरों को कुछ और पीछे ले जाइये ताकि शरीर एकदम तन जाये; इस स्थिति में जालन्धर बंध लगता है। मूल स्थिति में आ जाइये।

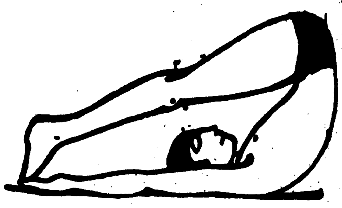
२. पैरों को सिर के इतना आगे ले जाइए कि पृष्ठ प्रदेश में पूर्णतः तनाव आ जाये। पैर तने रहें। पैरों को हाथों से पकड़िये।

सामान्य अवस्था में वापस आ जाइए।

धीरे-धीरे प्रारम्भिक अवस्था में वापस आइये।



प्रकारान्तर (१)



प्रकारान्तर (२)

श्वास

मूल अवस्था की प्राप्ति एवं पूर्व स्थिति में लौटते समय अंतर्कुंभक।

मूल आसन की अन्तिम स्थिति में श्वास-क्रिया दीर्घ एवं गहरी रहेगी।

आवृत्ति

पुराने अभ्यासी मूल हलासन एवं अतिरिक्त क्रियाओं की अंतिम स्थिति को १० मिनट से अधिक कर सकते हैं।

नये अभ्यासी प्रथम सप्ताह में प्रत्येक क्रिया की पुनरावृत्ति चार बार करें। प्रत्येक क्रिया में पंद्रह सेकेण्ड से अधिक समय न लगाइये।

प्रति सप्ताह प्रत्येक क्रिया की अवधि पंद्रह सेकेण्ड बढ़ाइये।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : विशुद्धि या मणिपुर चक्र पर।

शारीरिक एवं मानसिक : उदर, पृष्ठ प्रदेश की मांसपेशियों के शिथिलीकरण, श्वसन या चुल्लिका ग्रंथि पर।

क्रम

सर्वांगासन के बाद हलासन का अभ्यास कीजिये।

इसके पश्चात् विपरीत आसन के रूप में मत्स्यासन, उष्ट्रासन या सुप्त वज्रासन का अभ्यास सर्वांगासन एवं हलासन के अभ्यास काल से आधी अवधि तक कीजिए।

सावधानी

नये अभ्यासी एक हफ़्ते तक नियमित रूप से पूर्व हलासन का अभ्यास करें। इससे उनकी पीठ की मांसपेशियाँ लचीली बन जायेंगी।

इसके बाद ही हलासन का अभ्यास करना चाहिए।

सीमाएँ

वृद्ध, दुर्बल तथा उच्च रक्तचाप व साइटिका वाले इसे न करें।

लाभ

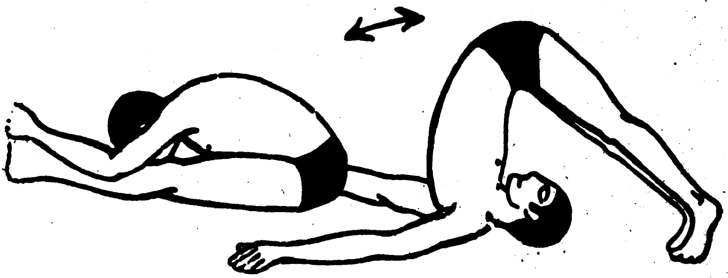
हलासन उदर प्रदेश के अंगों, विशेषकर वृक्क, यकृत व क्लोम के कार्यों को व्यवस्थित करता है। अपचन दूर कर पाचन-शक्ति बढ़ाता है। चर्बी दूर करता है– विशेषकर छाती की।

चुल्लिका ग्रंथि की क्रिया को नियमित करता है जिससे सम्पूर्ण शरीर की चयापचय क्रिया में संतुलन आता है।

बवासीर एवं मधुमेह की बीमारी का उपचार करता है।

मेरुदंड को लचीला बनाता है एवं संबंधित नाड़ियों को शक्ति प्रदानकर अच्छा शारीरिक स्वास्थ्य प्रदान करता है।

द्रुत हलासन



द्रुत हलासन

द्रुत हलासन

विधि

लेट जाइये। हाथ सिर के पीछे रहें।

शीघ्रता से हलासन कीजिये। पुनः लेटी हुई अवस्था में आ जाइये।

तुरंत धड़ को सामने झुकाकर पश्चिमोत्तानासन कीजिये।

प्रारंभिक स्थिति में आ जाइये। क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

श्वास

क्रिया प्रारंभ करने के पूर्व दीर्घ श्वास लेकर श्वास छोड़िये।

शीघ्र मोड़ते समय बहिर्कुम्भक लगाइये।

स्थिर अवस्था में पूरक कीजिये।

टिप्पणी

इस आसन को समान गति से अच्छी तरह करना चाहिए।

सावधानी

सतर्क रहिये कि किसी मांसपेशी या फेफड़ों पर तनाव न पड़ने पाये।

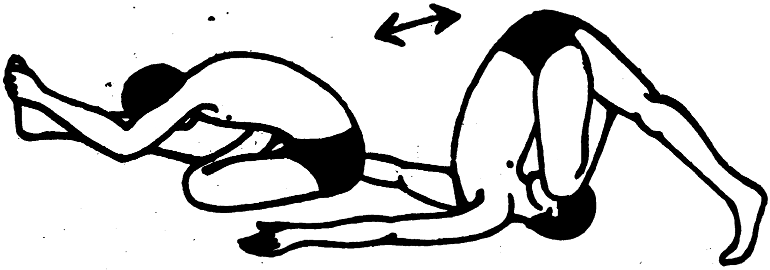
सीमाएँ

प्रारम्भिक अभ्यासी, वृद्ध या साइटिका से ग्रस्त लोग इसे न करें।

लाभ

पाचन शक्ति सुधारता है। अपचन दूर करता है। वृक्क एवं अधिवृक्क (suprarenal glands) तथा आँखों को क्रियाशील बनाता है। यकृत, पित्ताशय व पृष्ठ-प्रदेश का व्यायाम कराता है।

अर्ध पद्म हलासन



अर्ध पद्म हलासन

अर्ध पद्म हलासन

विधि

पैरों को फैलाकर बैठ जाइये। एक पैर को मोड़कर अर्ध पद्मासन लगाइये। सीधा पैर सिर के ऊपर ले जाते हुए अंगुलियों को भूमि पर टिकाइये। वापस बैठी हुई अवस्था में आ जाइये तथा अविलम्ब ही छाती को झुकाइये तथा सीधे पैर के घुटने को नासिका से स्पर्श कीजिये। उसी पैर को दोनों हाथों से पकड़िये। प्रारम्भिक सीधी स्थिति में आ जाइये।

श्वास

शरीर को मोड़ने के पूर्व लम्बी श्वास लेकर पूरी श्वास को छोड़ दीजिये।

मुड़ते समय श्वास रोकिये। बैठी अवस्था में पूरक कीजिये।

क्रम

इस अभ्यास के उपरांत पीछे मुड़ने वाला आसन कीजिये।

आवृत्ति

प्रत्येक पैर से ५ बार अभ्यास कीजिये।

सावधानी

पीठ या पैरों की मांसपेशियों पर तनाव न पड़ने पाये।

इस बात की सावधानी रखिये कि सिर में जमीन से चोट न लगने पाये।

सीमाएँ

वृद्धावस्था, उच्च रक्तचाप, स्लिप डिस्क व साइटिका में अहितकर है।

लाभ

वृक्क को व्यवस्थित व आँतों को क्रियाशील करता है। पेड़ू का व्यायाम कराता है तथा चर्बी दूर करता है।

स्तम्भन आसन



स्तम्भन आसन

स्तम्भन आसन

विधि

यह दो व्यक्तियों के एक साथ करने का आसन है।

दोनों व्यक्ति एक-दूसरे के शीर्ष प्रदेश का स्पर्श करते हुए लेट जायें।

अपने दोनों हाथों को बाजू में फैलाते हुए एक-दूसरे के हाथ पकड़ लें।

हाथ तने रहें। सिर का दबाव एक-दूसरे के सिर पर रहे।

एक व्यक्ति पैरों को सीधा उठाये। कुछ सेकेण्ड बाद नीचे कर ले।

पुनः वह पैरों को ऊपर उठाकर इतना मोड़े कि वे दूसरे व्यक्ति के सिर के ऊपर भूमि से समानांतर रहें। कुछ देर पश्चात् लौट आये।

पैरों को ऊपर उठाने की क्रिया को दोनों व्यक्ति कर सकते हैं।

श्वास

(दोनों व्यक्तियों के लिए)

लेटे हुए पूरक।

पैरों को उठाते समय, अन्तिम तथा पूर्व स्थिति में आते समय कुंभक। पूर्वावस्था में आकर रेचक कीजिये।

आवृत्ति

प्रत्येक अभ्यासी द्वारा अधिक से अधिक पाँच बार किया जाये।

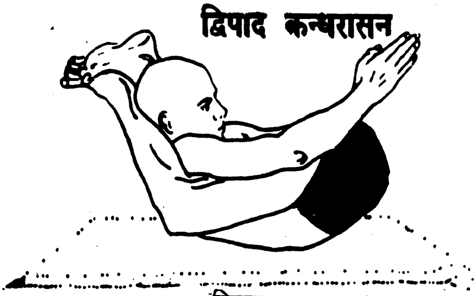
सीमाएँ

निर्बल व्यक्ति इसका अभ्यास न करें।

भुजाओं एवं पीठ की मांसपेशियों को शक्ति प्रदान करता है।

लाभ

उदर-प्रदेश को उत्तेजित करता है एवं आँतों को क्रियाशील बनाता है।



द्विपाद कन्धरासन

द्विपाद कन्धरासन

विधि

पैरों को सीधे रखकर पीठ के बल लेट जाइये। हाथ बाजू में रहें। एक पैर को उसी ओर के हाथ के नीचे से ले जाकर सिर के पीछे रखें। यह क्रिया दूसरे पैर से भी कीजिये। तनाव न पड़ने दीजिये।

पैरों को सिर के पीछे कैंचीनुमा स्थिति में रखने का प्रयत्न कीजिये। हाथों को सामने की ओर प्रार्थना की स्थिति में रखिये।

यह आसन की अन्तिम अवस्था है। शरीर का शिथिलीकरण कीजिये। नेत्रों को बन्द कर धीमी गति से श्वास लीजिये।

समय

जितनी देर सुविधापूर्वक रह सकें।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : स्वाधिष्ठान चक्र पर।

क्रम

इसके पश्चात् पीछे मुड़ने वाला आसन कीजिये।

सीमाएँ

स्लिप डिस्क, साइटिका या पीठ की गंभीर बीमारी में न करें।

लाभ

स्नायु-संस्थान के नियंत्रण में सहायता पहुँचाता है।

वृक्क, यकृत, क्लोम, तिल्ली, आँत आदि उदरस्थ अंगों को शक्ति प्रदान करता है। प्रजनन-संस्थान की कार्यक्षमता बढ़ाता है। निम्न उदर-प्रदेश के अंगों को क्रियाशील बनाता है। प्रजनन ग्रन्थियों में सन्तुलन लाकर अभ्यासी को शक्ति प्रदान करता है।

सन्तुलन के आसन

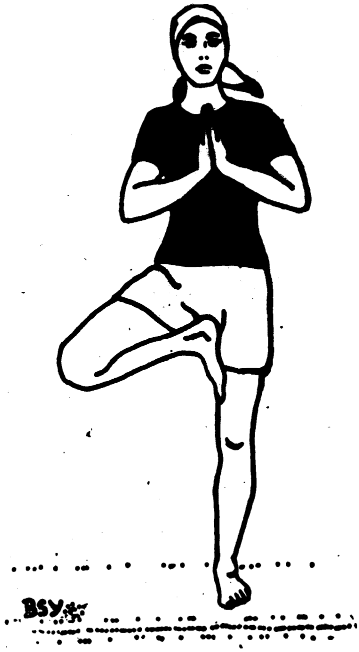
इस वर्ग के अभ्यास शारीरिक सन्तुलन के भावों को विकसित करते हैं। इसके अतिरिक्त विभिन्न आसनों के वर्णन में बताये गये लाभ प्रदान करते हैं। इनके अभ्यास से शारीरिक अंगों के पारस्परिक सम्बन्धों के विकास में मदद मिलती है; फलतः अभ्यासी में अंगों की भौतिक गतिशीलता की क्षमता एवं एकाग्रता बढ़ती है। कई व्यक्तियों में व्यर्थ ही अंग-विशेष को हिलाते रहने की आदत होती है। इस क्रिया से कार्य का सम्पादन कम एवं शक्ति का ह्रास अधिक होता है। इन आसनों के अभ्यास से मस्तिष्क केन्द्र (सेरीबेलम) का विकास होता है। शरीर के भिन्न-भिन्न अंगों की गतिशीलता में वृद्धि होती है, हलचल उचित विधि से होती है तथा उनमें समता आती है।

शारीरिक सन्तुलन तथा इन आसनों की सफलता के लिये एकाग्रता की परम आवश्यकता है। अतः स्वाभाविकतः इनके अभ्यास से एकाग्रता की शक्ति बढ़ती है जो अन्य क्षेत्रों में भी उपयोगी है। इन अभ्यासों का प्रभाव स्नायु-संस्थान पर भी अच्छा पड़ता है। परिणामतः मानसिक तनाव, परेशानी एवं चिन्ता का निवारण होता है। यदि व्यक्ति विशेष को किसी समय तनाव का अनुभव हो रहा हो तो इस वर्ग के एक-दो आसनों का अभ्यास करना लाभप्रद होगा।

साधारणतः सामान्य जीवन में मनुष्यों को शारीरिक सन्तुलन का अच्छा ज्ञान नहीं होता है। इसलिये अभ्यास के प्रारम्भ में इन आसनों के अभ्यास में कठिनाई का अनुभव होगा। शरीर में समायोजन-क्षमता बहुत रहती है; अतः कुछ हफ्तों के नियमित अभ्यासोपरान्त ही सन्तुलन-ज्ञान में वृद्धि हो जाती है।

इन आसनों की सिद्धि के लिये दृष्टि की एकाग्रता महत्वपूर्ण है। इसके लिये सरलतम विधि है कि अभ्यास करते समय दृष्टि को दीवाल पर बने किसी काले बिन्दु पर केन्द्रित किया जाये। इस अभ्यास से कठिनतम आसन भी लम्बी अवधि तक किये जा सकते हैं।

एक पाद प्रणामासन



एक पाद प्रणामासन

एक पाद प्रणामासन

विधि

खड़े हो जाइये। दोनों हाथ बाजू में एवं पैर एक-दूसरे के समीप रहें। एक पैर को दूसरे पैर की जाँघ पर रखिये। एड़ी मूत्रेन्द्रिय के समीप रहे। हथेलियों को छाती के सामने प्रार्थना की अवस्था में रखिये। सिर को सीधा रखिये। दृष्टि को सामने किसी बिन्दु पर एकाग्र करें।

समय

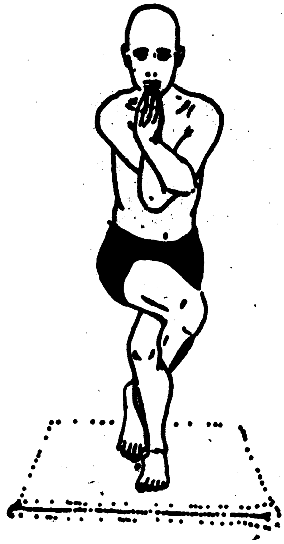
जितनी देर सम्भव हो, इस आसन को करना चाहिये।

लाभ

स्नायु-संस्थान में सन्तुलन लाने के लिये अच्छा आसन है।

पैरों, तलवों और टखनों की मांसपेशियों को शक्ति प्रदान करता है।

गरुड़ासन



गरुड़ासन

गरुड़ासन

विधि

खड़े होकर बायें पैर को दाहिने पैर के चारों ओर लपेटिये। बायीं जाँघ दाहिनी जाँघ के सामने रहे। बायाँ पैर दाहिने पैर की पिंडली पर रहे।

अब दोनों हाथों को केहुनियों के मध्य से मोड़िये। बायें हाथ को दाहिने हाथ पर इस प्रकार लपेटिये कि वे प्रार्थना की मुद्रा में आ जायें। बायाँ अंगूठा जमीन से छूने तक झुकिये। पहली स्थिति में आ जाइये।

एकाग्रता

शरीर के संतुलन पर या किसी एक निश्चित बिन्दु पर।

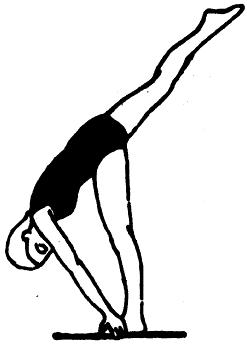
लाभ

पैरों की हड्डियों एवं संधियों को लचीला बनाता है।

साइटिका व हाथ-पैर के वात के निवारण में मदद करता है।

हाइड्रोसील में बड़ा लाभकारी है। शारीरिक संतुलन बढ़ाता है।

बकासन



बकासन

बकासन

विधि

पैरों को एक-दूसरे के समीप रखकर खड़े हो जाइये।

कमर से झुकिये तथा हाथों से बायें पैर की अंगुलियों को पकड़िये।

दाहिने पैर को ऊपर की ओर अधिक से अधिक उठाइये।

किसी भी पैर का घुटना मुड़ने न पाये।

इस स्थिति में जितनी देर रह सकें, रहें। दोनों पैरों से करें।

श्वास

कमर झुकाते समय रेचक कीजिए।

अंतिम अवस्था में श्वास स्वाभाविक रखें।

सीधी स्थिति में लौटते समय पूरक कीजिये।

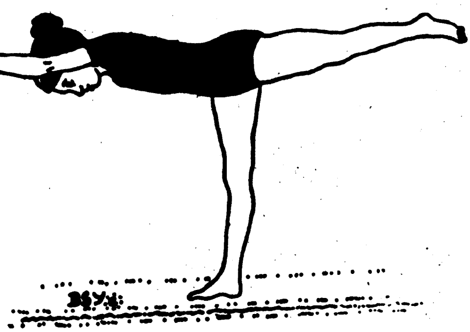
एकाग्रता

शरीर के संतुलन पर।

लाभ

मस्तिष्क में रक्त-परिवहन क्रिया को ठीक करता है। हाथों, कलाइयों और पैरों के स्नायुओं को शक्तिशाली बनाता है। पीठ के निचले प्रदेश को शिथिल करता है। नाड़ियों में संतुलन लाता है।

एक पादासन



एक पादासन

एक पादासन

विधि

दोनों पैरों को समीप रखकर सीधे खड़े हो जाइए।

दोनों हाथों की अंगुलियों को आपस में बाँधकर सिर के ऊपर उठाइये धीरे-धीरे सामने झुककर कमर, सिर और दोनों हाथों को एक सीधी रेखा में ले आइये।

अब बायें पैर को धीरे-धीरे उठाते हुए बायीं एड़ी, नितम्ब, पीठ, सिर और दोनों हाथों को एक सीध में ले आइए।

इस स्थिति में दायाँ पैर एकदम सीधा रहे।

आरामपूर्वक जितनी देर इस स्थिति में रुक सकें, रुकिये।

तत्पश्चात् धीरे-धीरे पूर्व स्थिति में वापस आ जाइए।

यही क्रिया बदलकर दूसरे पैर से कीजिए।

श्वास

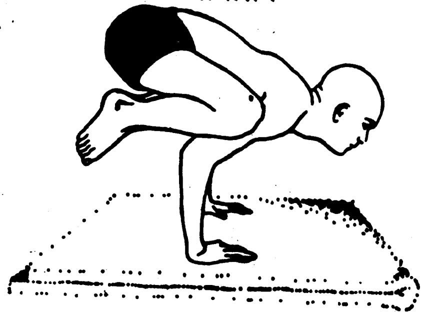
हाथों को ऊपर उठाते समय पूरक।

सामने झुकते समय रेचक ।

अंतिम अवस्था में स्वाभाविक श्वास।

प्रथम अवस्था में आकर पूरक कीजिये।
शेष विवरण बकासन की भाँति ही है।

बक ध्यानासन



बक ध्यानासन

बक ध्यानासन

विधि

पैरों को दूर-दूर रखकर भूमि पर उकड़ूँ बैठ जाइये।

हथेलियों को पैरों के सामने भूमि पर टिकाइये। पैरों के केवल अग्र भाग भूमि से टिके रहें।

केहुनियों को थोड़ा झुकाइये। वे घुटनों के भीतर की ओर रहें।

धीरे-धीरे सामने की ओर झुकिये। पैरों को जमीन से ऊपर उठाइये।

घुटने ऊपरी भुजाओं पर तथा समस्त शरीर हाथों पर संतुलित रहेगा।

सिर और मुँह सामने की ओर रहें।

श्वास

उठी हुई अवस्था में अंतर्कुंभक लगाइये।

आवृत्ति

१ से ५ बार तक कीजिये।

एकाग्रता

संतुलन बनाये रखने में

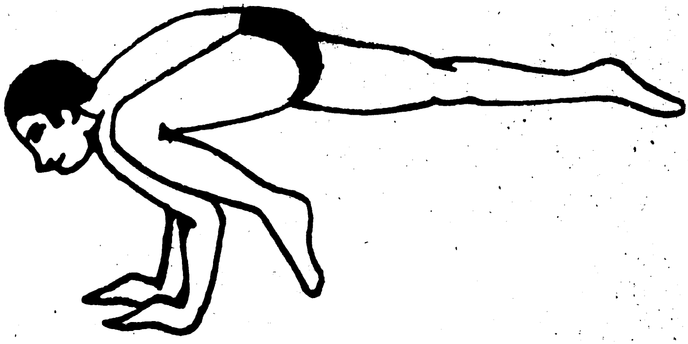
सीमाएँ

उच्च रक्तचाप या मस्तिष्क के रोग में इसका अभ्यास या प्रयास नहीं करना चाहिये।

लाभ

नाड़ी संस्थान में स्थिरता लाता है तथा मानसिक तनाव एवं चिंता का निवारण करता है। भुजाओं और कलाइयों को शक्ति प्रदान करता है।

एक पाद बक ध्यानासन



एक पाद बक ध्यानासन

एक पाद बक ध्यानासन

यह बक ध्यानासन की अपेक्षा कठिन है, अतः प्रगति कर चुके अभ्यासी को ही इसका अभ्यास करना चाहिये।

विधि

बक ध्यानासन की अंतिम अवस्था में आइये।

एक पैर को पीछे की ओर सीधा कीजिये। श्वास रोककर क्षमतानुसार इस स्थिति में रुकिये।

शेष विवरण वही हैं जो बक ध्यानासन में वर्णित हैं।

अर्ध पद्म पादोत्तानासन



अर्ध पद्म पादोत्तानासन

अर्ध पद्म पादोत्तानासन

विधि

बायें घुटने को मोड़ अर्ध पद्मासन की भाँति पंजे को जाँघ पर रखें।

दाहिने पैर को मोड़िये। उसका पंजा भूमि पर सीधा टिका रहे।

हाथों को दाहिनी जाँघ के नीचे बाँध पैर को सीधा कीजिये। घुटने को नाक के समीप लाइये। किसी दृश्य बिंदु पर दृष्टि एकाग्र कीजिये। दाहिने घुटने को पुनः मोड़कर पंजे को भूमि पर टिकाइये।

अब दाहिने पैर को बायीं जाँघ पर रखकर पुनः उपरोक्त क्रिया कीजिये। प्रत्येक पैर से अधिकतम पाँच बार यह क्रिया कीजिये।

श्वास

बैठी स्थिति में पूरक तथा संतुलन-काल में कुंभक कीजिये।

पूर्व स्थिति में आकर रेचक कीजिये।

एकाग्रता

निश्चित बिंदु पर एकटक देखते हुये संतुलन पर।

लाभ

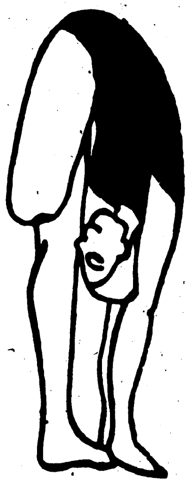
पद्मासन के लिये पैरों को तैयार करता है।

तंत्रिका-तंत्र या नाड़ी संस्थान के संतुलन में मदद करता है।

अर्ध बद्ध पद्मोत्तानासन



प्रथम अवस्था



द्वितीय अवस्था

अर्ध बद्ध पद्मोत्तानासन

विधि

दाहिने पैर का घुटना मोड़कर उसके पंजे को बायें पैर पर जितना ऊपर रख सकें, रखकर सीधे खड़े हो जाइये।

दोनों हाथों को सिर के ऊपर उठाकर अंगुलियों को बाँध लीजिये।

संपूर्ण शरीर शिथिल कीजिए।

धीरे-धीरे नीचे झुकिये और हाथों की अंगुलियों से पैरों का स्पर्श कीजिए।

मस्तक से घुटने का स्पर्श करने की कोशिश कीजिये, लेकिन यह ध्यान रहे कि बायाँ घुटना झुकने न पाये।

इस अवस्था में बिना तनाव के जितनी देर रुक सकें, रुकिये।

तत्पश्चात् धीरे-धीरे प्रारम्भिक स्थिति में आ जाइये।

फिर इसी क्रिया को बदलकर दूसरे पैर से कीजिये।

श्वास

प्रारम्भिक अवस्था में पूरक।

सामने झुकते समय रेचक।

झुकी हुई अवस्था में सामान्य श्वास।

समय

दोनों पैरों से करते समय २-२ मिनट तक अंतिम स्थिति में रुकिये।

एकाग्रता

संतुलन या श्वसन पर।

सीमाएँ

साइटिका या स्लिप डिस्क से पीड़ित व्यक्ति इसका अभ्यास न करें।

लाभ

यह आसन पाचन-शक्ति को तीव्र कर भूख को बढ़ाता है।

संतुलन को बढ़ाता तथा एकाग्रता में वृद्धि करता है।

पैरों को शिथिल करता तथा शक्ति प्रदान करता है।

पर्वतासन



पर्वतासन

पर्वतासन

विधि

पद्मासन में बैठिये।

किसी बिन्दु पर दृष्टि को एकाग्र कीजिये।

हाथों का सहारा लेकर घुटनों के बल उठिये।
नितम्बों एवं छाती को तना हुआ रखिये।

क्रमशः दोनों हाथों को सीधा सिर के ऊपर उठाइये।

श्वास

स्वाभाविक श्वसन के साथ अभ्यास कीजिये।

समय

जितनी देर आपसे बन सके।

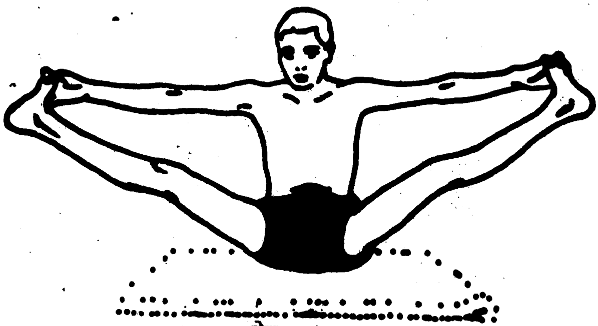
एकाग्रता

यह संतुलन का कठिन आसन है, अतः एकाग्रता शारीरिक संतुलन पर ही होनी चाहिये।

लाभ

नाड़ी संस्थान में संतुलन प्राप्ति में सहयोग देता है।

मेरुदण्डासन



मेरुदण्डासन

मेरुदण्डासन 1

विधि

पैरों को घुटनों से मोड़ें, तलवों को नितम्बों के सम्मुख रखें।

दोनों पैर एक-दूसरे से लगभग आधा मीटर दूर रहें।

हाथों की अंगुलियों से पैरों के अंगूठों को पकड़िये।

कमर को धीरे-धीरे पीछे झुकाइये और दोनों पैरों को सीधा कीजिये।

हाथों एवं पैरों को सीधा कर उन्हें जितना हो सके, दूर कीजिये।

श्वास

प्रारम्भिक अवस्था में पूरक तथा पैरों को फैलाते समय कुम्भक।

आसन के अन्त में रेचक कीजिये।

समय

जितनी देर श्वास रोकने की क्षमता हो, उतनी देर आसन कीजिये।

एकाग्रता

दृष्टि को किसी बिन्दु पर एकाग्र करते हुये संतुलन कायम रखने पर।

सीमाएँ

स्लिप डिस्क या साइटिका में इसका अभ्यास वर्जित है।

लाभ

यह आसन यकृत एवं अन्य उदरस्थ अंगों को क्रियाशील बनाता है।

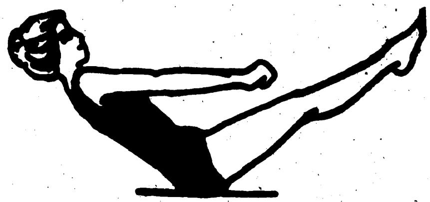
आँतों में स्थित कीटाणुओं को दूर करने में मदद करता है।

आँतों को क्रियाशील करता व सभी प्रदेशों को शक्ति प्रदान करता है।

एकाग्रता एवं सन्तुलन शक्ति बढ़ाता है।



उत्थित हस्त मेरुदण्डासन



अश्व संचालन आसन

उत्थित हस्त मेरुदण्डासन २

यह मेरुदण्डासन की भाँति है, अन्तर इतना ही है कि पैरों को परस्पर दूर न कर उन्हें समीप ले आइये। हाथ एवं पैर तने रहें।

शेष वर्णन मेरुदण्डासन की तरह ही है।

अश्व संचालन आसन ३

विधि

सीधे बैठ जाइये।

दोनों पैर एक-दूसरे के समीप रहें। घुटने छाती के पास रहें।

हाथों को कुहनियों से मोड़िये, ताकि मुट्ठी घुटने पर बाहर की ओर रखी जा सके।

हाथों एवं पैरों को सीधा करते हुये पीछे झुकिये।

हाथ और पैर पूरी तरह तने रहें तथा मुट्ठियाँ घुटनों पर रहें।

पूरा शरीर नितम्बों पर सन्तुलित रहेगा।

पैरों को सीधा रखते हुए उन्हें और ऊपर उठाने का प्रयत्न कीजिये।

कुछ समय तक अन्तिम अवस्था बनाये रखिये।

तत्पश्चात् प्रारम्भिक अवस्था में लौट आइये।

कुछ विश्रान्ति के बाद पुनः यह आसन कीजिये।

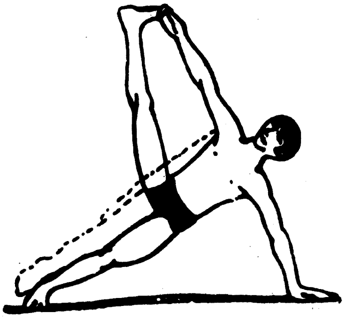
टिप्पणी

प्रारम्भिक अभ्यासियों के लिए यह उपयुक्त आसन है।

इस आसन में सफलता प्राप्ति के पश्चात् मेरुदण्डासन या उत्थित हस्त मेरुदण्डासन का अभ्यास करना चाहिये।

शेष विवरण मेरुदण्डासन के समान रहेंगे।

वशिष्ठासन



वशिष्ठासन

वशिष्ठासन

विधि

दाहिना पैर बायें पैर पर रखकर बायीं ओर लेट जाइये।

बायीं हथेली को बायें कंधे की सीध में जमीन पर रखिये। इस हाथ की अंगुलियाँ पैर की विरुद्ध दिशा में अर्थात् बाहर की ओर खुली रहें।

बायीं केहुनी को सीधा कीजिये तथा धड़ को जमीन से ऊपर उठाइये।

नितम्बों को इतना उठाइये कि शरीर तनी हुई दशा में आ जाये।

बायें पैर एवं हाथ पर शरीर ३० अंश का कोण बनाते हुये सधा रहेगा। दाहिने हाथ से दाहिने पैर के अग्र-प्रदेश को पकड़िये। इस पैर को ऊपर उठाकर सीधा तानकर रखिये।

पैरों पर दबाव डालते हुये शरीर को प्रारंभिक दशा में ले आइये।

श्वास

अंतर्कुम्भक लगाकर इस आसन का अभ्यास कीजिये।

पैरों की उठी स्थिति में सहज श्वास का अभ्यास किया जा सकता है।

आवृत्ति

दोनों पैरों से अधिक से अधिक ५ बार आसन का अभ्यास कीजिये।

एकाग्रता

शरीर के संतुलन एवं पैरों की मांसपेशियों के शिथिलीकरण पर।

लाभ

पैरों के स्नायुओं की मालिश होती है, भुजाओं को शक्ति मिलती है।

वातायनासन



प्रथम अवस्था अंतिम अवस्था

वातायनासन

विधि

सीधे खड़े होकर किसी दृश्य बिंदु पर चित्त को एकाग्र कीजिये।

बायें घुटने को मोड़कर बायें पाँव को दाहिनी जाँघ पर सामने रखिये जैसे कि अर्ध पद्मासन में किया जाता है।

दोनों हाथों को प्रार्थना की मुद्रा में छाती के सम्मुख रखिये।

दाहिने पैर को मोड़िये।

जितना संभव हो, शरीर को मोड़िये।

संभव हो तो बायें घुटने को जमीन पर टिका दीजिये।

अब धीरे-धीरे पुनः सीधी अवस्था में आ जाइये।

कुछ विश्राम के पश्चात् पुनः उपरोक्त क्रिया कीजिये।

प्रकारान्तर

भुजाओं को नीचे ४५ अंश पर सीधा रखकर इसका अभ्यास कीजिये।

श्वास

एक पैर पर खड़े रहने पर पूरक कीजिये।

शरीर को नीचे करते समय एवं उठते समय श्वास रोकिये।

वापस सीधी अवस्था में आकर रेचक कीजिये।

अंतिम अवस्था में सामान्य श्वास-प्रश्वास कीजिये।

आवृत्ति

प्रत्येक पैर से अधिकाधिक १० बार अभ्यास कीजिये।

एकाग्रता

स्थिर बिन्दु पर दृष्टि केन्द्रित करते हुये शारीरिक संतुलन पर।

लाभ

पैरों के स्नायुओं को शक्ति प्रदान करता है।

घुटनों की संधियों को लचीला बनाता है। इससे वात रोग में बहुत लाभ पहुँचता है।

अतिरिक्त मांसपेशियों को कम करता है।

वृक्क की असामान्य क्रिया में सामान्यता लाते हुए बहुमूत्र-दोष का निवारण करता है।

प्रजनन-संस्थान के स्नायुओं एवं नाड़ियों को शक्ति प्रदान करता है, फलतः वीर्य की रक्षा होती है।

नटवर आसन



नटवर आसन

नटवर आसन

विधि

खड़े हो जाइये । दाहिने पैर को बायें पैर के बायीं ओर रखिये ।
पैर भूमि से कुछ ऊपर रहे तथा तलवा सीधा लम्बरूप रहे ।
बायीं पिंडली पर दाहिने पैर के अग्र भाग को रखिये ।
दोनों हाथों को उठाकर बाँसुरी बजाने की स्थिति में आइये ।

समय

प्रत्येक पैर से क्षमतानुसार अधिक से अधिक देर अभ्यास कीजिये ।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : आज्ञा चक्र पर ।

लाभ

नाड़ियों को नियंत्रित कर एकाग्रता बढ़ाने में मदद करता है ।
ध्यान के अभ्यासी को अच्छी तरह तैयार करता है ।

नटराज आसन



पहली स्थिति

नटराज आसन १ (पहली स्थिति)

विधि

सीधी खड़ी स्थिति में दाहिने पैर को पीछे की ओर मोड़कर अधिक से अधिक ऊपर ले जाइये। दाहिने हाथ से पैर के टखने को पकड़िये।

बायें हाथ को सामने करते हुये धड़ को सामने कुछ ऊपर उठाइये।

बायें हाथ से चिन्मुद्रा कीजिये और इस पर दृष्टि केन्द्रित कीजिये।

समय

क्षमतानुसार प्रत्येक पैर से अधिकतम समय तक अन्तिम अवस्था में रहने का प्रयत्न कीजिये।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : भ्रूमध्य पर।

लाभ

तंत्रिका-तंत्र में संतुलन लाता है, पैरों की मालिश करता है तथा शरीर में नियंत्रण एवं मानसिक एकाग्रता लाने में सहायता करता है।



अन्तिम स्थिति

नटराज आसन १ (अन्तिम स्थिति)

विधि

प्रथम स्थिति की भाँति ही है। अंतर इतना है कि इसके अभ्यास में पीछे मोड़े गये पैर के टखने को पकड़कर अंगूठे को पकड़ा जाता है।

पीछे मुड़े हुए दाहिने हाथ की केहुनी ऊपर की ओर मुड़ी रहे।

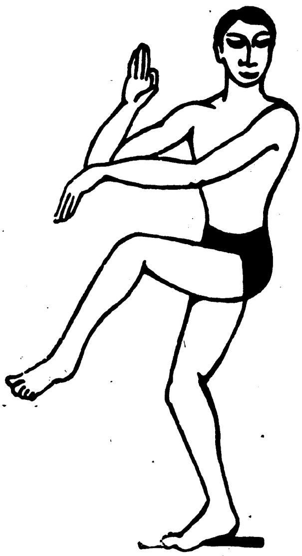
हाथ एवं पैर की उपरोक्त स्थिति के कारण दाहिना पैर सिर के भाग पिछले के अधिक से अधिक समीप रहेगा।

पुराने अभ्यासी पैर के अंगूठे का स्पर्श सिर के पीछे कर सकते हैं या दोनों हाथों से अंगूठे को पकड़ सकते हैं।

टिप्पणी

प्रारंभिक आसन में सफलता-प्राप्ति के उपरांत ही इसका अभ्यास किया जाये।

शेष विवरण पहली स्थिति की भाँति ही है।



नटराज आसन २

नटराज आसन २

विधि

सीधे खड़े हो कर बायें पैर को ऊपर उठाइये।

पंजा शरीर से बाहर की ओर कुछ दूर रहे।

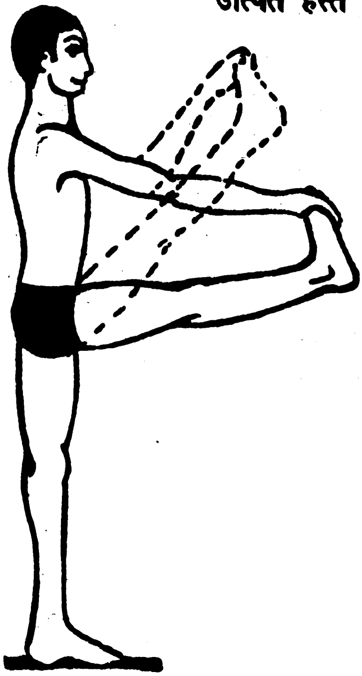
बायें हाथ को बायें पैर के ऊपर उसी रेखा में इस प्रकार रखिये कि वह बाहर की ओर नीचे झुकी अवस्था में रहे।

दाहिने हाथ को केहुनी से मोड़िये। यह केहुनी निचली भुजा के ऊपर रखिये। अंगुलियों से चिन्मुद्रा या ज्ञानमुद्रा लगाइये।

शरीर से दूर क्षितिज की ओर एकाग्रतापूर्वक देखिये।

शेष विवरण वही है जो नटराज आसन १ में वर्णित है।

उत्थित हस्त पादांगुष्ठासन



स्थिति (१)



स्थिति (२)

उत्थित हस्त पादांगुष्ठासन

विधि १

दोनों पैरों को समीप रखकर सीधे खड़े हो जाइये।

दाहिने पैर को घुटने से मोड़ कर छाती के समीप ले आइये।

दाहिनी भुजा को मुड़े हुए पैर के बाहर रखकर अंगूठे को पकड़िये।

दाहिने पैर को सीधा कीजिये और ऊपर उठाने का प्रयास कीजिये।

बिना तनाव के जितनी देर हो सके, इस अवस्था में रुकिये।

तत्पश्चात् पहले की स्थिति में आ जाइये। पैर सीधा ही रहे।

विधि २

प्रथम क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये परन्तु ऊपर सीधे उठे पैर को दोनों हाथों से पकड़कर सिर के निकट लाने का प्रयत्न कीजिये।

पुराने अभ्यासी उठाये हुए पैर से ठुड्डी का स्पर्श कर सकते हैं।

बिना किसी असुविधा के कुछ समय इस अवस्था में रुकिये। अब हाथों को शिथिल कर प्रारम्भिक अवस्था में लौट आइये।

विधि ३

प्रथम क्रिया की पुनरावृत्ति बायें पैर को उठाते हुए कीजिये।

दाहिने हाथ को दाहिने बाजू में ही ऊपर की ओर उठाइये।

उठे हुए पैर को धड़ के अधिकतम निकट लाने की कोशिश कीजिये।

आरामपूर्वक जितनी देर सम्भव हो, इस स्थिति में रुकिये।

तत्पश्चात् हाथ की पकड़ ढीली कर पैर को भूमि पर सीधा टिकाइये।

श्वास

सीधे तने हुए पैर को ऊपर एवं शरीर के निकट लाते समय रेचक कीजिये।

अन्तिम अवस्था में लम्बा पूरक कीजिये।

तने हुए पैर को नीचे लाते समय रेचक कीजिये।

समय

पूर्णावस्था को १ मिनट तक बनाये रखिये। इतनी ही अवधि अन्य दो प्रक्रियाओं के लिये भी उपयुक्त है।

दोनों पैरों से ५-५ बार इस क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

यदि समय पर्याप्त हो तो तीनों प्रक्रियाओं का अभ्यास करना चाहिये।

एकाग्रता

शरीर के सम्मुख किसी स्थिर बिन्दु पर।

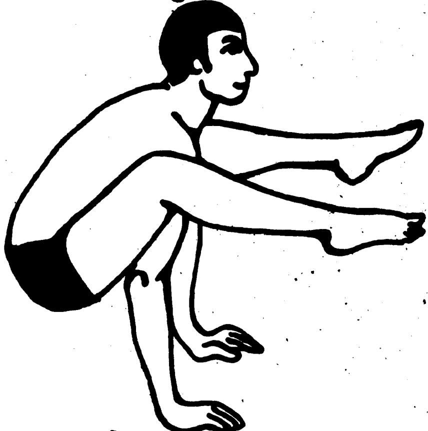
लाभ

एकाग्रता में वृद्धि करता है।

मांसपेशियों एवं नाड़ी-तन्तुओं के मध्य सहयोग स्थापित करता है।

पैरों के स्नायुओं को सीधा कर उन्हें बल-प्रदान करता है।

द्वि हस्त भुजंगासन



द्वि हस्त भुजंगासन

द्वि हस्त भुजंगासन

विधि

पैरों को परस्पर करीब आधा मीटर दूर रखकर बैठ जाइये।

पैरों के मध्य जमीन पर दोनों हथेलियों को सीधा टिका दीजिये।

बायें पैर को बायीं भुजा के ऊपरी प्रदेश पर बाहरी ओर टिकाइये।

इसी भाँति दाहिने पैर को दाहिनी केहुनी के ऊपर रखिये।

यह अन्तिम क्रिया सन्तुलन को सम्भालते हुए करनी चाहिये।

जितनी देर आराम से रह सकें, स्थिर रहिये तथा फिर लौट आइये।

श्वास

अन्तिम स्थिति में श्वास-प्रश्वास प्रक्रिया सामान्य रहेगी।

एकाग्रता

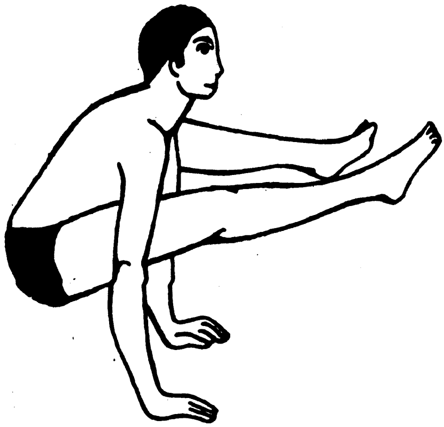
शारीरिक सन्तुलन पर।

लाभ

भुजाओं की मांसपेशियों में वृद्धि करता है। कन्धों की सन्धियों को लचीला बनाता है। उदर, पेड़ू एवं उसके पृष्ठ-प्रदेश, वृक्क तथा तिल्ली की अच्छी मालिश करता है।

क्लोम ग्रंथि से मधुवशि (इन्सुलिन) के स्राव हेतु उत्प्रेरक का कार्य करता है। अतः मधुमेह के रोगी के लिये लाभप्रद है।

एक हस्त भुजंगासन



एक हस्त भुजंगासन

एक हस्त भुजंगासन

विधि

पैरों को सामने फैलाकर भूमि पर बैठ जाइये।

बायें पैर को बायीं भुजा के ऊपरी भाग पर बाहर की ओर रखिये।

दाहिनी जाँघ का स्पर्श बायीं भुजा के पृष्ठ-भाग से हो।

दोनों हथेलियों को खोलकर भूमि पर रखिये।

दाहिनी हथेली दाहिने पैर के बाहर की ओर हो।

समस्त शरीर को भूमि के ऊपर उठाइये। दोनों हाथों के मध्य दाहिना पैर भूमि के समानान्तर सीधा रहेगा।

इस अन्तिम अवस्था में आराम से जितनी देर रुक सकें, रुकिये।

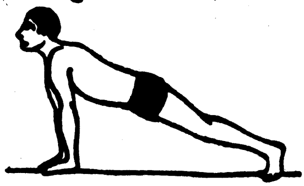
तत्पश्चात् प्रारम्भिक अवस्था में लौट आइये।

इस क्रिया को दूसरे पैर से कीजिये।

टिप्पणी

यह द्वि हस्त भुजंगासन का ही एक प्रकार है। अतः शेष विवरण उसी की भाँति है।

सन्तुलन आसन



सन्तुलन आसन



प्रकारान्तर (१)　　　प्रकारान्तर (२), (३)

सन्तुलन आसन

विधि

मार्जारि आसन में नितम्बों को उठाइये तथा घुटनों को सीधा कर सुमेरु आसन कीजिये। कंधों को सामने लाइये।

नितम्बों को नीचे करते हुए शरीर को सीधे तनी हुई स्थिति में लाइये।

१. एक हाथ को उठाकर शरीर को विपरीत दिशा में घुमाइये।

पुनः मूल अवस्था में आइये। इस क्रिया को दूसरी ओर से दुहराइये।

२. एक हाथ को उठाकर पीठ के पीछे रखिंये। जितनी देर सम्भव हो, इस दशा में स्थिर रहिये। तत्पश्चात् हाथ को हटा लीजिये।

३. एक पैर को ऊपर उठाकर पीछे ऊपर की ओर सीधा कीजिये।

जब तक संभव हो, इस स्थिति में पैर को रखिये। तत्पश्चात् नीचे कर लीजिये।

श्वास

मूल अवस्था में सामान्य। प्रकारांतर क्रियाओं में भीतर रोकी जायेगी।

समय

जितना अधिक सम्भव हो, इस आसन का अभ्यास कीजिये।

लाभ

नाड़ी-संस्थान के सभी भागों को लाभ पहुँचाता है।

पादांगुष्ठासन



पादांगुष्ठासन

पादांगुष्ठासन

विधि

उकड़ूँ बैठ जाइये। एड़ियों को ऊपर उठाइये।

घुटनों को नीचे झुका कर जाँघों को क्षैतिज स्थिति में लाइये।

एक पैर को दूसरे पैर की जाँघ पर रखिये।

सन्तुलन रखने वाले पैर का दबाव गुदा एवं लिंग प्रदेश के मध्य हो।

दोनों हथेलियों को छाती के सामने जोड़कर प्रार्थना की मुद्रा में रखिये।

एकाग्रता

एक बिन्दु पर दृष्टि केन्द्रित करते हुए सन्तुलन रखने पर।

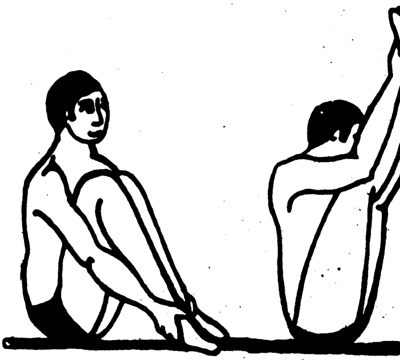
समय

जितनी देर संभव हो, क्रमशः दोनों पैरों से संतुलन का अभ्यास करें।

लाभ

प्रजनन-संस्थान को नियमित करता है। ब्रह्मचर्य-पालन व धातु प्रमेह में लाभदायक है। समतल पैरों (flat foot) को ठीक करता है। पैरों के अग्र भागों तथा टखनों को शक्ति प्रदान करता है।

निरालम्ब पश्चिमोत्तानासन



निरालम्ब पश्चिमोत्तानासन

निरालम्ब पश्चिमोत्तानासन

विधि

घुटनों को मोड़कर बैठ जाइये। तलवें जमीन पर समतल रहें।

पैरों के बाहर की ओर से तलवों को पकडिये। पैरों को ऊपर उठाकर घुटनों को सीधा कीजिये। शारीरिक संतुलन नितम्बों पर रहेगा।

घुटनों से नासिका के स्पर्श का प्रयत्न कीजिये।

श्वास

बैठी अवस्था में पूरक कीजिये

पैरों को उठाने, सन्तुलन करने एवं नीचे लाते समय कुंभक कीजिये।

पूर्व स्थिति में रेचक व सन्तुलित अवस्था में स्वाभाविक श्वास।

समय

एक बार में अधिक से अधिक ३ मिनट तक अभ्यास कीजिये।

गत्यात्मक रूप में अधिकतम ५ बार अभ्यास कीजिये।

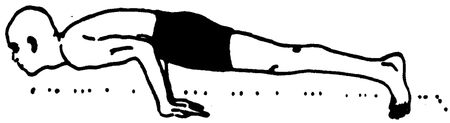
सीमाएँ

स्लिप डिस्क, साइटिका अथवा हड्डियों के दीर्घकालीन दर्द में वर्जित है।

लाभ

क्लोम को क्रियाशील बनाता है, पृष्ठ-प्रदेश के स्नायुओं को शिथिल करता है तथा श्रोणि-प्रदेश की संधियों को लचीला बनाता है।

हंसासन



हंसासन

हंसासन

विधि

उकड़ूँ बैठकर हथेलियों को दोनों घुटनों के बीच भूमि पर रखिये।

अंगुलियों का रुख पैरों की ओर रहे। हाथों को कुहनियों से मोड़िये।

कुहनियाँ ऊपर एक-दूसरे के पास उदर के निम्न भाग पर रहें।

धीरे-धीरे सामने झुकिये। ऊपरी भुजाओं एवं कुहनियों पर उदर-प्रदेश को टिका दीजिये।

पैरों को पीछे की ओर सीधा कीजिये। वे पूर्णतः तने हुए रहें।

समय

जितनी देर सुखद स्थिति में रह सकें।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : मणिपुर चक्र पर।

शारीरिक एवं मानसिक : श्वसन या उदर-प्रदेश पर।

क्रम

दिन में खाली पेट किसी भी समय अभ्यास किया जा सकता है।

सीमाएँ

पेट या अन्ननलिका में घाव होने पर, उच्च रक्त चाप, हर्निया, क्षारीय अवस्था, तेज दवा के सेवन से रक्त-नलिकाओं के फैल जाने पर वर्जित है।

टिप्पणी

मयूरासन की पूर्व तैयारी है।

लाभ

उदर प्रदेश के अंगों एवं स्नायुओं को शक्ति प्रदान करता है।

आमाशय एवं आँतों के कृमियों को बाहर निकालने में मदद करता है।

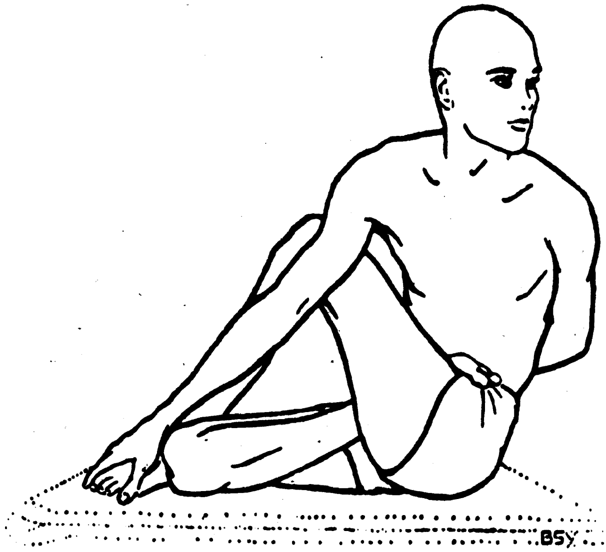
पाचन-क्रिया को उत्तेजित करता है। अप्चन व आँव दूर करता है।

उच्च अभ्यास के आसन

प्रारम्भिक सरल आसनों के नियमित अभ्यास से शरीर में उपयुक्त लचीलापन आ जाने के पश्चात् उच्च अभ्यासियों को ही इन आसनों का अभ्यास करना चाहिये। प्राथमिक एवं माध्यमिक वर्ग के आसनों के अभ्यास में अच्छी सफलता-प्राप्ति के उपरान्त ही इस वर्ग के आसनों के अभ्यास के प्रयास की सलाह दी जाती है। सत्य तो यह है कि यदि नये अभ्यासी आसनों के अभ्यास की सामान्य क्षमता रखते हुये इन कठिन आसनों के सम्पादन का प्रयत्न करें तो उन्हें उत्साहित होने के बजाय निरुत्साहित होना पड़ेगा। उनके मानस-पटल पर गलत प्रभाव पड़ेगा। वे इन आसनों को ठीक वैसे ही असंभव कार्य समझने लगेंगे, जैसे कि बाहरी व्यक्ति सरकस के व्यायाम को समझता है। वास्तव में यह गलत धारणा है। स्वस्थ व्यक्तियों के लिये इन आसनों का अभ्यास कदापि असंभव नहीं। आवश्यकता इस बात की है कि शरीर के तैयार होने पर उपयुक्त समय में इनका अभ्यास प्रारम्भ किया जाये; इसके पूर्व नहीं।

इन आसनों के अभ्यास के समय इस बात पर विशेष ध्यान देना चाहिये कि किसी प्रकार का शारीरिक तनाव न पड़ने पाये; अन्यथा चोट पहुँचने की संभावना रहती है। कारण यह है कि इन आसनों में पैरों को असामान्य रूप से मोड़ा जाता है। पैरों को शक्तिपूर्वक एक दिन में पूर्णावस्था में लाने की कोशिश कर शरीर को क्षति पहुँचाने की अपेक्षा उत्तम यह होगा कि उन्हें प्रतिदिन थोड़ा-थोड़ा मोड़कर कुछ दिनों के अभ्यास के उपरांत अंतिम स्थिति प्राप्त की जाये।

पूर्ण मत्स्येन्द्रासन



पूर्ण मत्स्येन्द्रासन

पूर्ण मत्स्येन्द्रासन

विधि

बायें पैर को दाहिनी जाँघ पर अर्ध पद्मासन की स्थिति में रखिये।

दाहिने पैर को बायें घुटने के बायें बाजू में रखिये।

तलवा भूमि पर समतल रहे।

शरीर को दाहिनी ओर मोड़िये।

बायें हाथ से दाहिने पैर के टखने को पकड़िये या संभव हो तो उसी पैर के अंगूठे को पकड़िये। इस हाथ की बगल दाहिने पैर के उठे हुये घुटने के समीप दाहिनी ओर रहे।

दाहिने हाथ को पीठ के पीछे ले जाकर इसी हाथ से बायीं एड़ी को पकड़ने का प्रयत्न कीजिये।

बायें हाथ का सहारा लेकर कमर को दाहिनी ओर अधिक मोड़िये।

अंत में सिर को भी दाहिनी ओर मोड़िये। सिर झुकने न पाये। बिना

तनाव के आराम की स्थिति में इस अंतिम अवस्था में कुछ देर रुकिये। तत्पश्चात् धीरे-धीरे सिर को सामान्य स्थिति में ले आइये।

दूसरे पैर से यही क्रिया दुहराइये।

श्वास

शरीर को मोड़ते समय रेचक।

पूर्णावस्था में सामान्य श्वास एवं सामने लौटते समय पूरक।

समय

शरीर के प्रत्येक ओर सुखदायक अवधि तक अंतिम स्थिति में रुकिये।

साधारण स्वास्थ्य लाभ के लिये डेढ़ मिनट का अभ्यास पर्याप्त है।

एकाग्रता

भ्रूमध्य, पीठ के शिथिलीकरण, निम्न उदर या श्वसन पर।

टिप्पणी

महान् योगी मत्स्येन्द्रनाथ के नाम पर इस आसन का नामकरण हुआ है जो इस आसन में घंटों ध्यान किया करते थे। मेरुदण्ड को मोड़कर किये जाने वाले आसनों के मध्यम वर्ग में वर्णित अर्ध मत्स्येन्द्रासन की यह पूर्णावस्था है।

लाभ

अधिक प्रभावशाली रूप में वही लाभ हैं जो अर्ध मत्स्येन्द्रासन के हैं। पृष्ठ प्रदेश की मांसपेशियों को लचीला व मेरुदण्ड की संधियों, कशेरुकाओं का कड़ापन दूर कर तंतुओं को तनावरहित करता है। ग्रीवा प्रदेश में एकत्रित रक्त पर दबाव डाल उसमें बहाव उत्पन्न करता है तथा उससे संबंधित नाड़ियों को शक्ति प्रदान करता है।

उदर-प्रदेश की सभी बीमारियों के उपचार के लिये लाभप्रद आसन है।

इससे अपचन तथा मधुमेह आदि का निवारण होता है।

उपवृक्क ग्रंथि के रक्तस्राव को नियमित करता है।

कमर-दर्द व वात-रोग दूर करता है। साथ ही गर्दन, सिर तथा पीठ के दर्द से मुक्ति दिलाता है। पैरों के स्नायुओं को नरम करता है तथा संधियों का कड़ापन दूर करता है।

कूर्मासन



कूर्मासन

कूर्मासन

विधि

पैरों को दूर-दूर रखकर बैठ जाइये। सामने झुकिये।

दोनों हाथों को घुटनों के नीचे ले जाइये। हथेलियाँ खुली रहें।

कपाल को भूमि पर झुकाइये। घुटनों के नीचे ही से हाथों को अधिक पीछे ले जाइये तथा उनकी अंगुलियों को बाँध कर पीछे रखिये।

घुटनों को ऊपर उठाइये। तलवों को भूमि पर समतल रखिये।

एड़ियों को उठाकर हाथों को शिथिल कीजिये। वापस लौट आइये।

श्वास

झुकते समय रेचक कीजिये। अंतिम अवस्था में सामान्य श्वास-क्रिया।

समय

आध्यात्मिक लाभ हेतु अधिक देर तक अभ्यास करना चाहिये।

शारीरिक एवं मानसिक लाभ के लिये पन्द्रह मिनट तक।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : स्वाधिष्ठान या मणिपुर चक्र पर।

भौतिक : पीठ के स्नायुओं के शिथिलीकरण व निम्न उदर-प्रदेश पर।

क्रम

इसके उपरांत पीछे झुकने वाले आसन का अभ्यास करना चाहिये।

सीमाएँ

स्लिप डिस्क, साइटिका या हड्डियों के दीर्घकालीन दर्द में वर्जित।

लाभ

अपने स्थान से सरकी हुई कशेरुकाओं को पुनः यथास्थान स्थापित करता है। पीठ-दर्द, सिर-दर्द, गर्दन के दर्द को दूर करता है।
गुर्दों को शक्ति प्रदान करता है।

धनुराकर्षण आसन



धनुराकर्षण आसन

धनुराकर्षण आसन

विधि

दाहिने पैर को बायीं जाँघ पर अर्ध पद्मासन की स्थिति में रखिये।

बायें पैर के अंगूठे को दाहिने हाथ से पकड़िये। पैर सीधा तना रहे।

दाहिने पैर के अंगूठे को बायें हाथ से पकड़कर कान के समीप लाइये पीठ या गर्दन झुकने न पाये।

श्वास

बैठी हुई अवस्था में पूरक ।

अंगूठे को उठाते समय कुम्भक ।

अर्ध पद्मासन से लौटकर रेचक कीजिये।

आवृत्ति

प्रत्येक पैर से अधिकतम १० बार इसे कीजिये।

लाभ

निम्न उदर-प्रदेश के अंगों को शक्ति प्रदान करता है।

मेरुदण्ड का व्यायाम कराता है।

ऊपरी भुजा के स्नायुओं तथा टखनों को शक्ति प्रदान करता है।

हाइड्रोसील का उपचारात्मक आसन है।

वृश्चिकासन



वृश्चिकासन

वृश्चिकासन

विधि

शीर्षासन में पीठ और पैरों को कमान की तरह मोड़िये।

दोनों भुजाओं को अपने स्थान से हटाकर सामने इस तरह रखिये कि वे दोनों एक-दूसरे के समानांतर सिर के दोनों ओर रहें ।

सिर के पीछे पैरों को जमीन की ओर अधिक से अधिक मोड़िये।

सिर को धीरे से कुछ पीछे कर जमीन से ऊपर उठा लीजिये।

संपूर्ण शरीर का संतुलन केहुनियों तथा हथेलियों पर रहेगा। सुखदायक स्थिति तक तनाव रहित अवस्था में कुछ देर रुकिये।

तत्पश्चात् शीर्षासन की स्थिति में लौटकर भूमि पर लौट आइये।

टिप्पणी

सिर के पीछे से दोनों पैरों को जमीन पर टिकाकर धीरे से खड़े हो जाइये। अंतिम स्थिति के उपरांत सामान्य स्थिति में वापस लौटने की यह भी एक विधि है।

श्वास

मूल अवस्था में आते समय अंतर्कुम्भक करें और मूलावस्था में श्वसन-क्रिया सामान्य रहेगी।

समय

जितनी देर संभव हो सके ।

एकाग्रता

संतुलन पर ।

क्रम

आसन - क्रम के अंत में अभ्यास कीजिये ।

इस अभ्यास के उपरांत सामने झुकने वाला कोई आसन कीजिये, जैसे पश्चिमोत्तानासन । इस आसन का अभ्यास कुछ सेकेण्ड तक कीजिये ।

तत्पश्चात् आधा मिनट ताड़ासन कर अंत में शवासन कीजिये ।

सावधानी

आसन में पूर्ण सफलता - प्राप्ति तक इसे दीवाल के समीप कीजिये ।

अभ्यास - स्थान के समीप किसी प्रकार का सामान न रहे ।

लाभ

शरीर में स्थित 'प्राणशक्ति' को पुनर्संगठित करता है जो कि शारीरिक ह्रास को रोकती है ।

नाड़ियों में स्थिरता लाता है ।

मस्तिष्क तथा पीयूष ग्रंथि में प्रचुर मात्रा में रक्त संचार करता है ।
पैरों के निचले प्रदेश तथा निम्न उदर को जमे हुये रक्त से मुक्त करता है । इस प्रकार बवासीर तथा फैली हुई नसों के लिये लाभप्रद है ।

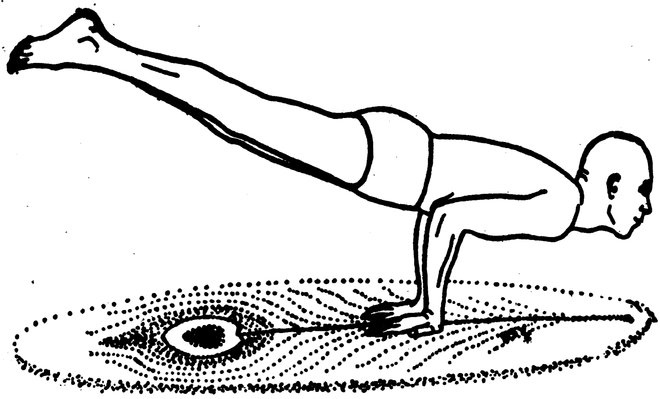
लैंगिक ग्रंथियों को संतुलित करता है तथा शुद्ध रक्त-संचार द्वारा उनके दोषों का निवारण करता है ।

स्नायुओं की मालिश होती है तथा कशेरुकाओं का लचीलापन दूर होता है ।

टिप्पणी

वृश्चिकाकृति के कारण ही इसका यह नाम नहीं रखा है, वरन् इसलिये रखा गया है कि इसके अभ्यास द्वारा अभ्यासी ग्रीवा - प्रदेश के अमृत - केन्द्र तथा विषतत्वों पर नियंत्रण प्राप्त करता है ।

मयूरासन



मयूरासन

मयूरासन

विधि

हंसासन में आ जाइये।

शरीर के स्नायुओं पर बल डालते हुए धड़ एवं पैरों को ऐसी स्थिति में रखिये कि वे जमीन के ऊपर क्षैतिज अवस्था में रहें।

सम्पूर्ण शरीर का सन्तुलन हथेलियों पर रहेगा। यह पूर्णावस्था है।

बिना तनाव के इस स्थिति में कुछ देर रुकिये। तत्पश्चात् सावधानी पूर्वक मूल अवस्था में लौट आइये। श्वास की गति सामान्य होने पर आसन की पुनरावृत्ति की जा सकती है।

टिप्पणी

क्षमतानुसार पैरों को धरातल से अधिक से अधिक ऊपर उठाइये।

श्वास

शरीर को भूमि से ऊपर उठाते समय रेचक कीजिये।

अन्तिम स्थिति में बहिर्कुम्भक लगाइये।

शरीर को नीचे करते समय पूरक कीजिये।

समय

श्वास को जितनी देर रोकने की क्षमता हो, उतनी देर कीजिये।

यदि सामान्य श्वसन-क्रिया करते हुए अभ्यासी अधिक देर तक अभ्यास करना चाहता हो तो उसे तभी तक अभ्यास करना चाहिये जब तक कि स्नायुओं पर किसी प्रकार का तनाव न पड़े।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : मणिपुर चक्र पर।

शारीरिक : पूर्णावस्था में संतुलन पर।

क्रम

अशुद्ध रक्त वाले लोग आसन-सत्र के अन्त में इसका अभ्यास करें।

इस आसन के उपरान्त सिर के बल किए जाने वाले आसनों का अभ्यास निश्चित रूप से नहीं किया जाना चाहिये।

सीमाएँ

उच्च रक्तचाप, हर्निया या जठर में घाव वाले व्यक्तियों को इसका अभ्यास नहीं करना चाहिये।

लाभ

शरीर की चयापचय-क्रिया को प्रेरित करता है। अतः शरीर के विभिन्न अंगों में रस स्राव में वृद्धि होती है। अन्न नलिका तथा आँतों को त्याज्य पदार्थों से रिक्त करता है।

रक्त से विषैले पदार्थों को दूर कर उसका शुद्धिकरण करता है। इससे चर्म रोग, फोड़े आदि दूर करने में मदद मिलती है।

उदर-विकारों में इसके अभ्यास की सलाह दी जाती है।

मधुमेह के रोगी को इसका अभ्यास अवश्य करना चाहिये।

यदि विषैले तत्त्वों को दूर करने के लिये इस आसन के अभ्यास की सलाह दी जाये तो निम्न विधि से शरीर को तैयार करना चाहिये –

१. दूध, चर्बीयुक्त पदार्थ, मांस तथा देर से पचने वाले अन्य भोज्य पदार्थों का त्याग कीजिये। मसाले का उपयोग बंद कर दीजिये।

२. एक माह तक साग, फल, हरी-सब्जी, चावल आदि सामान्य भोजन ग्रहण कीजिये।

३. दो हफ्ते तक इस प्रकार नियंत्रित भोजन ग्रहण करने के पश्चात् मयूरासन का अभ्यास प्रारम्भ कीजिये। जितनी बार हो सके, इसका अभ्यास कीजिये।

टिप्पणी

इस आसन की अवस्था मोर सी दिखाई देती है, साथ ही इसके अभ्यास से अभ्यासी के शरीर के विषैले तत्त्व ठीक उसी तरह दूर हो जाते हैं जैसे कि मयूर सर्प खाने के पश्चात् विष से प्रभावहीन रहता है।

पद्म मयूरासन



पद्म मयूरासन

पद्म मयूरासन

विधि

पद्मासन में बैठिये। तत्पश्चात् शरीर को घुटनों पर उठाइये।

हथेलियों को घुटनों के सामने रखिये। अंगुलियाँ घुटनों की ओर रहें।

कुहनियों को झुकाते हुये उन्हें पेट के दोनों ओर लाइये।

सामने की ओर झुकिये तथा सीने को भुजाओं पर साधिये।

धीरे-धीरे पैरों को ऊपर उठाइये और पूरे शरीर को हथेलियों पर जमीन के समानान्तर लाने का प्रयत्न कीजिये।

श्वास

पहले पूरक कीजिये। फिर शरीर को उठाते हुये कुंभक।

पूर्व स्थिति में लौटते हुए रेचक।

आवृत्ति

साधारण स्वास्थ्य में ३ से ५ बार करें।

मधुमेह जैसी बीमारी में जितनी बार कर सकें।

एकाग्रता

उदर के अन्दर भरी हुई श्वास पर।

लाभ

पाचन क्रिया की अनियमितता तथा बढ़े हुए प्लीहा के उपचार में सहायता करता है।

क्लोम को मधुवशि की उत्पत्ति के लिये प्रेरित करता है।

शेष विवरण मयूरासन की तरह है।

हनुमानासन



हनुमानासन

हनुमानासन

विधि

दाहिने घुटने को ज़मीन से टिकाकर बैठिये ।

बायें पैर को दाहिनें घुटने के बाजू में रखिये ।

शरीर के दोनों तरफ दोनों हथेलियों को भूमि पर समतल रखिये ।

धीरे-धीरे बायें पैर को सामने एवं दाहिने पैर को पीछे फैलाइये ।

इस क्रिया में शरीर को हाथों से सहारा दीजिये ।

नितम्बों को भूमि पर टिकाने तक उपरोक्त क्रिया कीजिये ।

हथेलियों को जोड़कर प्रार्थना की स्थिति में छाती के सम्मुख रखिये ।

समय

सुखपूर्वक जितनी देर हो सके, प्रत्येक ओर से अभ्यास कीजिये ।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : आज्ञा या अनाहत चक्र पर ।

क्रम

इस आसन के पश्चात् दोनों पैरों को सामने फैलाकर बैठ जाइये ।

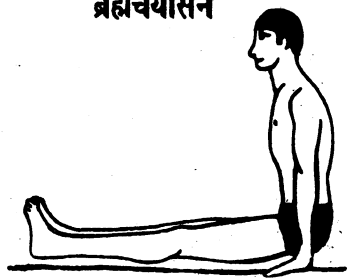
लाभ

सामने के अंगों तथा स्नायुओं पर लाभदायक प्रभाव डालता है ।

प्रजनन-संबंधी दोषों को दूर करने में उपयोगी है । तथा अंगों को वेदनारहित प्रसव हेतु तैयार करता है ।

पैरों, जाँघों तथा श्रोणि-प्रदेश के रक्त-संचालन में सुधार करता है ।

ब्रह्मचर्यासन



ब्रह्मचर्यासन

ब्रह्मचर्यासन

विधि

पैरों को सामने फैलाकर बैठ जाइये।

हथेलियों को नितम्बों के समीप रखिये। अंगुलियाँ सामने की ओर रहें।

भुजाओं पर बल डालते हुये शरीर को भूमि से ऊपर उठाइये। पैर सीधे एवं जमीन के समानांतर रहें।

सम्पूर्ण शरीर हाथों के सहारे संतुलित रहेगा।

श्वास

शरीर भूमि पर हो, तब पूरक कीजिये।

संतुलन करते समय अंतर्कुम्भक कीजिये।

जमीन पर लौटते समय रेचक कीजिये।

आवृत्ति

जितनी देर हो सके, कीजिये। इसकी पुनरावृत्ति ३ बार कीजिये।

एकाग्रता

आध्यात्मिक : मणिपुर चक्र पर।

क्रम

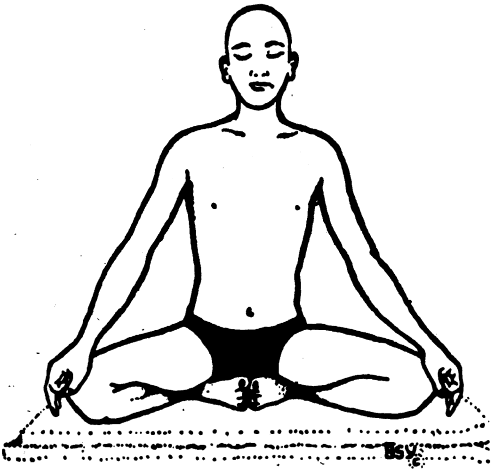
ब्रह्मचर्यासन के उपरांत शवासन या अद्वासन कीजिये।

लाभ

उदरस्थ-अंगों तथा मांसपेशियों को मजबूत बनाता है।

काम-शक्ति की रक्षा चाहने वालों को इसका अभ्यास करना चाहिये।

मूलबन्धासन



मूलबन्धासन

मूलबन्धासन

विधि

दोनों पैरों को सामने फैलाकर बैठ जाइये।

घुटनों को मोड़िये तथा तलवों को मिलाकर गुदा-द्वार तथा लिंग प्रदेश के मध्य नीचे रखकर एड़ियों पर बैठ जाइये।

एड़ियों का दबाव दोनों जाँघों के मध्य में रहे।

एड़ियों का रुख सामने या पीछे की ओर रह सकता है।

पैरों के तनाव-मुक्त हो जाने के उपरांत क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

एकाग्रता

अंतिम स्थिति में नासिकाग्र दृष्टि का अभ्यास कीजिये।

सावधानी

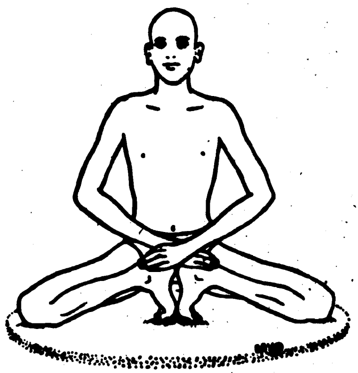
पैरों एवं पंजों पर तनाव न पड़ने पाये।

लाभ

आध्यात्मिक : यह ऐसा अभ्यास है जिसमें मूलबंध स्वतः लग जाता है। ब्रह्मचर्य-पालन के लिये यह शक्तिशाली आसन है।

शारीरिक : लैंगिक तथा निम्न-अंगों को शक्ति प्रदान करता है।

गोरक्षासन



गोरक्षासन

गोरक्षासन

विधि

मूलबन्धासन की तरह एड़ियों को समीप रखिये। एड़ियों को दोनों जाँघों के मध्यवर्ती स्थल के नीचे न रखकर उन्हें नाभि की ओर उठा कर सामने रखिये। पैरों के अग्र भाग भूमि पर रहेंगे। दोनों हाथों की कलाइयों को कैंचीनुमा स्थिति में रखकर उनसे एड़ियों को पकड़िये। दाहिने हाथ की अंगुलियाँ बायीं एड़ी पर एवं बायें हाथ की अंगुलियाँ दाहिनी एड़ी पर रहेंगी। मेरुदण्ड सीधा हो व मुख सामने रहे।

श्वास

अन्तिम अवस्था में सामान्य।

एकाग्रता

अन्तिम स्थिति में नासिकाग्र दृष्टि का अभ्यास कीजिये।

सावधानी

इस आसन के लिये पैरों एवं पंजों का लचीला होना आवश्यक है।

लाभ

आध्यात्मिक : जो व्यक्ति सुखपूर्वक लम्बी अवधि तक अन्तिम अवस्था में रह सकते हैं; वे इस आसन का उपयोग ध्यान के लिये कर सकते हैं। इसका नामकरण महान योगी 'गोरखनाथ' के नाम पर हुआ हैं।

शारीरिक : पैरों एवं पंजों को लचीला बनाता है।

अष्ट वक्रासन



अष्ट वक्रासन

अष्ट वक्रासन

विधि

पैरों को लगभग आधा मीटर दूर रखते हुए खड़े हो जाइये।
घुटनों को मोड़िये। पैरों के मध्य से बायीं हथेली को भूमि पर रखिये।

दाहिनी हथेली को दाहिने पैर के कुछ सामने जमीन पर रखिये। बायें पैर को बायीं भुजा पर रखिये।

भुजाओं के मध्य बायीं भुजा के निकट दाहिने पैर को फैलाइये।

दोनों जाँघों के मध्य स्थित भुजा को इस प्रकार रहना चाहिये कि उसकी केहुनी जाँघों के नीचे रहे।

दोनों हाथों को केहुनी-प्रदेश से मोड़िये।

शरीर को भुजाओं पर सन्तुलित कीजिये। यह पूर्णावस्था है।

शरीर के दूसरी ओर से यही क्रिया कीजिये।

श्वास

पूर्णावस्था में सामान्य श्वास-प्रश्वास।

एकाग्रता

सन्तुलन बनाये रखने पर।

क्रम

आसनोपरान्त शवासन या अद्वासन कीजिये।

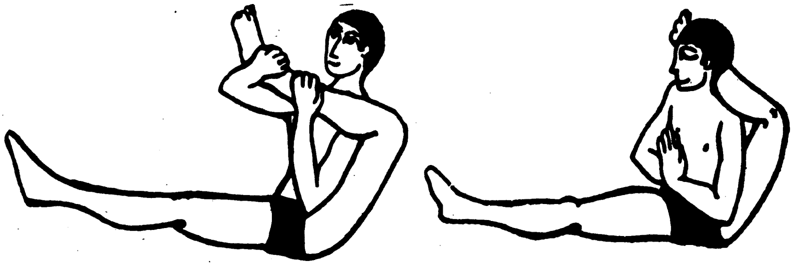
लाभ

संपूर्ण शरीर तथा मस्तिष्क के नाड़ी, तन्तुओं को नियंत्रित करता है।

टिप्पणी

प्राचीन भारत के एक महान सन्त अष्टावक्र (जिनके आठ अंग टेढ़े थे) के नाम पर इस आसन का नाम दिया गया है।

एक पाद शिरासन



एक पाद शिरासन

एक पाद शिरासन

विधि

दोनों पैरों को सामने फैला कर बैठ जाइये ।

बायें पैर को दाहिने हाथ से पकड़िये ।

बायें हाथ को बायें टखने के कुछ ऊपर रखिये। बायीं भुजा बायें पैर के बाजू में भीतर की ओर रहेगी ।

भुजाओं के सहारे बायें पैर को अधिक से अधिक ऊपर उठाने तथा इसे ग्रीवा के पीछे लाने का प्रयत्न कीजिये ।

हाथों को जोड़कर छाती के सम्मुख रखिये ।

इस अवस्था में आरामदायक स्थिति तक रुक कर प्रारम्भिक अवस्था में वापस आ जाइये । दूसरे पैर से इसी क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये ।

श्वास

अन्तिम स्थिति में धीमी एवं दीर्घ श्वास - क्रिया कीजिये ।

आवृत्ति

प्रत्येक पैर से २ बार अभ्यास कीजिये ।

एकाग्रता

अन्तिम अवस्था में दीर्घ श्वसन पर ।

लाभ

दोनों ओर से उदर की मालिश करता है । प्रजनन - अंगों को शक्ति प्रदान करता है तथा उनसे सम्बन्धित विकारों को दूर करता है ।

लम्बी अवधि के अभ्यास से फैली हुई नसों को लाभ पहुँचाता है ।

उत्थान एक पाद शिरासन



उत्थान एक पाद शिरासन

उत्थान एक पाद शिरासन

विधि

एक पाद शिरासन कीजिये। दोनों हाथों को घुटनों पर रखिये। स्वतंत्र पैर पर बल डालते हुए सीधे खड़े होने का प्रयत्न कीजिये कुछ देर खड़े रहिये। तत्पश्चात् भूमि पर बैठ जाइये। विपरीत पैर से अभ्यास कीजिये। हाथ छाती के सम्मुख जुड़े रहें।

टिप्पणी

जो व्यक्ति बिना किसी कठिनाई के एक पाद शिरासन करने में समर्थ हों, उन्हें इसका अभ्यास करना चाहिए।

एकाग्रता

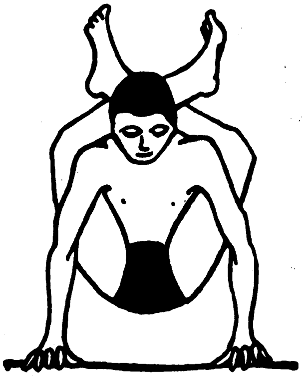
शरीर को लम्ब रूप में उठाने पर।

शेष विवरण एक पाद शिरासन में वर्णित हैं।

द्वि पाद शिरासन



प्रथम अवस्था



द्वितीय अवस्था

द्वि पाद शिरासन

विधि

प्रथम अवस्था – एक पाद शिरासन कीजिये।

तत्पश्चात् दूसरे पैर को भी धीरे-धीरे ग्रीवा के पीछे रखिये।

पैरों को कैंचीनुमा स्थिति में लाकर बाँध लीजिये।

हथेलियों को जमीन पर जाँघों के बाजू में रखिये।

मेरुदंड की अंतिम अस्थि (पुच्छास्थि) पर संतुलन का प्रयास कीजिये।

हाथों को छाती के सम्मुख जोड़कर रखिये।

सम्भावित अन्तिम अवस्था में से यह प्रथम अवस्था है।

द्वितीय अवस्था – भुआओं के बल पर शरीर को भूमि से ऊपर उठाइये।

पूरा शरीर सिर्फ हथेलियों पर ही रहेगा। यही द्वितीय अवस्था है।

आरामदायक अवधि तक यह अभ्यास करने के उपरान्त शरीर को जमीन पर वापस ले आइये और शरीर को शिथिल कीजिये।

टिप्पणी

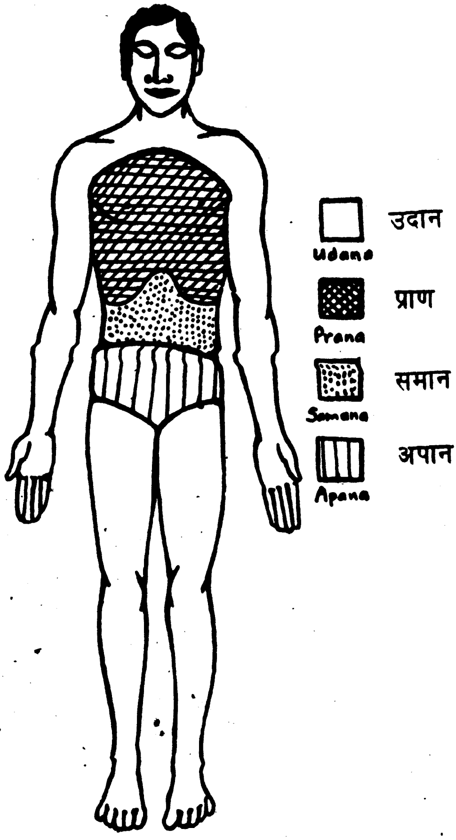
यह एक पाद शिरासन की भाँति है। अन्तर इतना है कि इस अभ्यास में पैरों को ग्रीवा के पीछे रखा जाता है; अतः इसे द्वि पाद कंधरासन भी कहते हैं (पृष्ठ २०१)। अन्य वर्णन द्वि पाद कंधरासन की तरह है।

प्राणायाम

प्रस्तावना

प्राण वह वायवीय शक्ति है जो समस्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त है। वह सजीव या निर्जीव सभी वस्तुओं में समाविष्ट है। पत्थरों, कीड़े-मकोड़ों, प्राणियों तथा स्वाभाविकतः मानव जाति में भी वह निहित है। श्वास द्वारा ली जाने वाली वायु से उसका घनिष्ठ सम्बन्ध है; परन्तु यह न समझ लेना चाहिए कि दोनों एक ही वस्तु हैं। प्राण हवा की अपेक्षा अधिक सूक्ष्म है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि प्राण वह मूलशक्ति है जो वायु तथा समस्त सृष्टि में व्याप्त है।

आयाम का अर्थ है– विस्तार। अतः प्राणायाम प्रक्रियाओं की वह शृंखला है जिसका उद्देश्य शरीर की प्राण-शक्ति को उत्प्रेरणा देना, बढ़ाना तथा उसे विशेष अभिप्राय से विशेष क्षेत्रों में संचारित करना है। प्राणायाम का अन्तिम उद्देश्य सम्पूर्ण शरीर में प्रवाहित 'प्राण' को नियंत्रित करना भी है। प्राणायाम से शरीर को लाभ है; परन्तु इसे शरीर को अतिरिक्त ओषजन प्रदान करने वाला मात्र श्वसन व्यायाम ही नहीं समझना चाहिए। सूक्ष्म रूप से प्राणायाम श्वसन के माध्यम से प्राणमय कोष की नाड़ियों, प्राण नलिकाओं एवं प्राण के प्रवाह पर प्रभाव डालता है। परिणामतः नाड़ियों का शुद्धिकरण होता है तथा भौतिक और मानसिक स्थिरता प्राप्त होती है। कुम्भक अर्थात् श्वास रोकने से 'प्राण' पर नियंत्रण प्राप्त होता है तथा साथ ही मन पर अधिकार हो जाता है।



शरीर में स्थित 'प्राण' को परम्परानुसार पाँच उप विभागों में विभाजित किया गया है। सामूहिक रूप से इन्हें 'पंच प्राण' कहा जाता है। ये निम्नानुसार हैं–

१. प्राण

यह सम्पूर्ण शरीर में नहीं वरन् अंग विशेष में स्थित 'प्राण' है। कंठनली तथा श्वासपटल (diaphragm) के मध्य में इसकी स्थिति है। श्वसन अंग, वाणी सम्बन्धी अंग, निगल या अन्ननलिका (gullet) आदि से इसका सम्बन्ध है। साथ ही इन्हें क्रियाशील बनाने वाली मांशपेशियों से भी सम्बंधित है। है। यह वह शक्ति है जिसके द्वारा श्वास नीचे की ओर खींची जाती है।

२. अपान

यह नाभि प्रदेश के नीचे स्थित है। यह शक्ति बड़ी आँत को बल प्रदान करती है। वृक्क, गुदा-द्वार तथा मूत्रेन्द्रियों को भी शक्ति देती है। अतः प्राथमिक रूप से इसका सम्बन्ध प्राण वायु के गुदा-द्वार तथा साथ ही नासिका एवं मुँह द्वारा निष्कासन से है।

३. समान

इसका संबंध छाती एवं नाभि के मध्यवर्ती क्षेत्र से है। यह पाचन संस्थान, यकृत, आँत, क्लोम एवं जठर तथा उनके रस-स्राव को प्रेरित तथा नियन्त्रित करता है। दिल तथा रक्ताभिसरण-संस्थान को भी क्रियाशील बनाता है। भोज्य पदार्थों में अनुकूलता लाता है।

४. उदान

इस प्राण शक्ति द्वारा कंठनली के ऊपर के अंगों का नियंत्रण होता है। नेत्र, नासिका, कान आदि सम्पूर्ण शरीर की इन्द्रियाँ तथा मस्तिष्क इस शक्ति द्वारा कार्य करते हैं। इसकी अनुपस्थिति में हममें सोच-विचार की शक्ति नहीं रह जायेगी, साथ ही बाह्य जगत के प्रति चेतना भी नष्ट हो जायेगी।

५. व्यान

यह जीवन-शक्ति सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त है। यह अन्य शक्तियों के मध्य सहयोग स्थापित करती है। समस्त शरीर की गतिविधियों को नियमित तथा नियंत्रित करती है। सभी शारीरिक अंगों तथा उनसे सम्बन्धित मांसपेशियों, पेशीय तंतुओं, नाड़ियों एवं संधियों में समरूपता लाती है तथा उन्हें क्रियाशील बनाती है। यह शरीर की लम्बरूप स्थिति के लिए भी जिम्मेदार है।

उपप्राण

प्राचीन संतों एवं योगियों ने शरीर में प्राण का वर्गीकरण ही नहीं वरन् पाँच भागों में उपवर्गीकरण भी किया है। इन्हें उपप्राण कहते हैं। वे क्रमशः नाग, कूर्म, क्रिकर, देवदत्त तथा धनंजय हैं। इनका सम्बन्ध छींकना, जमुहाई लेना, खुजलाना, पलक झपकाना, हिचकी लेना आदि छोटे-छोटे कार्यों के सम्पादन से है।

वायु

परम्परानुसार सभी प्राण शक्तियों पर 'वायु' का नियंत्रण रहता है। प्रत्येक वायु का संबंध प्रत्येक प्राण के साथ है और उनके नाम भी वही हैं। उदाहरणार्थ – अपान वायु का नियंत्रण अपान जीवन-शक्ति से है। श्वसन-प्रक्रिया द्वारा यही वायु उत्पन्न होती है। वायु के माध्यम से ही प्राणायाम की क्रिया शरीर की प्राण-शक्ति पर प्रभाव डालती है।

श्वास तथा जीवन-प्रक्रिया के मध्य संबंध

मानवीय-जीवन अवधि श्वसन-प्रणाली पर निर्भर है। दीर्घ एवं धीरे श्वास लेने वाला व्यक्ति अल्प एवं जल्दी श्वास लेने वाले व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक काल तक जीवित रहता है। प्राचीन योगी इस विषय में इतना विश्वास रखते थे कि वे मनुष्य की आयु श्वास की संख्या में गिनते थे; हमारी तरह वर्ष से उसकी गणना नहीं करते थे। उनका विचार था कि व्यक्तिगत भिन्नतानुसार प्रत्येक व्यक्ति के जीवन-काल में श्वसन-संख्या निश्चित रहती है। प्रत्येक श्वास की लम्बाई बढ़ाकर अवधि या उम्र भी अवश्य बढ़ाई जा सकती है। प्रत्येक श्वास को दीर्घ-गहरी बनाकर प्रत्येक श्वास से अधिक प्राण शक्ति ग्रहण की जा सकती है। इस प्रकार एक व्यक्ति अपने जीवन का अच्छा उपभोग कर सकता है।

प्राचीन योगी जंगल में और एकान्तवास में रहा करते थे। जंगली जानवरों से उनका अधिक सम्पर्क रहता था। बाहरी लगाव या आकर्षण न होने के कारण वे जानवरों के विस्तृत अध्ययन हेतु समर्थ थे। उन्होंने अनुभव किया कि सर्प, हाथी, कछुआ आदि जानवर लम्बी श्वास लेते हुए दीर्घ काल तक जीवित रहते हैं। इसके विपरीत तीव्र गति से श्वास लेने वाले पक्षी, कुत्ता, खरगोश आदि की जीवनावधि कम होती है। इस अवलोकन के परिणामस्वरूप उन्हें दीर्घ श्वसन-प्रणाली का महत्त्व ज्ञात हुआ। आधुनिक व्यक्ति विशेषकर अनुद्योगी व्यक्ति को इस बात पर विशेष ध्यान देना चाहिए क्योंकि उन्हें छोटी श्वास लेने की बहुत आदत रहती है। इस प्रस्तावना में आगे वर्णित सही श्वसन प्रणाली के पठन एवं अभ्यास की नेक सलाह उन्हें दी जाती है। यह बात भूलनी नहीं चाहिए कि श्वसन की दर का संबंध प्रत्यक्षतः दिल से है। धीमी श्वास गति से दिल की धड़कन भी मन्द रहती है जो लम्बी उम्र प्रदान करती है। उदाहरण के लिए कुछ जानवरों का अवलोकन कीजिये। एक चूहे के दिल की धड़कन की गति प्रति मिनट एक हजार होती है। उसकी जीवन-

जीवन-अवधि बहुत कम होती है। ह्वेल के दिल की धड़कन प्रति मिनट सोलह की दर से तथा हाथी की प्रति मिनट पचीस रहती है। ये दोनों ही दीर्घ आयु के लिए प्रख्यात हैं।

स्वर योग

स्वर योग, योग की ही एक शाखा है। इसका संबंध श्वसन-क्रिया के अध्ययन से है। जीवन की पूर्णतः ज्ञान-प्राप्ति के लिए यह एक शक्तिशाली विधि है। इस विज्ञान के अध्ययन से जीवन-सम्बन्धी अनेक गुप्त बातों का अनावरण हो जाता है। नासिका-श्वसन के सूक्ष्म परिवर्तन द्वारा स्वर योगी पहले से ही भविष्य का ज्ञान प्राप्त कर लेता है। यह भी ज्ञात कर लेता है कि कार्य में उसे सफलता प्राप्त होगी या नहीं। प्रत्येक व्यक्ति इस बात का अनुभव करता है कि परिस्थिति के अनुसार एवं चारों ओर के वातावरण के अनुसार किस प्रकार श्वास में परिवर्तन होता है। उदाहरणार्थ– यदि एक व्यक्ति क्रोधित है या उसमें भावनात्मक उथल-पुथल है तो उसके श्वास की गति एवं दर बढ़ जाती है। इससे जीवन की अवधि तथा क्षमता कम हो जाती है। निम्न सारणी से यह स्पष्ट हो जाता है कि विभिन्न कार्यों तथा मानसिक अवस्थाओं में रेचक के समय नासिका से श्वास की कितनी दूरी रहती है।

सामान्य अवस्था	–	६ अंगुल
भावनापूर्ण स्थिति	–	१२ अंगुल
गायन-काल	–	१६ अंगुल
भोजन-काल	–	२० अंगुल
चलते समय	–	२४ अंगुल
सोते समय	–	३० अंगुल
काम-क्रिया के समय	–	३६ अंगुल
व्यायाम के समय	–	३६ अंगुल

टिप्पणी

एक अंगुल एक अंगुली की चौड़ाई के बराबर होता है। यह स्थूल उदाहरण है। इन श्वासों द्वारा व्यक्ति के विषय में अधिक सूक्ष्म बातों का भी पता लगाया जा सकता है। किस नासिका छिद्र से श्वास का प्रवाह हो रहा है, यह ज्ञात करके भी मनुष्य की क्रियाओं के ज्ञान की प्राप्ति की जा सकती है,

यह द्वितीय विधि है। कभी-कभी दाहिने छिद्र की अपेक्षा बायें छिद्र में श्वास-प्रवाह अधिक होता है। इस अवस्था में व्यक्ति विशेष को यह विचार करना चाहिए कि शारीरिक कार्य करे या न करे। इस स्थिति में कार्य नहीं, वरन् चिंतन करना चाहिए। यदि श्वास-प्रवाह दाहिने नासिका छिद्र में अपेक्षाकृत अधिक है तब व्यक्ति को शारीरिक कार्य अधिक तथा चिंतन कम करना चाहिए। स्वरयोगानुसार श्वास-प्रवाह में क्रमशः परिवर्तन होता रहता है। कभी दाहिने छिद्र से श्वास अधिक चलती है तो कभी बायें नासिका छिद्र से। कहा जाता है कि यह परिवर्तन लगभग प्रति घण्टे होता है। इस प्रकार मनुष्य की परिवर्तनशील क्रियाओं की उत्पत्ति होती है। दिन के समय पूरक क्रिया की अवधि अधिक शक्तिशाली रहती है; इस कारण मानवीय संबंध इन्द्रियों से तथा बाह्य वातावरण से रहता है। इसके विपरीत रात्रि में रेचक क्रिया की अवधि अधिक प्रभुत्वपूर्ण होती है तथा मनुष्य शांति की दुनिया में प्रवेश कर आराम करता है। यही कारण है कि बौद्ध धर्मावलम्बी वज्रासन में बैठकर श्वास-प्रश्वास पर एकाग्रता करते हैं। वे पूरक के समय मन को स्थिर करते हैं तथा रेचक के समय उसे शून्य पर ले आते हैं।

प्राण – शरीर एवं आत्मा के मध्य की कड़ी

प्राण के माध्यम से ही शरीर एवं आत्मा के मध्य संबंध स्थापित होता है। 'प्राण' चेतना एवं भौतिक तत्त्व को ज़ोड़ने वाली शक्ति है। इसे तत्त्व एवं शक्ति का अत्यन्त सूक्ष्म रूप कहा जा सकता है – जो शरीर में व्याप्त नाड़ियों या जीवन-शक्ति नलिकाओं द्वारा स्थूल शरीर को क्रियाशील बनाती है। जीवन-शक्ति प्रदान कर यह शरीर को जीवित रखती है; अन्यथा वह निर्जीव अवस्था को प्राप्त हो जायेगा। प्राण एवं श्वसन-वायु का गहरा सम्बन्ध है, लेकिन वे दोनों एक ही वस्तु नहीं हैं। जो वायु हम श्वसन द्वारा लेते हैं, वह अधिक सूक्ष्म प्राण को वहन करती है।

आध्यात्मिक साधकों के लिए प्राणायाम किस तरह उपयोगी है ?

प्रथमतः प्राणायाम प्राणमय कोष में प्राण के संचार को विरोधरहित तथा स्वतंत्र करता है। इससे इस शरीर को स्वस्थ रखने में सहायता मिलती है जो कि आध्यात्मिक साधक के लिए सर्वाधिक महत्त्व की वस्तु है।

प्राणायाम से साधकों को जो दूसरा लाभ होता है, वह है 'मन की स्थिरता'। प्राणायाम की कुछ विधियों में श्वसन-क्रिया को क्रमशः धीमा किया जाता है और प्रश्वास की वायु का वेग कम हो जाता है। (मनुष्य की क्रिया

तथा प्रश्वास वायु के वेग से सम्बन्धित पूर्व खण्ड देखिये)। कुछ समय तक श्वसन-क्रिया को पूर्णतः रोकने के लिए प्राणायाम की कुछ क्रियाओं में कुम्भक (श्वास रोकने) का अभ्यास भी किया जाता है।

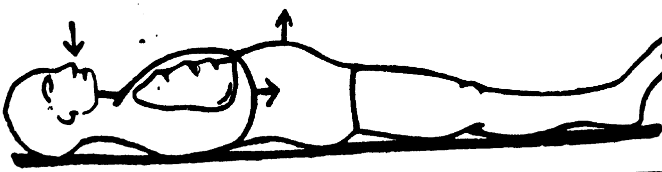
इस प्राणायाम क्रिया से शरीर में प्राण के संचालन पर नियंत्रण प्राप्त होता है। इससे विचार-प्रणाली में नियंत्रण आता है। मन में शान्ति आती है। यह आध्यात्मिक अभ्यास के लिए प्राथमिक आवश्यकता है क्योंकि यदि मन हमेशा परेशानियों से घिरा रहेगा तो उसका सम्बन्ध उसकी सूक्ष्म आत्मा से नहीं हो सकता।

दायीं नासिका छिद्र से बहने वाली श्वास वायु का निकट सम्बन्ध पिंगला नाड़ी में प्रवाहित प्राण शक्ति से रहता है। दोनों नासिका छिद्रों में श्वास-गति समान रहने पर इड़ा एवं पिंगला में भी सन्तुलन आ जाता है। इस अवस्था में प्राणमय शरीर में स्थित सुषुम्ना नामक सबसे महत्वपूर्ण नाड़ी में प्राण का प्रवाह आरंभ हो जाता है। इस अवस्था में गहन ध्यान की सम्भावना रहती है; जिससे साधक को ध्यान की उच्च अवस्था की प्राप्ति होती है।

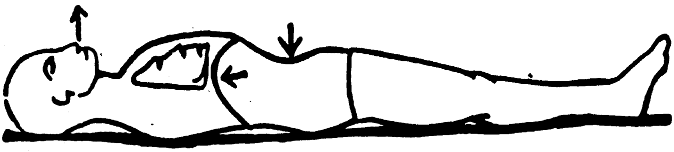
इड़ा और पिंगला में प्राण के प्रवाह को संतुलित करना भी प्राणायाम का एक उद्देश्य है। इस प्रकार आध्यात्मिक जिज्ञासु के लिए आध्यात्मिक मार्ग खुल जाता है।

स्वामी शिवानन्दजी ने अपनी पुस्तक 'प्राणायाम विज्ञान' में लिखा है- "श्वसन, नाड़ी-प्रवाह तथा आंतरिक प्राण या जीवन शक्ति के नियंत्रण के मध्य घनिष्ठ संबंध है। भौतिक स्तर पर प्राण गति एवं क्रियाओं के रूप में तथा मानसिक स्तर पर विचार के रूप में दिखाई देता है। प्राणायाम वह माध्यम है जिसके द्वारा योगी अपने छोटे से शरीर में समस्त ब्रह्माण्ड के जीवन के अनुभव का प्रयास करता है तथा सृष्टि की समस्त शक्तियाँ प्राप्त कर पूर्णता की प्राप्ति का प्रयत्न करता है।"

इस प्रकार इसमें कोई आशंका नहीं कि आध्यात्मिक जिज्ञासुओं के लिए ज्ञान की खोज में प्राणायाम बहुत आवश्यक है।



उदर द्वारा श्वसन



शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य हेतु श्वास-प्रश्वास की विधि

प्राणायाम के अभ्यास के लिए यह एक अति आवश्यक प्रस्तावना है। अधिकांश व्यक्ति गलत ढंग से श्वास-क्रिया करते हैं। फेफड़ों के कुछ भाग की क्षमता का ही उपयोग करते हुए हम अधूरी श्वास ही लिया करते हैं। श्वास-गति में समानता नहीं होती, वह लययुक्त नहीं रहती। इसके कुपरिणाम के कारण हमारे समस्त शरीर एवं मस्तिष्क में पोषण की कमी हो जाती है। परन्तु ऐसा नहीं होना चाहिए क्योंकि वातावरण की वायु में पर्याप्त मात्रा में ओषजन उपस्थित रहती है। उथली श्वास क्रिया के कारण फेफड़ों के निम्न प्रदेश में अधिक काल तक वायु एकत्रित रह जाती है। वर्तमान में अनेक बीमारियों जैसे क्षय रोग आदि का यही कारण है। विशेषकर स्त्रियाँ इसके लिए दोषी हैं क्योंकि चुस्त कपड़े पहनकर वे दीर्घ श्वास-क्रिया में अवरोध उत्पन्न कर देती हैं। अतः आइये, उचित श्वसन-प्रक्रिया का अध्ययन कर हम स्वास्थ्य-लाभ करें। यह अवश्य स्मरण रखिये कि श्वास के बिना हम जीवित नहीं रह सकते तथा आधी श्वास लेने से हमारी उम्र भी आधी हो जाती है।

श्वसन-प्रक्रिया का विभाजन दो वर्गों में किया जा सकता है :-

(१) उदर द्वारा श्वसन

इसे श्वास-पटल द्वारा श्वसन क्रिया (diaphragmatic respiration) भी कहते हैं। बैठकर या चित लेटकर एक हाथ को नाभि पर रखकर इसकी अनुभूति स्वयं की जा सकती है। दीर्घ पूरक कीजिये। आप देखेंगे कि उदर

प्रदेश फूल जाता है तथा हाथ ऊपर उठ जाता है। जैसे-जैसे उदर बाहर की ओर फूलता जाता है, वैसे-वैसे हृदय-पटल नीचे दबता जाता है। हृदय-पटल वह कड़ा मांसपेशीय-तंतु है जो फेफड़ों को उदरस्थ अंगों से विभाजित करता है। पूरक के समय इसकी स्थिति जितनी नीचे रहेगी, उतनी ही अधिक वायु का प्रवेश फेफड़ों में होगा और फेफड़े फैलेंगे।

दीर्घ रेचक कीजिये। अब आप अवलोकन करेंगे कि उदर में संकुचन होता है; फलस्वरूप हाथ मेरुदंड की ओर नीचे आता है। उदर में उतार आने पर श्वास-पटल में चढ़ाव आता है। इस तरह फेफड़ों से अधिकतम मात्रा में वायु का निष्कासन होता है।

अभ्यास काल में छाती या कंधों में हलचल न कीजिये।

(२) छाती द्वारा श्वसन

प्रथम प्रक्रिया की भाँति ही बैठिये या चित लेट जाइये। छाती या पसलियों का विस्तार करते हुए पूरक कीजिये। आप अनुभव करेंगे कि इस क्रिया से पसलियाँ ऊपर बाहर की ओर उठ जाती हैं।

रेचक करने के साथ ही आप यह अवलोकन करेंगे कि पसलियों में उतार आ जाता है। इस श्वसन-काल में उदर-प्रदेश में गति न होने दीजिये।

(३) यौगिक श्वसन

उपरोक्त दोनों प्रकार की श्वसन-प्रक्रियाओं के योग से यह संभव है कि फेफड़ों में अधिकतम मात्रा में वायु का प्रवेश किया जाये एवं रेचक द्वारा त्याज्य वायु का निष्कासन अधिक से अधिक मात्रा में किया जाये। इस प्रकार की श्वसन-क्रिया ही प्रत्येक व्यक्ति के लिए उपयोगी है। इसे पूर्ण यौगिक श्वसन कहते हैं। हर मनुष्य को इसी विधि से श्वास-प्रश्वास क्रिया करनी चाहिए।

अभ्यास की विधि निम्नानुसार है–

क्रमशः उदर एवं छाती का धीरे-धीरे विस्तार करते हुए फेफड़ों में अधिक से अधिक वायु का प्रवेश कीजिये, जितना संभव हो सके।

सर्वप्रथम छाती को, तत्पश्चात् उदर को शिथिल करते हुए रेचक कीजिये। अंत में उदर के स्नायुओं के आकुंचन पर बल डालिये ताकि फेफड़ों से अधिक से अधिक वायु का निष्कासन हो जाये।

उदर से छाती एवं छाती से उदर तक गति एक तरंग की भाँति हो। सम्पूर्ण क्रिया धीरे-धीरे बिना झटके के सम्पादित होनी चाहिए।

पूरक एवं रेचक क्रिया उपरोक्त विधि के अनुसार होनी चाहिए। प्रारम्भ में प्रशिक्षण की कमी के कारण प्रतिदिन कुछ मिनट, विशेषकर प्राणायाम-अभ्यास के पूर्व इस श्वसन-क्रिया को चेतनापूर्वक करना होगा। अंत में यह स्वाभाविक बन जायेगी और पूरे दिन का अभ्यास किया जा सकेगा।

इस अभ्यास से आपके जीवन में आश्चर्यजनक परिवर्तन आ जायेगा। सर्दी-जुकाम जैसी छोटी बीमारी के साथ ही फेफड़ों की सूजन आदि गम्भीर बीमारियों के प्रति भी आप कम ग्रहणशील रहेंगे। आप में अनन्त जीवन शक्ति का विकास होगा तथा आपको जल्दी थकान का अनुभव नहीं होगा। आपकी चिंतन-शक्ति विकसित होगी। चिंताओं एवं तनावों का प्रभाव आपके ऊपर नहीं पड़ेगा। आप में जीवन के प्रति शांतिपूर्ण प्रवृत्ति का विकास होगा।

प्राणायाम से पूर्व के अभ्यास

प्राणायाम से पूर्व फेफड़ों की सफाई या दिन के किसी भी समय अभ्यास के लिए नीचे वर्णित सरल श्वसन-अभ्यास बहुत ही लाभप्रद हैं। फेफड़ों के निम्न प्रदेश में एकत्रित अशुद्ध वायु के निष्कासन में इनसे बहुत सहायता मिलती है।

विधि १

भूमि पर बैठिये या खड़े हो जाइये। पीठ सीधी रहे।

बैठी अवस्था में हाथ भूमि पर तथा खड़े हों तो जाँघ पर रहें।

दोनों हाथों को धीमी गति से उठाते हुए उदर से पूरक कीजिये।

हाथों को उठाने से छाती में विस्तार होगा और अधिक से अधिक मात्रा में वायु का प्रवेश फेफड़ों में होगा।

उदर के स्नायुओं को सिकोड़ते हुए तथा हाथों को धीरे-धीरे नीचे लाते हुए रेचक कीजिये। इस क्रिया द्वारा फेफड़ों से अधिक से अधिक वायु का निष्कासन होगा। इसकी पुनरावृत्ति कीजिए।

विधि २

हस्त उत्तानासन कीजिये (आसनों के अध्याय में पृष्ठ ९६ देखिये)। हाथों को सिर के ऊपर उठाते तथा उदर का विस्तार करते हुए पूरक कीजिये। हाथों को नीचे की ओर लाते हुए उदर के स्नायुओं को सिकोड़िये तथा रेचक कीजिये।

विधि ३

उत्थित लोलासन का अभ्यास कीजिये (पृष्ठ १०३ पर देखिये)। हाथों को सिर के ऊपर उठाते हुए दीर्घ पूरक कीजिए। तत्पश्चात् रेचक करते हुए, कमर से शरीर को मोड़ते हुए धीरे से एकदम सामने झुकिये। सामने झुककर दस बार 'हा' 'हा' 'हा' शब्द का उच्चारण कर अनुभव कीजिये कि फेफड़े पूर्णतः वायुरहित हो गये हैं या नहीं। भुजाओं एवं शरीर को उठाते समय धीरे-धीरे पूरक कीजिये। खड़े रहिये। हाथ सिर के ऊपर ही रहेंगे। कुछ मिनट तक दुहराइये। फेफड़ों को रिक्त करने व वायु के निष्कासन की यह उत्तम विधि है।

प्राणायाम के अभ्यासियों के लिए निर्देश एवं सावधानियाँ

प्राणायाम को प्रारम्भ करने के पूर्व निम्न बातों का सावधानीपूर्वक पठन एवं उनका पालन आवश्यक है–

१. प्राणायाम के पूर्व जठर, आँतों एवं मूत्राशय को खाली कर लेना चाहिए। भोजन के उपरांत कम से कम चार घंटे पश्चात् ही प्राणायाम का अभ्यास कीजिये।

२. आसन के उपरांत तथा ध्यानाभ्यास के पूर्व प्राणायाम कीजिये।

३. प्राणायाम के समय शरीर को अधिक से अधिक शिथिल कीजिये।

४. प्राणायाम के समय किसी भी प्रकार का तनाव शरीर पर न पड़ने पाये। सुखदायक स्थिति तक ही कुम्भक लगाइये; अन्यथा फेफड़ों पर कई प्रतिक्रियायें हो सकती हैं।

५. हवादार, साफ, सुखद वातावरण में अभ्यास कीजिये। गंदे, बदबूदार या धुएँमय कमरे में प्राणायाम नहीं करना चाहिए। जहाँ अत्यधिक वायु-प्रवाह हो उस स्थान पर भी अभ्यास नहीं करना चाहिए।

६. प्राणायाम की प्रारंभिक अवस्था में अपचन या मूत्र की मात्रा में कमी हो सकती है। यदि कड़े दस्त हों तो नमक एवं मिर्च-मसाले त्याग दीजिये। यदि पतले दस्त होने लगें तो कुछ दिनों के लिए अभ्यास बंद कर दीजिये एवं चावल तथा दही का ही सेवन कीजिये।

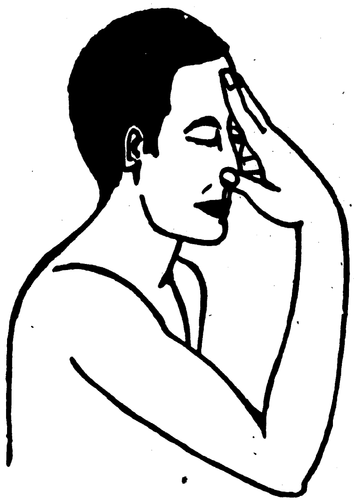
७. प्राणायाम के समय बाहरी बाधाओं जैसे मच्छर-मक्खियों से बचने के लिए शरीर पर हल्का कपड़ा डाल लीजिये।

८. सिद्धासन तथा सिद्धयोनि आसन ही प्राणायाम के लिए सर्वोत्तम आसन हैं क्योंकि इनमें कंधों का फैलाव अधिकतम रहता है।

९. प्राणायाम के उच्च अभ्यास अच्छे प्रशिक्षित निर्देशक की उपस्थिति में ही करने चाहिए।

१० प्राणायाम का अधिकता से अभ्यास करने वालों को धूम्रपान, तम्बाकू, मांस जैसी उत्तेजक वस्तुओं का त्याग कर देना चाहिए।

नाड़ी शोधन प्राणायाम



नाड़ी शोधन प्राणायाम

नाड़ी शोधन प्राणायाम

वज्रासन को छोड़कर अन्य किसी भी ध्यान के आसन जैसे पद्मासन, सिद्धासन, सुखासन आदि में बैठिये। आसन ऐसा हो जिसमें कम से कम पंद्रह मिनट तक आराम-पूर्वक बैठ सकें।

हाथों को घुटनों पर रख मेरुदण्ड, सिर व मुख को सीधा कीजिये।

सम्पूर्ण शरीर को शिथिल कीजिये तथा नेत्रों को बंद कर मानसिक एवं शारीरिक रूप से प्राणायाम के लिए तैयार हो जाइये।

कुछ देर के लिए अपनी चेतना को शरीर एवं श्वास पर रखिये।

अब अभ्यास प्रारंभ कीजिये।

प्रथम अवस्था – (क) (पंद्रह दिनों तक प्रतिदिन के अभ्यास के लिए)

बायें हाथ को घुटने पर ही रखे हुए दाहिने हाथ को मस्तक पर भ्रूमध्य के पास रखिये। इस हाथ की अंगुलियों का उपयोग नासिका-छिद्रों में श्वास

के नियंत्रण के लिए निम्न विधि से कीजिए –

प्रथम एवं द्वितीय अंगुलियों (तर्जनी एवं मध्यमा) को भ्रूमध्य पर रखिये। उन्हें इस स्थिति में रखिये कि सम्पूर्ण अभ्यास-काल में हटाना न पड़े। अंगूठे को दाहिने नासिका छिद्र के समीप रखिये ताकि आवश्यकता के अनुसार इसके द्वारा नासिका पर दाहिनी ओर दबाव डालकर श्वास को भीतर या बाहर रोका जा सके। इसी भाँति बाएँ नासिका-छिद्र में श्वास के नियंत्रण के लिए तृतीय अंगुली (अनामिका) को उसके बाजू में रखिये।

अंगूठे से दाहिने नासिका-छिद्र को बन्द कीजिये।

बाएँ नासिका-छिद्र से पूरक कीजिये। तत्पश्चात् उसी से रेचक कीजिये।

पूरक एवं रेचक की गति सामान्य रहेगी। पाँच बार पूरक एवं रेचक कीजिये।

बाएँ नासिका-छिद्र को बन्द करके दाहिनी नासिका से पूरक एवं रेचक क्रिया कीजिये।

इस समय भी श्वास की गति सामान्य रहेगी।

पाँच बार पूरक एवं पाँच बार रेचक कीजिये।

प्रत्येक नासिका से पाँच बार की गयी क्रिया को एक आवृत्ति कहते हैं।

उपरोक्त क्रिया की कुल पच्चीस आवृत्तियाँ कीजिये।

अभ्यासी बलपूर्वक श्वास-प्रश्वास क्रिया न करें; साथ ही श्वास लेते एवं छोड़ते समय किसी प्रकार की ध्वनि भी नहीं उत्पन्न होनी चाहिए।

प्रथम अवस्था – (ख)

दाहिने छिद्र को बन्द कर बायें से पूरक कीजिये। फिर इसे बन्द कर दाहिने से रेचक कीजिये। याद रहे, पूरक हमेशा बायें से तथा रेचक दाहिने से हो। इसे पाँच बार कीजिए।

इसके बाद बायें छिद्र को बन्द कर दाहिने से पूरक व बायें से रेचक कीजिये। इसे भी पाँच बार कीजिये।

यह एक आवृत्ति हुई। ऐसा पाँच बार कीजिए।

पन्द्रह दिनों के उपरान्त प्रथम अवस्था को छोड़कर द्वितीय अवस्था का अभ्यास कीजिये।

द्वितीय अवस्था – अनुलोम - विलोम

(इसका अभ्यास भी पन्द्रह दिनों तक प्रतिदिन करना चाहिए)

अंगूठे से दाहिने नासिका - छिद्र को बन्द कीजिये।

बायें नासिका - छिद्र से पूरक कीजिये।

पूरक के अंत में तृतीय अंगुली से उस नासिका - छिद्र को बंद कीजिये।

दाहिने नथुने को मुक्त कर दीजिये। अब इससे रेचक कीजिये।

इसी नथुने से पूरक कीजिये।

पूरक के अन्त में इसे अंगूठे से बन्द कर दीजिये।

बायें नथुने से दबाव हटाकर उससे रेचक कीजिये।

यह एक आवृत्ति है।

इस स्थिति में अभ्यासी पूरक एवं रेचक की लम्बाई की गणना १ ॐ, २ ॐ, ३ ॐ आदि की पुनरावृत्ति द्वारा कर सकते हैं। पूरक एवं रेचक की अवधि में समानता होनी चाहिए। उदाहरणार्थ - पाँच तक पूरक एवं पाँच तक रेचक या सुखपूर्वक जितनी गिनती तक पूरक एवं रेचक किया जा सके। किसी भी स्थिति में तनाव न पड़ने पाये।

कुछ दिनों के उपरान्त पूरक एवं रेचक की अवधि बढ़ाइये। अनुपात १:१ ही रहे अर्थात् छै की गिनती तक पूरक हो तो इतनी ही गिनती तक रेचक हो। इसमें पूर्णता - प्राप्ति कर सात की गिनती तक पूरक एवं इतनी ही गिनती तक रेचक कीजिये। शक्तिपूर्वक श्वास - क्रिया न करें। इस बात का ध्यान रहे कि गणना समान रूप से हो। श्वास की कमी की पूर्ति के लिए रेचक - काल में गणना अपेक्षाकृत जल्दी नहीं हो।

किसी प्रकार की असुविधा का अनुभव होते ही तुरन्त पूरक एवं रेचक की अवधि कम कर दीजिये या कुछ देर के लिए अभ्यास बन्द कर दें। पन्द्रह दिनों या कुछ अधिक दिनों के अभ्यास के उपरांत द्वितीय स्थिति का त्याग कर तृतीय अवस्था का अभ्यास आरम्भ कर दीजिये।

तृतीय अवस्था – अंतरंग कुम्भक

(पूर्णता प्राप्ति तक अभ्यास कीजिये)

दाहिने नथुने को बन्द कीजिये और बायें नथुने से पूरक कीजिये।

पूरक के अन्त में दोनों नथुनों को बन्द कीजिये।

पाँच की गिनती तक श्वास रोकिये।

दाहिने नथुने से रेचक कीजिये।

अब बायें नथुने को बन्द रखते हुए दाहिने से पूरक कीजिये।

पुनः दोनों नथुनों को अंगूठे एवं तृतीय अंगुली से बन्द रखते हुए श्वास रोककर पाँच तक गिनती गिनिये।

दाहिने नथुने को बन्द ही रखिये। बायें नथुने को मुक्त करते हुए उससे रेचक कीजिये।

यह एक आवृत्ति है।

अभ्यास की २५ आवृत्तियाँ कीजिए।

कुछ दिन के अभ्यासोपरांत पूरक, कुम्भक एवं रेचक का अनुपात १:२:२ कीजिए अर्थात् यदि पाँच की गिनती तक पूरक करते हैं तो दस कुम्भक एवं दस की ही गिनती तक रेचक कीजिये।

कुछ दिनों के उपरान्त पूरक में एक इकाई की वृद्धि कीजिये (अर्थात् पाँच के स्थान पर छः तक की गिनती)। तब कुम्भक एवं रेचक में दो इकाई का योग हो जायेगा (अर्थात् बारह की गिनती तक कुम्भक एवं बारह की गिनती तक रेचक)।

सुखपूर्वक अवस्था तक ही अवधि में वृद्धि करनी चाहिए। अभ्यासी को तनिक भी असुविधा की अनुभूति नहीं होनी चाहिए।

पुनः आवृत्ति की अवधि में वृद्धि कीजिये। अनुपात वही रहेगा।

कुछ हफ्तों या महीनों के उपरांत अनुपात में निम्न परिवर्तन कीजिये–

अनुपात की वृद्धि १:६:२ कीजिये।

इसमें अधिकार प्राप्ति पर १:६:४ का अनुपात रखिये।

यह भी सिद्ध हो जाने के बाद १:८:६ के अनुपात में अभ्यास कीजिये।

यह अंतिम अनुपात है।

यदि आप सुखपूर्वक १:८:६ के अनुपात से २५ आवृत्तियाँ कर सकते हों तो चतुर्थ अवस्था का अभ्यास प्रारम्भ कीजिये।

चतुर्थ अवस्था – अंतरंग एवं बहिरंग कुम्भक

बायें नथुने से पूरक कीजिये।

श्वास को भीतर रोकिये।

दाहिने नथुने से रेचक कीजिये।

श्वास को बाहर रोकिये।

दाहिने नथुने से पूरक कीजिए।

श्वास को भीतर रोकिये।

बायें नथुने से पूरक कीजिये।

श्वास को बाहर रोकिये।

यह अभ्यास की एक आवृत्ति है।

१५ आवृत्तियों तक अभ्यास कीजिये। पूरक, अंतरंग कुम्भक, रेचक व बहिरंग कुम्भक के अनुपात का प्रारम्भ १:४:२:२ से कीजिये।

धीरे-धीरे पूरक की अवधि में वृद्धि (५, ६ एवं ७) करें एवं इसी अनुपात से रेचक तथा कुम्भक की अवधि में भी वृद्धि करें।

चतुर्थ अवस्था के उच्च अभ्यास

उच्च अभ्यासी इस सोपान में अन्तर्कुम्भक एवं बहिर्कुम्भक के साथ ही जालन्धर बन्ध या मूलबन्ध का अभ्यास कर सकते हैं।

अभ्यास-क्रम एवं अभ्यास-काल

आसन के उपरांत एवं ध्यानाभ्यास के पूर्व नाड़ी शोधन प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए।

सावधानी

क्षमतानुसार ही कुम्भक लगाइये।

प्रथम अभ्यास में पूर्णता-प्राप्ति के पश्चात् ही आगे बढ़िये।

हवादार कमरे में अभ्यास कीजिये।

सीमाएँ

सावधानीपूर्वक निपुण निर्देशक से ही सीखिये।

लाभ

उच्च ध्यानाभ्यांस के लिए नाड़ी शोधन का अभ्यास अनिवार्य है।

यह उसकी पूर्व तैयारी है।

मन को स्थिरता एवं शांति प्रदान करता है। 'प्राण' के सभी मार्ग खुल जाते हैं व उनके मार्ग की रुकावट दूर हो जाती है।

इड़ा एवं पिंगला के प्राण-प्रवाह में सन्तुलन आ जाता है।

विषैले तत्वों को दूर कर रक्त-संस्थान को शुद्ध करता है।

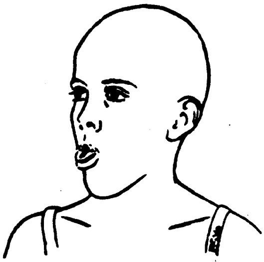
शरीर में पहुँची अतिरिक्त आक्सीजन द्वारा शरीर का पोषण होता है।

शरीर से कार्बन-डाइऑक्साइड का निष्कासन हो जाता है, परिणामस्वरूप सम्पूर्ण शरीर को स्वास्थ्य-लाभ होता है।

मस्तिष्क की कोशाओं को शुद्ध करता है जिससे सभी मस्तिष्क-केन्द्र अधिकतम क्षमता से कार्य करने के लिए प्रेरित होते हैं।

फेफड़ों में एकत्रित समस्त पुरानी वायु का निष्कासन होता है।

शीतली प्राणायाम



शीतली प्राणायाम

शीतली प्राणायाम

विधि

ध्यान के किसी भी आसन में बैठिये। हथेलियों को घुटनों पर रखिये। जिह्वा को मुँह के बाहर निकाल उसके दोनों किनारों को इस भाँति मोड़िये कि उसकी आकृति एक नलिका सी हो जाये।

इस मुड़ी हुई जिह्वा से 'प्रस्तावना' में वर्णित विधि से श्वास लीजिये। श्वास रोकिये तथा जालंधर बंध लगाइये।

कुछ समयोपरान्त जालंधर बंध हटाकर नासिका से रेचक कीजिये।

आवृत्ति

अन्य प्राणायाम के साथ इस अभ्यास की नौ आवृत्तियाँ पर्याप्त हैं।

उच्च रक्तचाप से पीड़ित व्यक्तियों को प्राणायाम का यह अभ्यास नौ आवृत्तियों से आरंभ कर साठ आवृत्तियों तक बढ़ाना चाहिए।

टिप्पणी

नलिकाकृति-जिह्वा वायु को शीतल कर फेफड़ों में भेजती है जिससे पूर्ण शरीर को शीतलता प्राप्त होती है। इसी विशेषता के कारण इस प्राणायाम को यह नाम दिया गया है।

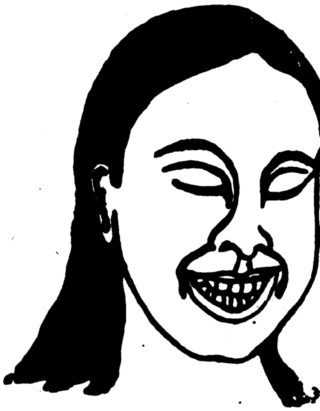
लाभ

स्नायुओं को शिथिलता, मानसिक स्थिरता एवं शांति प्रदान करता है।

सम्पूर्ण शरीर में 'प्राण' के मुक्त प्रवाह को प्रेरित करता है।

प्यास को कम करता है व रक्त-शुद्धिकरण करता है।

शीतकारी प्राणायाम



शीतकारी प्राणायाम

शीतकारी प्राणायाम

विधि

शीतली प्राणायाम की भाँति ही है तथा अभ्यास-विधि में भी समानता है। केवल जिह्वा की स्थिति में भिन्नता है।

जिह्वा को मुँह के भीतर पीछे की ओर इस विधि से मोड़िये कि उसके अग्र भाग का स्पर्श ऊपरी तालु से हो।

दाँतों की पंक्तियों को एक-दूसरे पर रखिये। होठों को अधिक से अधिक फैलाइये।

पूरक दाँतों से कीजिये।

अन्य विवरण शीतली प्राणायाम की तरह ही हैं।

भ्रामरी प्राणायाम



भ्रामरी प्राणायाम

भ्रामरी प्राणायाम

विधि

ध्यान के किसी आरामदायक आसन में बैठिये।

मेरुदंड सीधा हो, मुँह सामने रहे। नेत्र बंद करें तथा शरीर को शिथिल कीजिये।

पूर्ण अभ्यास में मुँह बंद रहेगा। दोनों नथुनों से पूरक कीजिये।

अंतरंग कुम्भक लगाइये। जालंधर या मूलबंध का अभ्यास पाँच सेकेण्ड तक कीजिये। दोनों अभ्यास एक साथ भी किये जा सकते हैं। बंधों को मुक्त कर दोनों कर्ण छिद्रों को प्रथम अंगुलियों से बंद कीजिये। मुँह बंद रखते हुए ही दाँतों को विलग कीजिये।

तत्पश्चात् मधुमक्खी की गुंजार सी दीर्घ अखंड ध्वनि करते हुए धीरे-धीरे अविरल रेचक कीजिये।

मस्तिष्क में इस ध्वनि की तरंगों का अनुभव कीजिये।

यह प्रथम आवृत्ति की समाप्ति है। पाँच आवृत्तियों से अभ्यास प्रारंभ कर क्रमशः आवृत्तियों की संख्या बढ़ाइये।

लाभ

मानसिक तनाव, क्रोध, चिंता, विक्षेपों को दूर करता है।

रक्तचाप व गले के रोग को कम करता है तथा स्वर में मधुरता लाता है।

आध्यात्मिक ध्वनि या नाद के प्रति जागरूक बनाता है।

भस्त्रिका प्राणायाम

विधि

ध्यान के किसी सुखप्रद आसन में बैठिये। सिर एवं मेरुदंड सीधे रहें। नेत्र बंद रहें। शरीर शिथिल कीजिये।

प्रथम अवस्था

बायें हाथ को बायें घुटने पर रखिये।

दाहिने हाथ को मस्तक पर भ्रूमध्य के पास रखिये। इसकी प्रथम एवं द्वितीय अंगुली को कपाल पर रखिये। अंगूठा दाहिने नथुने के बाजू में रहे। तृतीय अंगुली को बायें नथुने के बाजू में रखिये।

अंगूठे से दाहिने नथुने के बाजू में दबाव डालते हुए उसे बंद कर लीजिये।

बायें नथुने से शीघ्रतापूर्वक बीस बार श्वसन कीजिये। यह क्रिया उदर के प्रसार एवं आकुंचन के साथ जल्दी तथा लययुक्त हो।

तत्पश्चात् एक लम्बा पूरक कीजिये। दोनों नथुनों को अंगूठे एवं तृतीय अंगुली से बंद रखिये। जालंधर एवं मूलबंध या इन दोनों में से किसी एक का अभ्यास कीजियें। क्षमतानुसार श्वास रोकिये। फिर बंधों को शिथिल कर रेचक कीजिये।

दाहिनी ओर से ठीक यही क्रिया कीजिये।

यह एक आवृत्ति है। तीन आवृत्तियों तक इसकी पुनरावृत्ति कीजिये।

द्वितीय अवस्था

पूर्व स्थिति में बैठिये। दोनों हाथों को घुटनों पर रखिये।

इस बार दोनों नासिका-छिद्रों से एक साथ बीस बार श्वसन कीजिये। दीर्घ पूरक कीजिये। श्वास रोकिये तथा जालंधर एवं मूलबंध या किसी एक का अभ्यास कीजिये। आरामदायक अवधि के उपरांत बंधों को शिथिल कीजिये और रेचक कीजिये।

यह अभ्यास की एक आवृत्ति है।

अभ्यास की तीन आवृत्तियाँ कीजिये।

यह भस्त्रिका प्राणायाम की सामाप्ति है।

समय

प्रारंभिक अभ्यासी उपरोक्त विधिपूर्वक ही अभ्यास करें। इस अभ्यास में स्थूल रूप से अभ्यास की अवधि पूर्ण हो जाती है।

उच्च अभ्यासी पूरक एवं रेचक की संख्या पचास तक बढ़ा सकते हैं।

प्रत्येक अवस्था में आवृत्तियों की संख्या पाँच तक बढ़ाई जा सकती है।

टिप्पणी

इस प्रक्रिया में फेफड़ों का उपयोग लोहार की धौंकनी की भाँति होता है।

सावधानी

बेहोशी या हाँफने की दशा यह सूचित करती है कि अभ्यास उचित विधिपूर्वक नहीं किया जा रहा है।

बलपूर्वक श्वसन-क्रिया न कीजिये।

शरीर अधिक हिलने न पाये।

मुख को विकृत न कीजिये।

विधिपूर्वक अभ्यास के पश्चात् भी, यदि ऊपर वर्णित कोई संकेत प्राप्त हों तो अभ्यास रोक दीजिये तथा योग शिक्षक से निर्देश लीजिये।

पूर्ण प्रक्रिया में शरीर शिथिल रहना चाहिए।

प्रत्येक आवृत्ति की समाप्ति पर विश्राम कीजिये।

प्रारम्भ के कुछ हफ्तों तक भस्त्रिका का अभ्यास धीरे-धीरे कीजिये।

फेफड़ों के शक्तिशाली बन जाने पर गति में क्रमशः वृद्धि कीजिये।

सीमाएँ

योग शिक्षक की सलाह के बिना उच्च रक्तचाप, चक्कर आने या दिल की किसी बीमारी में भस्त्रिका प्राणायाम का अभ्यास न कीजिये।

प्रारम्भिक अभ्यासी योग्य शिक्षक के निर्देशन में ही अभ्यास करें।

लाभ

फेफड़ों को अनावश्यक वायु एवं जीवाणुओं से मुक्त कर उनकी शुद्धि करने के लिए एक आश्चर्यजनक प्राणायाम है।

दमा, प्लूरसी, क्षयरोग जैसे रोगों का निवारण करता है।

गले की सभी प्रकार की जलन तथा पुराने कफ को दूर करता है।

जठराग्नि को उत्तेजित कर पाचन शक्ति बढ़ाता है।

मन को स्थिरता एवं शांति देता है।

कपालभाति प्राणायाम

विधि

ध्यान के किसी आसन में बैठिये। आँखें बन्द हों तथा पूरा शरीर शिथिल रहे। रेचक की प्रमुखता रखते हुए श्वसन-क्रिया कीजिये।

भस्त्रिका की भाँति पूरक सहज एवं समकालीन हो। केवल रेचक क्रिया में धीरे से बल लगाइये।

साठ से सौ तक रेचक के पश्चात् दीर्घ रेचक तथा एक साथ जालंधर बन्ध, मूलबन्ध तथा उड्डियान बन्ध का अभ्यास कीजिये।

नेत्रों को बन्द रखे हुए ही भ्रूमध्य में शून्य पर ध्यान कीजिए। शून्यता एवं शान्ति का अनुभव कीजिए।

बंधों को शिथिल कर धीरे-धीरे पूरक कीजिए।

सम्पूर्ण शरीर को शिथिल कर दीजिये।

यह एक आवृत्ति है। इसकी पुनरावृत्ति ५ बार कीजिये।

समय

प्रारम्भ में ऊपर वर्णित विधि से ही अभ्यास कीजिये। उच्च अभ्यासी ध्यान की पूर्व तैयारी के लिए आवृत्तियों की संख्या १० तक बढ़ा सकते हैं।

कुम्भक की अवधि धीरे-धीरे बढ़ाइये।

टिप्पणी

यह प्राणायाम हठयोग के षट्कर्मों में से एक है।

लाभ

इस क्रिया द्वारा मस्तिष्क के सामने के प्रदेश की शुद्धि होती है।

इस अभ्यास से विचारों एवं दृश्यों का प्रकटीकरण बन्द हो जाता है, फलतः मन को विश्राम मिलता है। मन की शून्य या आकाशीय अवस्था में मन को शक्ति की पुनः प्राप्ति होती है।

मस्तिष्क के रक्त के जमाव को दूर करने की अति उत्तम प्रक्रिया है।

ध्यानाभ्यास की अच्छी प्रस्तावना है।

सीमाएँ

भस्त्रिका के समान।

उज्जायी प्राणायाम

विधि

खेचरी मुद्रा लगाइये अर्थात् जिह्वा को मुँह में पीछे की ओर इस भाँति मोड़िये कि उसके अग्र प्रदेश का स्पर्श ऊपरी तालु से हो।

अब गले में स्थित स्वर-यन्त्र को संकुचित करते हुए श्वसन कीजिये। श्वास-क्रिया गहरी, धीमी हो तथा छोटे बच्चे के कोमल खर्राटे की भाँति उसकी आवाज होनी चाहिए।

इस समय ऐसा अनुभव करना चाहिए कि श्वसन-क्रिया नासिका से नहीं, वरन् सिर्फ गले से हो रही है।

किसी भी आसन में इसका अभ्यास किया जा सकता है। उदाहरणार्थ- अनेक मुद्राओं में इसका अभ्यास किया जाता है। अजपाजप आदि कई ध्यान की प्रक्रियाओं में भी अभ्यास किया जाता है।

समय

इसका अभ्यास कई घंटों तक किया जा सकता है।

लाभ

सरल होते हुए भी सम्पूर्ण शरीर पर सूक्ष्म प्रभाव डालता है।

नाड़ी-संस्थान पर अच्छा प्रभाव डालता है। मन को चिंताओं से मुक्त कर शांत करता है।

अनिद्रा के रोगी को इसका अभ्यास शवासन में बिना खेचरी मुद्रा के करना चाहिए।

हृदय की धड़कन न्यून करता है, इसलिए उच्च रक्तचाप की अवस्था में लाभप्रद है।

आत्मिक स्तर पर सूक्ष्म प्रभाव डालता है; इसलिए ध्यान के अभ्यास के लिए अत्युत्तम क्रिया है।

सूर्यभेद प्राणायाम

विधि

प्राणायाम की स्थिति में आ जाइये।

बायें नथुने को तृतीय अंगुली से बंद कीजिये।

दाहिने से दीर्घ श्वास लीजिये। दोनों नथुनों को बंद कीजिये।

श्वास रोकिये। जालंधर एवं मूलबंध लगाइये।

आरामदायक स्थिति तक कुंभक कीजिये। तत्पश्चात् क्रमशः मूलबंध एवं जालंधर बंध को शिथिल कर दीजिये।

बाएँ नासिका-छिद्र को तृतीय अंगुली से बंद रखते हुए दाहिने नथुने से रेचक कीजिये।

यह एक आवृत्ति है। इसी क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

आवृत्ति

१० आवृत्तियाँ कीजिये।

कुछ हफ़्तों के पश्चात् धीरे-धीरे कुम्भक की अवधि बढ़ाइए।

सावधानी

भोजन के समय एवं भोजन के उपरांत दाहिना स्वर प्रवाहित होना चाहिए; अन्यथा अपचन होता है।

योग्य निर्देशक से प्रशिक्षण प्राप्त करें।

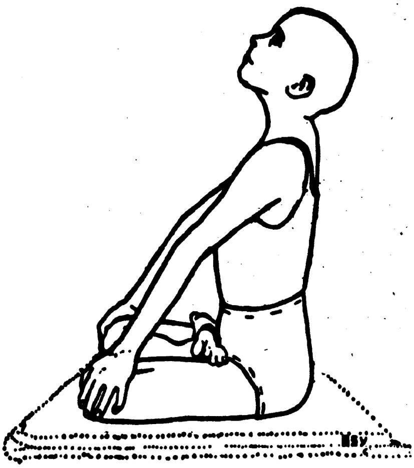
लाभ

इस प्राणायाम से पिंगला नाड़ी क्रियाशील होती है।

टिप्पणी

कुछ अन्य ऐसे प्राणायाम भी हैं जो बायें नासिका छिद्र द्वारा इड़ा या चंद्र नाड़ी पर प्रभाव डालते हैं। विभिन्न व्यक्तियों पर इनका प्रभाव भिन्न-भिन्न पड़ता है। अतः योगशास्त्रानुसार उनका वर्णन व अभ्यास वर्जित है।

मूर्छा प्राणायाम



मूर्छा प्राणायाम

मूर्छा प्राणायाम

विधि

इस प्राणायाम के लिए स्थिर और अचल आसन की आवश्यकता है।

पद्मासन या सिद्धासन उत्तम हैं।

सिर को पीछे मोड़कर आकाशी मुद्रा करते हुए पूरक कीजिए। पूरक दोनों नासिका-छिद्रों से दीर्घ परन्तु धीरे हो।

अन्तरंग कुम्भक कीजिये। शाम्भवी मुद्रा करते हुए स्थिर रहिये।

भुजाओं को एकदम सीधा रखिये।

घुटनों को हाथों से दबाइये।

हाथों को मोड़ते हुए तथा सिर को सामने पूर्व स्थिति में लाते हुए रेचक कीजिये। नेत्र बन्द ही रहें।

सम्पूर्ण शरीर को कुछ सेकेण्ड के लिए शिथिल कीजिये। शारीरिक एवं मानसिक रूप से शान्ति एवं हल्केपन का अनुभव कीजिए।

यह अभ्यास की एक आवृत्ति है।

क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

टिप्पणी

पूर्ण अभ्यास में नासिका से ही श्वसन कीजिये।

समय

बिना तनाव के अधिकतम अवधि तक आवृत्तियाँ कीजिये।

अभ्यास के साथ धीरे-धीरे अवधि में वृद्धि करने की कोशिश कीजिये।

बेहोशी की अनुभूति तक जितनी आवृत्तियाँ सम्भव हों, कीजिये।

क्रम

आध्यात्मिक : ध्यान के पूर्व।

शारीरिक एवं मानसिक : आसन के उपरान्त या निद्रा से पूर्व।

सीमाएँ

योग्य निर्देशक से सावधानीपूर्वक सीखिये।

उच्च रक्तचाप, चक्कर आने तथा मस्तिष्क-दाब से पीड़ित व्यक्तियों के लिए यह अभ्यास वर्जित है।

लाभ

ध्यान की अच्छी तैयारी करता है। मन को अंतर्मुखी बनाता है।

मनुष्य को विशेष आत्मिक स्तर तक पहुँचाने में मदद करता है क्योंकि सुनने एवं देखने की बाह्यगत क्रियायें अदृश्य या लुप्त हो जाती हैं। शारीरिक एवं मानसिक स्थिरता प्रदान करता है। अतः तनाव, चिन्ता तथा क्रोध को दूर करने के लिए उपयोगी प्राणायाम है। रक्तचाप, विक्षेपों व मानसिक समस्याओं से ग्रस्त व्यक्तियों के लिए लाभप्रद है।

बंध

प्रस्तावना

योगाभ्यास का यह छोटा परन्तु अत्यन्त महत्वपूर्ण वर्ग है। यह अन्तः शारीरिक प्रक्रिया है। इस अभ्यास के द्वारा व्यक्ति शरीर के विभिन्न अंगों तथा नाड़ियों को नियन्त्रित करने में समर्थ होता है। बन्ध का शाब्दिक अर्थ है बाँधना या कड़ा करना। इस अभ्यास के लिए आवश्यक शारीरिक क्रियाओं का वर्णन ही इस वर्ग के अन्तर्गत किया गया है। शरीर के भिन्न-भिन्न अंगों को धीरे से, परन्तु शक्तिपूर्वक संकुचित एवं कड़ा किया जाता है। इससे आन्तरिक अंगों की मालिश होती है। रक्त का जमाव दूर होता है। यह अंग विशेष से सम्बंधित नाड़ियों के कार्यों को नियमित करता है। परिणामतः शारीरिक कार्य एवं स्वास्थ्य में उन्नति होती है।

बन्ध शारीरिक अभ्यास हैं, परन्तु अभ्यासी के सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त विचारों एवं आत्मिक तरंगों में प्रवेश कर ये चक्रों पर सूक्ष्म प्रभाव डालते हैं। सुषुम्ना नाड़ी में प्राण के स्वतन्त्र प्रवाह में अवरोध उत्पन्न करने वाली ब्रह्म ग्रन्थि, विष्णु ग्रन्थि तथा रुद्र ग्रन्थि इस अभ्यास से खुल जाती हैं। इस प्रकार आध्यात्मिक शक्ति उत्पन्न होती है। उच्च अभ्यासी सुषुम्ना नाड़ी की जकड़न का अनुभव कर सकते हैं। यह आध्यात्मिक शक्ति की उत्पत्ति का सूचक है। ध्यान की उच्च अवस्था को प्राप्त व्यक्ति यह ज्ञात करेंगे कि यह अनुभव ठीक वैसा ही है जैसा चक्रों के जागरण के समय होता है।

अन्य यौगिक क्रियाओं के साथ बन्धों का समन्वय

अभ्यास में उन्नति करने पर एवं परिपक्वता-प्राप्ति के उपरान्त अभ्यास स्वतः किया जा सकता है। योग-मार्ग में अभ्यासी की उन्नति के बाद बन्धों के अभ्यास का समन्वय मुद्रा या प्राणायाम के साथ किया जा सकता है (जैसा कि अगले अध्यायों में वर्णित किया गया है)। इससे अधिक लाभार्जन किया जा सकता है। इसका कारण यह है कि जब प्राणायाम की तरह प्राण का प्रवाह समान हो जाता है तो बन्धों का नियन्त्रण उसके प्रवाह पर हो जाता है तथा यह आवश्यकतानुसार विशेष प्रदेश में उसका बहाव करते हुए उसके अपव्यय को बचाता है।

जब यौगिक क्रियाओं का समन्वय होता है तब व्यक्ति में आध्यात्मिक शक्तियाँ जागृत होती हैं तथा उच्च 'योग' का प्रारम्भ होता है। मुद्रा एवं

प्राणायाम के साथ बन्धों के समन्वय की विधियों का वर्णन उनके अध्यायों में वर्णित है।

कुम्भक

बन्धों के अभ्यासी को श्वास रोकने की आवश्यकता पड़ती है। स्वाभाविकतः प्रारम्भ में कुम्भक की अवधि कम रहेगी, परन्तु अभ्यासी की क्षमता के अनुपात से क्रमशः यह अवधि बढ़ाई जानी चाहिए। कुंभक बहिरंग या अंतरंग हो सकता है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि दीर्घ रेचक या अधिक से अधिक लम्बा पूरक करके फेफड़ों के कार्य को रोका जा सकता है। कुम्भक बन्ध एवं प्राणायाम का अनिवार्य अंग है। अभ्यासी को शनैः शनैः कुम्भक लगाने की क्षमता बढ़ाने की सलाह दी जाती है। कुछ हफ्तों या महीनों के उपरान्त कुम्भक की अवधि फेफड़ों पर बिना तनाव डाले बढ़ानी चाहिए।

जालन्धर बन्ध



जालन्धर बन्ध

जालन्धर बन्ध

विधि

पद्मासन या सिद्धासन में बैठें अथवा खड़े होकर अभ्यास करें।

हाथों को घुटनों के ऊपर रखिये।

सम्पूर्ण शरीर को शिथिल कीजिये। नेत्रों को बन्द कीजिये।

दीर्घ पूरक के बाद अन्तरंग कुम्भक कीजिये।

सिर को सामने झुकाइये तथा ठुड्डी को छाती पर दबाइये।

हाथों पर बल डालते हुए उन्हें अचल अवस्था में रखिये।

दोनों कन्धों को एक साथ ऊपर उठाकर कुछ सामने रखिये। इससे हाथ सीधे व स्थिर रहेंगे।

यह अन्तिम अवस्था है।

श्वास को रोकने की क्षमतानुसार इस अवस्था में रुकिये।

कंधों को शिथिल कीजिये, हाथों को मोड़कर सिर ऊपर उठाइये।

धीरे-धीरे रेचक कीजिये। सामान्य श्वसन के बाद पुनरावृत्ति कीजिये।

टिप्पणी

बहिरंग कुम्भक के अभ्यास के साथ भी यह क्रिया की जा सकती है।

ठुड्डी को झुकाकर छाती से दबाने के कारण इस अभ्यास में वायु-नलिका

बन्द हो जाती है तथा अनेक अंगों पर दबाव पड़ता है।

आवृत्ति

श्वास रोकने की आरामदायक अवधि तक दस बार कीजिये।

एकाग्रता

विशुद्धि चक्र पर।

क्रम

आदर्श रूप से मुद्रा एवं प्राणायाम के साथ। यदि मात्र इसी का अभ्यास करना हो तो आसन-प्राणायाम के पश्चात् एवं ध्यान के पूर्व कीजिये।

सावधानी

बन्ध को शिथिल कर सिर को उठाकर ही पूरक या रेचक कीजिये।

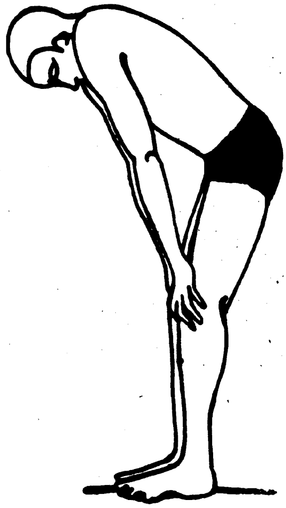
सीमाएँ

उच्च रक्तचाप, अन्तःमस्तिष्क-दाब या दिल की बीमारी में योग्य व्यक्ति की सलाह से ही अभ्यास किया जाये।

लाभ

ग्रीवा प्रदेश में स्थित रंध्र की नाड़ियों (sinus receptors) पर इस शारीरिक प्रक्रिया से दबाव पड़ता है जिसके परिणामस्वरूप ही उपरोक्त लाभ की प्राप्ति होती है। मस्तिष्क को रक्त प्रदान करने वाली ग्रीवा शिरा (jugular vein) के रक्तचाप से ये नाड़ियाँ शीघ्र ही प्रभावित होती हैं। यदि रक्तचाप उच्च हो तो मस्तिष्क पर प्रभाव पड़ता है तथा दिल की धड़कन कम हो जाती है। यदि रक्त का दाब निम्न हो जाये तो दिल की धड़कन बढ़ जाती है। ये नाड़ियाँ रक्तचाप के प्रति अति ग्रहणशील होती हैं। अतः जालन्धर बन्ध के अभ्यास काल में इन पर दबाव पड़ने से दिल की धड़कन न्यून हो जाती है तथा मन को स्थिरता प्राप्त होती है।

चुल्लिका तथा उपचुल्लिका ग्रन्थियों की मालिश होती है। उनकी क्रियाशीलता बढ़ती है। इन ग्रन्थियों का, विशेषकर चुल्लिका ग्रन्थि का शारीरिक रचना, विकास व प्रजनन-क्रियाओं पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। इनकी सक्षमता से समस्त शरीर प्रभावित होता है। यह मानसिक तनाव, चिंता, क्रोध के निवारणार्थ एक अच्छा अभ्यास है। साधक को आश्चर्यजनक रूप से ध्यान के लिए तैयार करता है।



जालन्धर बन्ध (प्रकारान्तर)

जालन्धर बन्ध (प्रकारान्तर)

विधि

पैरों को लगभग आधा मीटर दूर रखते हुए खड़े हो जाइये।

सामने झुकिए।

हाथों को घुटनों के ठीक ऊपर रखिये।

दीर्घ रेचक या पूरक कीजिये।

कुम्भक लगाइये।

ठुड्डी को छाती पर लगाइये।

दबाव को अधिक कड़ा करने के लिए हाथों पर बल दीजिये।

कुम्भक की क्षमतानुसार इस अन्तिम अवस्था में रुकिये।

बन्ध को ढीला कीजिये।

सिर को ऊपर उठाइये।

तत्पश्चात् अभ्यास के अनुकूल पूरक या रेचक कीजिये।

मूल बन्ध

मूल बन्ध

विधि

ध्यान के किसी भी ऐसे आसन में बैठ जाइये जिसमें घुटने जमीन को छूते रहें। सिद्धासन या सिद्धयोनि आसन इसके लिए सर्वोत्तम हैं।

इन आसनों में एड़ी का दबाव मूलाधार प्रदेश (Perineum) पर पड़ता है जिससे बन्ध के उत्तम अभ्यास में सहायता मिलती है।

हथेलियों को घुटनों पर रखिये।

नेत्र बन्द रखिये।

पूरे शरीर को शिथिल कीजिये।

दीर्घ पूरक कीजिये। अंतरंग कुंभक लगाइए। जालंधर बंध लगाइये।

तत्पश्चात् मूलाधार-प्रदेश के स्नायुओं में आकुंचन क्रिया करते हुए उन्हें ऊपर की ओर खींचिये।

यह पूर्णावस्था है।

इस अवस्था में श्वास रोकने की क्षमतानुसार स्थिर रहिए।

तत्पश्चात् स्नायुओं को ढीला कीजिये।

सिर को सामान्य स्थिति में लाइये।

अब धीरे-धीरे रेचक क्रिया कीजिये।

टिप्पणी

दीर्घ रेचक क्रिया के उपरांत बहिर्कुम्भक लगाते हुए भी अभ्यास किया जा सकता है।

लम्बी अवधि तक इस बन्ध की क्रिया (स्नायुओं का आकुंचन) करने के लिए बिना जालन्धर बन्ध लगाये सामान्य श्वसन के साथ अभ्यास कीजिये।

आवृत्ति

कुंभक लगाने की क्षमतानुसार दस बार क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

एकाग्रता

मूलाधार चक्र पर।

क्रम

आसन-प्राणायाम के उपरान्त तथा ध्यानाभ्यास के पूर्व।

आदर्श अभ्यास के लिए मुद्रा एवं प्राणायाम के साथ कीजिये।

सावधानी

योग्य व्यक्ति के निर्देशन में इस अभ्यास में दक्षता प्राप्त कीजिये।

सीमाएँ

जालन्धर बन्ध के समान ही।

प्रारम्भिक प्रक्रिया

प्रारम्भ में कुम्भक की पूर्ण अवधि तक स्नायुओं को संकुचित रखने में कठिनाई होगी। अतः आरम्भ में अश्विनी मुद्रा का नियमित अभ्यास कीजिये, जिसके फलस्वरूप स्नायु मजबूत होंगे तथा अभ्यासी को उन पर नियन्त्रण प्राप्त होगा।

लाभ

इस क्रिया में प्रजनन एवं उत्सर्जक अंगों के मध्य मूलाधार प्रदेश का आकुंचन तथा ऊपर की ओर खिंचाव होता है। परिणामतः 'अपान वायु (नाभि के निम्न प्रदेश में स्थित प्राण की शक्ति) का बहाव ऊपर होता है और उसका योग 'प्राण वायु' (स्वर यन्त्र एवं छाती के मूल के मध्य में स्थित) से होता है। फलतः शक्ति उत्पन्न होती है।

कुंडलिनी-जागरण में सहायता मिलती है।

ब्रह्मचर्य पालन तथा ओज-शक्ति को जगाने में सहायक है।

जालन्धर बन्ध के लाभ द्विगुणित हो जाते हैं।

कटिबन्ध प्रदेश की नाड़ियों को उत्तेजित करता है तथा उससे सम्बन्धित प्रजनन तथा उत्सर्जक अंगों को व्यवस्थित करता है।

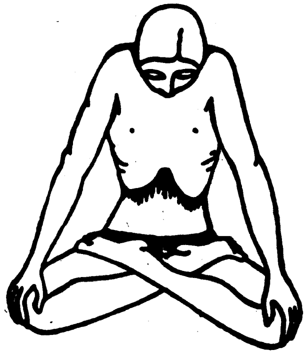
गुदाद्वार की मांसपेशियों (sphincter muscles) को शक्ति प्रदान करता है तथा आँतों के वक्र-प्रदेशों को उत्प्रेरित करता है। इस प्रकार प्रभावपूर्ण ढंग से अपचन दूर करता है।

बवासीर के निवारण में सहायक है।

टिप्पणी

यह अभ्यास मानसिक अवस्था में परिवर्तन करते हुए व्यक्ति को योग के अन्तिम उद्देश्य अर्थात् असीम सत्ता की ओर ले जाता है।

उड्डियान बन्ध



उड्डियान बन्ध

उड्डियान बन्ध

विधि

ध्यान के किसी आसन में बैठिये। घुटने भूमि पर आधारित हों।

हथेलियों को घुटनों पर रखिये।

दीर्घ रेचक कीजिये। बहिर्कुम्भक लगाइये। जालन्धर बन्ध लगाइये।

अब उदर की मांसपेशियों को अधिक से अधिक ऊपर तथा भीतर की ओर संकुचित कीजिये। यह पूर्णावस्था है।

आरामदायक स्थिति तक अभ्यास कीजिये। तत्पश्चात् क्रमशः उदर के स्नायुओं तथा जालन्धर बन्ध को शिथिल कीजिये। पूरक कीजिये। श्वसन-क्रिया सामान्य होने पर पुनः अभ्यास कीजिये।

समय

कुम्भक लगाने की क्षमतानुसार। दस आवृत्तियाँ कीजिये।

एकाग्रता

मणिपुर चक्र पर।

क्रम

स्वतंत्र रूप से इसका अभ्यास आसन एवं प्राणायाम के उपरान्त एवं ध्यान के पूर्व कीजिये। मुद्रा एवं प्राणायाम के साथ अभ्यास करना सर्वोत्तम है।

सावधानी

जठर एवं आँतों के खाली रहने पर ही अभ्यास कीजिये।

सीमाएँ

दिल की बीमारी में, जठर या पेट में घाव हो जाने पर अभ्यास वर्जित है। गर्भवती स्त्री के लिए भी अभ्यास वर्जित है।

प्रारम्भिक एवं स्थानापन्न अभ्यास

इस अभ्यास की तैयारी के लिए 'अग्निसार क्रिया' की जा सकती है।

यह क्रिया उड्डियान बन्ध का स्थानापन्न अभ्यास भी है।

लाभ

इस अभ्यास में श्वास-पटल का ऊपर छाती-गह्वर तक खिंचाव होता है। उदर के अंग भीतर मेरुदण्ड तक संकुचित किये जाते हैं। अतः इसका अभ्यास उदरस्थ एवं जठर की बीमारियों के लिए उपयोगी है। बदहजमी, अपचन, पेट के कीड़े, मधुमेह की अवस्था को दूर करता है। जठराग्नि को उत्तेजित करता है।

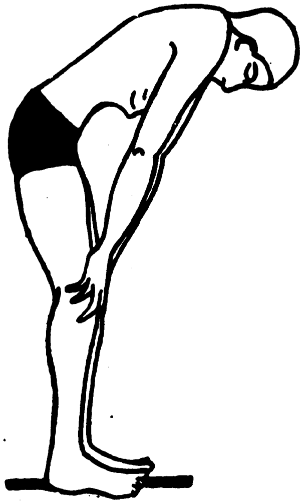
उदर के सभी अंगों को व्यवस्थित कर उनकी क्रियाशीलता बढ़ाता है। यकृत, क्लोम, वृक्क, तिल्ली की मालिश करता है।

नियमित अभ्यास से उनसे सम्बन्धित रोग दूर होते हैं।

वृक्क एवं गुरदों के ऊपर स्थित उपवृक्क ग्रन्थि को सामान्य बनाये रखता है जिससे कमजोर व्यक्ति को शक्ति प्राप्त होती है। परेशानी व चिंता की अवस्था में मन को स्थिरता प्रदान करता है।

अनुकम्पी तंत्रिकाओं तथा परानुकम्पी तंत्रिकाओं को उत्तेजित करता है। इन तन्त्रिकाओं का सम्बन्ध शरीर के कई अंगों, विशेषकर उदर के अंगों से रहता है। फलतः इन अंगों के कार्यों में उन्नति होती है। अभ्यास द्वारा अंगों की प्रत्यक्ष मालिश होती है जिसके परिणामस्वरूप उनकी क्रियाशीलता में वृद्धि होती है।

नाभि प्रदेश में स्थित मणिपुर चक्र के लिए उत्प्रेरक का कार्य करता है। यह शरीर की प्राणशक्ति का केन्द्र है। अतः इस बन्ध के अभ्यास से प्राणशक्ति के बहाव में वृद्धि होती है। यह सुषुम्ना नाड़ी की ओर प्राण के प्रवाह को विशेष रूप से प्रोत्साहित करता है।



उड्डियान बन्ध (प्रकारान्तर)

उड्डियान बन्ध (प्रकारान्तर)

पैरों को परस्पर आधा मीटर दूर रखते हुए खड़े हो जाइये।

कुछ सामने झुकिये। हथेलियों को सामने जाँघों पर रखिये।

दृष्टि सामने रखिये। दीर्घ पूरक कीजिये; तत्पश्चात् दीर्घ रेचक।

उदर के स्नायुओं को संकुचित कर भीतर खींचिये।

पेट का मध्यवर्ती स्थल नतोदर (concave) अवस्था में आ जाये।

दृष्टि सामने रखकर इसी स्थिति में रुकिये।

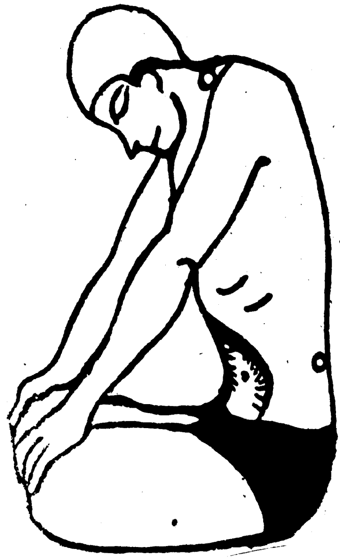
कुछ देर श्वास रोककर 'बन्ध' शिथिल कीजिये।

धीरे - धीरे पूरक कीजिये।

टिप्पणी

यह अभ्यास अपेक्षाकृत सरल है; अतः प्रारम्भिक अभ्यासियों के लिए उचित है।

शेष विवरण बैठकर किये जाने वाले उड्डियान बंध की भाँति ही हैं।



महाबन्ध

महाबन्ध

विधि

ध्यान के किसी आसन में बैठिये। सिद्धयोनि आसन या सिद्धासन उत्तम हैं।

जालन्धर बन्ध लगाइये।

तत्पश्चात् क्रमशः उड्डियान बन्ध एवं मूल बन्ध लगाइये।
निम्न चक्रों पर अपनी चेतना को ले जाइये। मानसिक रूप से उनके नामों का उच्चारण कीजिये। (चित्र में छोटे-छोटे गोल वृत्तों का अवलोकन कीजिये।):

(अ) मूलाधार

(ब) मणिपुर

(स) विशुद्धि

क्रमशः प्रत्येक चक्र पर कुछ सेकेंड तक अपनी चेतना को स्थिर रखिये।

विशुद्धि के पश्चात् पुनः चेतना मूलाधार पर ले आइये और क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

कुम्भक की सुखद स्थिति तक उपरोक्त क्रिया कीजिये।

अब मूलबन्ध शिथिल कीजिये।

उड्डियान बन्ध को मुक्त कीजिये।

अन्त में जालन्धर बन्ध हटाइये तथा धीरे-धीरे पूरक कीजिये।

एक बार सामान्य श्वास-प्रश्वास क्रिया के उपरान्त 'महाबन्ध' का अभ्यास पुनः कीजिये।

टिप्पणी

चेतना को एक चक्र से दूसरे चक्र पर स्थानांतरित कर चक्र के ठीक स्थान पर लाने में प्रारम्भिक अभ्यासियों को कठिनाई होगी। ऐसे अभ्यासियों को परिशिष्ट में दी गयी जानकारी द्वारा उनकी स्थिति ज्ञात कर स्थूल अनुमान से उस प्रदेश पर ध्यान करना चाहिए।

क्षमतानुकूल अधिक देर तक श्वास रोकने पर यह अभ्यास बहुत ही प्रभावशाली हो जाता है। अभ्यासी को धीरे-धीरे कुम्भक की अवधि में वृद्धि करनी चाहिए। किसी भी स्थिति में तनाव नहीं पड़ने पाये।

आवृत्ति

नौ आवृत्तियों तक।

सावधानी

तीनों बन्धों के स्वतंत्र वर्णन में बतलाये अनुसार।

तीनों बन्धों में अधिकार-प्राप्ति के उपरान्त ही 'महाबन्ध' का अभ्यास कीजिये।

लाभ

तीनों बन्धों के लिए वर्णित लाभ की प्राप्ति होती है।

आत्मिक शक्ति के प्रवाह को उत्प्रेरित करने तथा ध्यान के पूर्व मन को अन्तर्मुखी बनाने के लिए एक शक्तिशाली अभ्यास है। अतः आध्यात्मिक साधकों के लिए विशेष रूप से लाभप्रद है।

मुद्रा

प्रस्तावना

हजारों वर्ष पूर्व भारत में अधिकांश व्यक्तियों, विशेषकर ज्ञान या सत्य की खोज करने वाले सच्चे जिज्ञासुओं को आसन, प्राणायाम आदि योगाभ्यासों की विद्या सरलता से प्राप्त हो जाती थी। तथापि उच्च शक्तिशाली अभ्यासों का ज्ञान कुछ चुने हुए लोगों की ही धरोहर रहा करती थी। यह ज्ञान गुरु शिष्य को प्रदान किया करते थे या प्राचीन ऋषियों द्वारा रचित संस्कृत ग्रंथों के माध्यम से इस ज्ञान की प्राप्ति की जाती थी। परन्तु वर्तमान काल में समस्त विश्व के बहुसंख्यक व्यक्ति अपने आध्यात्मिक ज्ञान के विकास के लिए उत्सुक तथा तैयार हैं। विशेष रूप से इस नवीन काल में गुप्त विद्याओं का ही विस्तार या प्रचार अधिक है। योग के महत्वपूर्ण अभ्यासों में मुद्राओं का अभ्यास महत्वपूर्ण है।

कुंडलिनी शक्ति के जागरण में मुद्राओं का अभ्यास सहायक है। अतः यह अभ्यास आसनों एवं प्राणायामों के अभ्यास से अधिक शक्तिशाली माना जाता है। मुद्रा एवं अन्य यौगिक अभ्यासों का वर्णन करने वाला सबसे *प्राचीन* ग्रंथ 'घेरण्ड संहिता' है। 'हठ योग' के इस ग्रंथ की रचना मुनि घेरण्ड ने की थी। इस ग्रंथ में योग के देवता शिवजी अपनी पत्नी एवं शिष्या पार्वती जी से कहते हैं– "हे देवी, मैंने तुम्हें मुद्राओं का ज्ञान प्रदान किया है। केवल इनका ज्ञान ही सब सिद्धियों का दाता है।"

घेरण्ड संहिता में कुल पच्चीस मुद्राओं का वर्णन किया गया है। इनमें

से अधिकांश का अभ्यास योग्य गुरु के निर्देशन में ही करना चाहिए। सत्यतः कोई भी उच्च अभ्यास बिना निर्देशन के नहीं करना चाहिए। यही कारण है कि यहाँ कुछ चुनी हुई, सरल एवं सर्वसाधारण अभ्यास के योग्य मुद्राओं का ही वर्णन किया गया है।

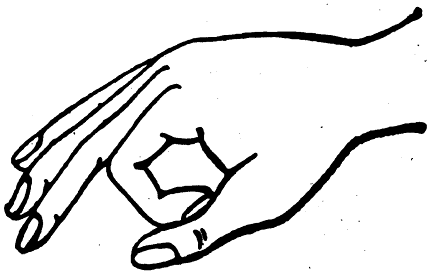
चित्त को प्रकट करने वाले किसी विशेष भाव को *मुद्रा* कहते हैं। उच्च श्रेणी के भारतीय नृत्यों में मुद्रा हाथों की विशेष अवस्था है जो आंतरिक भावों या संवेदनाओं का संकेत करती है। योनिमुद्रा, चिन्मुद्रा आदि अनेक मुद्राएँ हाथ की ही विशेष स्थितियाँ हैं। नृत्य-प्रक्रियाओं की भाँति इनका उद्देश्य भी अंतरंग भावों का प्रकटीकरण या साधक के आध्यात्मिक भावों की ओर संकेत करना है।

प्रतिदिन सामान्यतः घटने वाली बाह्य जगत की क्रियाओं के प्रति हम सचेत रहते हैं। कुछ मुद्राओं द्वारा इन अनैच्छिक शरीरगत प्रतिक्रियाओं पर नियंत्रण प्राप्त किया जाता है। मुद्राओं का अभ्यास साधक को सूक्ष्म शरीर-स्थित प्राण-शक्ति की तरंगों के प्रति जागरूक बनाता है। अभ्यासी इन शक्तियों पर चेतन रूप से नियंत्रण प्राप्त करता है। फलतः व्यक्ति अपने शरीर के किसी अंग में उसका प्रवाह ले जाने या अन्य व्यक्ति के शरीर में उसे पहुँचाने की (अन्य व्यक्ति की प्राणिक या मानसिक चिकित्सा के लिए) क्षमता प्राप्त करता है।

अधिकांश मुद्राओं का संगठन बंध, आसन एवं प्राणायाम के सम्मिलन से होता है जो एक ही अभ्यास कहलाता है। प्रत्येक अभ्यास के निश्चित लाभ हैं; अतः योग शक्तिशाली अभ्यास का निर्माण करता है। इनके अभ्यास से बाह्य जगत से सम्बन्ध टूट जाता है, इन्द्रियाँ अंतर्मुखी होकर प्रत्याहार की स्थिति निर्मित करती हैं। इसलिए ये अभ्यास आध्यात्मिक साधकों के लिए अत्यधिक उपयोगी हैं। चित्त को एकाग्र करने में भी ये अभ्यास समर्थ हैं।

यद्यपि इनका प्राथमिक उद्देश्य आध्यात्मिक है परन्तु जैसा कि वर्णन किया जा चुका है, इनसे मानसिक एवं शारीरिक लाभ की प्राप्ति होती है। लाभों का विस्तृत वर्णन प्रत्येक मुद्रा की विधि के साथ आगे प्रस्तुत किया गया है।

ज्ञान मुद्रा और चिन्मुद्रा



ज्ञान मुद्रा

ज्ञान मुद्रा

विधि

ध्यान के किसी एक आसन में बैठ जाइये।

दोनों हाथों की तर्जनियों को इस प्रकार मोड़िये कि उनका स्पर्श अंगूठों के आधार से हो।

शेष तीन अंगुलियों को एक-दूसरे से कुछ दूरी पर फैलाये रखिये।

हाथों को घुटनों पर रखिये। हथेलियों का रुख नीचे की ओर रहे। अंगूठों एवं अन्य तीन अंगुलियों (बिना मुड़ी हुई) की दिशा घुटनों के सामने भूमि की ओर रहे।

चिन्मुद्रा

विधि

पूर्ण अभ्यास ज्ञान मुद्रा की भाँति ही है, अंतर इतना है कि हथेलियाँ घुटनों पर ऊपर की ओर खुली हुई रहें।

समय

किसी भी आसन में ध्यान-काल में उपरोक्त किसी एक मुद्रा में हाथों की स्थिति होनी चाहिए।

लाभ

नाड़ियों के प्रवाह की दिशा को हाथ से विपरीत करते हुए यह अभ्यास स्थिर अवस्था में लम्बी अवधि तक रहने की क्षमता प्रदान करता है। अंगूठे और तर्जनी का योग और मध्यमा, अनामिका व कनिष्ठिका का अलगाव त्रिगुण पर जीव-ब्रह्म-ऐक्य का संकेत है।

शाम्भवी मुद्रा



शाम्भवी मुद्रा

शाम्भवी मुद्रा

विधि

ध्यान के किसी आसन में बैठिये। पीठ सीधी रहे।

हाथों को घुटनों पर चिन्मुद्रा या ज्ञान मुद्रा में रखिये।

सामने किसी बिन्दु पर दृष्टि एकाग्र कीजिये।

तत्पश्चात् अधिक से अधिक ऊपर देखने का प्रयास कीजिये।

सिर स्थिर रहे। अब भ्रूमध्य-दृष्टि कीजिये। विचारों को रोकिये। ध्यान कीजिये।

समय

जितनी देर संभव हो। प्रारंभ में कुछ देर अभ्यास कीजिये।

अभ्यास करते हुए धीरे-धीरे समय बढ़ाइये।

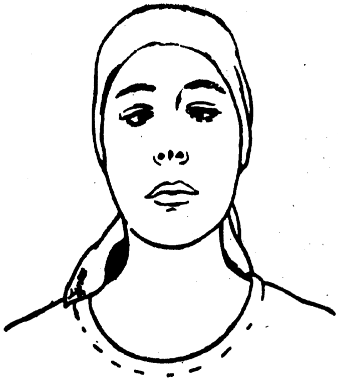
लाभ

आज्ञा चक्र को जाग्रत करने वाली एक शक्तिशाली क्रिया है। आज्ञा चक्र निम्न एवं उच्च चेतना को जोड़ने वाला केन्द्र है।

शारीरिक लाभ प्रदान कर आँखों के स्नायुओं को मजबूत बनाता है।

मानसिक स्तर पर इस अभ्यास से मन की शान्ति प्राप्त होती है, तनाव एवं चिन्ता का निवारण होता है।

नासिकाग्र दृष्टि



नासिकाग्र दृष्टि

नासिकाग्र दृष्टि

विधि

ध्यान के आसन में बैठ जाइये। मेरुदण्ड सीधा रहे व मुँह सामने हो।

नासिका के अंतिम सिरे (अग्र भाग) पर दृष्टि एकाग्र कीजिये।

लाभ

कुछ देर के लिए अंतरंग या बहिरंग कुम्भक कीजिये। इस स्थिति में कुम्भकों के मध्य पूरक-रेचक करते समय दृष्टि नासिकाग्र पर ही रहेगी।

दीर्घ अवधि के अभ्यास में श्वास-क्रिया सामान्य रहेगी।

सावधानी

नेत्रों पर तनाव न पड़ने पाये।

कुछ हफ्तों या महीनों के अभ्यास के उपरांत समय में वृद्धि कीजिये।

श्वास

शांभवी मुद्रा की भाँति इससे भी एकाग्रता में वृद्धि होती है।

यह मूलाधार चक्र को जाग्रत करती है।

अभ्यासी को अंतर्मुखी तथा आध्यात्मिक स्तर पर पहुँचाती है।

मांडूकी मुद्रा

मांडूकी मुद्रा

विधि

भद्रासन में बैठ जाइए। (आसन के अभ्यास में देखिये)

नासिकाग्र दृष्टि के अभ्यास में धीरे-धीरे पूरक और रेचक कीजिये।

हर प्रकार की गन्ध पर चेतना को ले जाइये।

लाभ

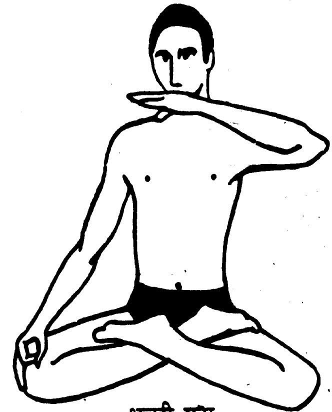
मूलाधार को जागृत करने के लिए महत्वपूर्ण अभ्यास है।

ध्यान की उच्च अवस्था में दिव्य गन्ध को ग्रहण करने के लिए उपयोगी है।

टिप्पणी

नासिकाग्र दृष्टि से बहुत कुछ समानता रखने के कारण इसे उसी खण्ड में रखा गया है।

भूचरी मुद्रा



भूचरी मुद्रा

भूचरी मुद्रा

विधि

पद्मासन, सिद्धासन या किसी भी ध्यान के आसन में बैठिये।

दाहिने हाथ को घुटने पर रखिये।

बाएँ हाथ को मुँह के सम्मुख उठाइये। पूरी भुजा क्षैतिज स्थिति में रहेगी।

हथेलियाँ नीचे की ओर खुली रहेंगी।

अंगूठे को ऊपरी होठ तथा नासिका के आधार पर स्थिर कीजिये। इसी हाथ की चतुर्थ या छोटी अंगुली की ओर एकाग्र दृष्टि से देखिये। कुछ देर इस अंगुली पर तनावरहित गहन एकाग्रता के बाद हाथ को हटा लीजिये। परन्तु उसी स्थान पर दृष्टि एकाग्र रखिये जहाँ छोटी अंगुली थी। अधिक से अधिक देर इस रिक्त स्थान पर दृष्टि रखिये। रिक्तता की अपेक्षा और कुछ भी विचार न उठने दीजिये।

लाभ

एकाग्रता एवं स्मरण शक्ति में वृद्धि करता है। मन को अंतर्मुखी बनाता है; अतः ध्यान की तैयारी का उत्तम अभ्यास है।

टिप्पणी

आरंभ में अभ्यास कठिन हो सकता है परन्तु अभ्यास से सरलतम बन जाता है।

आकाशी मुद्रा

आकाशी मुद्रा

विधि

ध्यान के किसी आसन में बैठिये।

जिह्वा को पीछे मोड़कर ऊपरी तालु से स्पर्श कीजिये। (खेचरी मुद्रा) उज्जायी प्राणायाम तथा शांभवी मुद्रा का अभ्यास कीजिये।

धीरे-धीरे सिर को कुछ पीछे मोड़िये। (पूरी तरह नहीं)

धीरे-धीरे दीर्घ पूरक कीजिये।

सिर की इस झुकी अवस्था में उज्जायी प्राणायाम से गले में खराश भी हो सकती है परन्तु कुछ अभ्यास के पश्चात् यह अभ्यास कष्टरहित हो जायेगा। (चित्र के लिए मूर्च्छा प्राणायाम देखिये)

समय

अधिकतम अवधि तक अंतिम स्थिति में रुकिये।

यदि कुछ ही समय के उपरांत अभ्यास कठिन जान पड़े तो उज्जायी प्राणायाम, खेचरी मुद्रा तथा शांभवी मुद्रा को मुक्त कीजिये।

कुछ देर विश्राम कर क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

एकाग्रता

आज्ञा चक्र पर।

सावधानी

सभी मुद्राओं की भाँति इसका प्रशिक्षण भी योग्य निर्देशन में लीजिये।

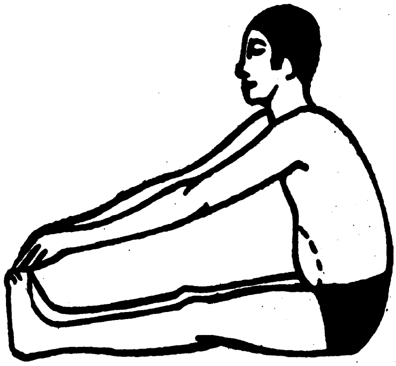
लाभ

यह उच्च यौगिक अवस्था है जिसमें साधक चेतना की उच्च स्थिति को प्राप्त करता है।

यह मुद्रा मन को स्थिरता एवं शांति प्रदान करती है।

उज्जायी प्राणायाम, शांभवी तथा खेचरी मुद्रा के लाभ मिलते हैं।

तड़ागी मुद्रा



तड़ागी मुद्रा

तड़ागी मुद्रा

विधि

पश्चिमोत्तानासन में बैठ जाइये, परन्तु पैर कुछ दूर-दूर रहेंगे। धड़ सामने झुकाकर हाथों से पैरों के अंगूठे पकड़िये।

दीर्घ पूरक कीजिये। इस काल में उदर के स्नायुओं का विस्तार बाहर की ओर अधिक से अधिक कीजिये।

क्षमतानुसार अतर्कुम्भक लगाइये।

सम्पूर्ण शरीर को शिथिल कर रेचक कीजिये।

अंगूठों को पकड़ी हुई अवस्था में श्वास-क्रिया सामान्य रखिये।

दीर्घ पूरक के साथ उपरोक्त वर्णित क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

आवृत्ति

इसका अभ्यास १० बार कीजिये।

एकाग्रता

मणिपुर चक्र पर।

लाभ

जठर एवं सभी उदरस्थ अंगों को व्यवस्थित कर पाचन-क्रिया में सुधार करता है। अतः इस प्रदेश के रोगों का निवारण होता है।

अंतरंग प्रदेश में स्थित अनेक नाड़ियों को उत्प्रेरित कर उनके कार्यों को नियमित करता है। परिणामतः सम्पूर्ण शरीर की कार्य-क्षमता बढ़ जाती है।

भुजंगिनी मुद्रा

भुजंगिनी मुद्रा

विधि

किसी भी ध्यान के आसन में बैठिये।

सम्पूर्ण शरीर को शिथिल कीजिये।

इस मुद्रा में अभ्यासी मुँह के द्वारा श्वास लेने का प्रयास करता है।

पानी पीने की भाँति वायु के कई-कई घूँट लेते हुए उसे फेफड़ों में नहीं, वरन् पेट में पहुँचाने की कोशिश कीजिये।

अधिकतम अवस्था तक पेट का विस्तार कीजिये।

कुछ देर श्वास को भीतर रोकिये।

तत्पश्चात् डकार लेते हुए श्वास को बाहर निकालिये।

क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

आवृत्ति

इच्छानुसार आवृत्तियाँ कीजिये।

विशेष बीमारियों में अधिक बार क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

क्रम

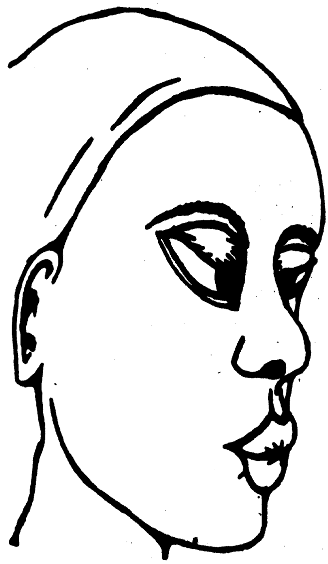
किसी भी समय अभ्यास किया जा सकता है परन्तु हठयोग की शंख प्रक्षालन क्रिया (हठयोग के अभ्यास में देखिये) के उपरांत करने से अधिक लाभ मिलता है।

टिप्पणी

यह अभ्यास पाचक रस उत्पन्न करने वाली ग्रंथियों एवं अन्ननलिका की दीवारों को नवजीवन प्रदान करता है।

उदर को स्वस्थ बनाता है। इस प्रदेश में एकत्रित पुरानी वायु का निकास करता है।

काकी मुद्रा



काकी मुद्रा

काकी मुद्रा

विधि

ध्यान के किसी आसन में बैठिये। होठों से एक सँकरी नली बनाइये। नासिकाग्र दृष्टि कीजिये।

मुँह से धीरे-धीरे दीर्घ पूरक कीजिये।

होठों को परस्पर बन्द करते हुए नासिका से धीरे-धीरे रेचक कीजिये।

पुनः मुँह से पूरक कर क्रिया को दुहराइये।

समय

जितनी देर सम्भव हो।

लाभ

मुँह से भीतर जाने वाले वायु-प्रवाह का सम्पर्क मुँह की दीवारों से होता है तथा अनेक बीमारियों को रोकने या दूर करने में यह अभ्यास मदद करता है। साथ ही नासिकाग्र दृष्टि के लाभ की प्राप्ति होती है। समस्त शारीरिक-संस्थानों को शीतलता प्रदान करता है।

अश्विनी मुद्रा

अश्विनी मुद्रा

विधि

प्रथम स्थिति

ध्यान के किसी भी आसन में बैठिये। शरीर को शिथिल कीजिये।

नेत्रों को बन्द कर स्वाभाविक श्वास लीजिये। गुदाद्वार की मांसपेशियों (sphincter muscles) को कुछ सेकेण्ड के लिए संकुचित कर प्रसारित कीजिये।

इस क्रिया की अधिक से अधिक आवृत्तियाँ कीजिये।

द्वितीय स्थिति

प्रथम स्थिति की तरह ही बैठिये।

गुदाद्वार को धीरे-धीरे संकुचित करते हुए पूरक कीजिये।

स्नायुओं का संकुचन बनाये रखते हुए ही अंतरंग कुम्भक लगाइये। रेचक कीजिये।

संकुचित स्नायुओं को शिथिल कीजिये।

अपनी सुविधानुसार क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

समय

क्षमतानुसार आसन कीजिये, अपेक्षाकृत अधिक श्रम न कीजिये।

क्रम

दिन में किसी भी समय या योगाभ्यास कार्यक्रम में।

लाभ

इस अभ्यास के परिणामस्वरूप अश्व की तरह ही गुदा के स्नायुओं पर नियन्त्रण प्राप्त किया जाता है।

इस अभ्यास की सिद्धि पर व्यक्ति अपनी प्राण-शक्ति के ह्रास को रोकने में समर्थ होता है। इस तरह शक्ति का संचय होता है। इसका प्रवाह ऊपर की ओर होता है; जिससे अमूल्य उद्देश्यों की पूर्ति होती है। यह मूलबंध की प्रारम्भिक क्रिया है (मूलबंध का अध्याय देखिये)। बवासीर, गुदा या गर्भाशय के बाह्यगत होने की दशा में इसका अभ्यास लाभप्रद है, विशेषकर सिर के बल किये जाने वाले आसनों के साथ इसका योग अधिक प्रभावपूर्ण होता है। आँतों के वक्रों को क्रियाशील बनाते हुए अपचन दूर करता है।

खेचरी मुद्रा

खेचरी मुद्रा

राजयोग की विधि

मुँह को बन्द कर जिह्वा के अग्र भाग से तालु का स्पर्श कीजिये। अधिक जोर न देते हुए जिह्वाग्र को अधिकाधिक पीछे मोड़िये।

वैकल्पिक रूप से इस अवस्था में उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास कर सकते हैं।

नये अभ्यासी कुछ देर में ही असुविधा का अनुभव करेंगे। उन्हें कुछ क्षणोपरांत जिह्वा को सामान्य स्थिति में लाकर पुनः जिह्वा का बन्ध लगाना चाहिए।

नियमित अभ्यास करने से जिह्वा तालु के ऊपरी छिद्र से ऊपर चली जायेगी। इससे मस्तिष्क के नाड़ी-केन्द्रों की क्रियाशीलता बढ़ती है।

हठयोग की विधि

उच्च अभ्यासी को गुरु के निर्देशन में इसका अभ्यास करना चाहिए।

इसके लिए धैर्यपूर्वक नियमित अभ्यास की आवश्यकता है।

जिह्वा के नीचे के स्नायुओं का संबंध-विच्छेद धीरे-धीरे प्रति सप्ताह करना होगा। इसके लिए शल्य-विधि या तीव्र धार वाले पत्थर का प्रयोग किया जा सकता है।

दूध दुहने की सी क्रिया द्वारा लम्बी अवधि तक जिह्वा की मालिश कीजिये। इस क्रिया को सुगम बनाने के लिए मक्खन, तेल आदि स्निग्ध द्रव का प्रयोग किया जा सकता है।

महीनों इस क्रिया का अभ्यास कीजिए, जब तक कि जिह्वाग्र का स्पर्श भ्रूमध्य से होने न लगे। जिह्वा की लम्बाई इतनी बढ़ जाने पर खेचरी मुद्रा का अभ्यास सम्भव हो जाता है।

जिह्वा को मोड़कर सावधानीपूर्वक तालु के ऊपरी छिद्र से अधिक से अधिक भीतर ले जाने की कोशिश कीजिए। इससे प्रभावित होकर श्वास-मार्ग बन्द हो जायेगा और 'ललना चक्र' जागृत होगा।

श्वास

खेचरी मुद्रा के प्रारम्भिक अभ्यासी श्वास-क्रिया सामान्य रखें।

कुछ हफ्तों या महीनों के अभ्यास के बाद श्वास की गति धीमी करते जाना चाहिए। दो महीनों या अधिक अवधि के बाद श्वास की गति प्रति मिनट ५ से ८ तक होनी चाहिए।

योग्य निर्देशक के निर्देशन में अभ्यास करते हुए अधिक अवधि के अभ्यास के बाद श्वास-क्रिया में न्यूनता भी लाई जा सकती है।

आवृत्ति

इच्छानुसार या संभावित अवधि तक। शांति और विश्राम काल में अभ्यास उत्तम होगा। इस अभ्यास का योग अन्य योगाभ्यास के साथ किया जा सकता है। व्यक्तिगत क्रियाओं के अध्याय में इसकी विस्तृत विवेचना की गयी है।

सावधानी

बिना गुरु के निर्देशन के पूर्ण अभ्यास न कीजिये।

जो साधक बहुत कड़ी मेहनत करते हैं, उनको कड़वे स्वाद का अनुभव प्राप्त होता है। यह हानिप्रद है। अतः इस स्थिति में अभ्यास बन्द कर दीजिये।

लाभ

मानव शरीर पर सूक्ष्म प्रभाव डालता है।

तालु के पीछे के रन्ध्र में अनेक दाब-बिन्दु तथा ग्रन्थियाँ हैं। इनका शारीरिक क्रियाओं पर अत्यधिक नियंत्रण रहता है। मोड़ी हुई जिह्वा के कारण इनके रस-स्राव की क्रिया में वृद्धि होती है। इससे शारीरिक स्वास्थ्य को बहुत लाभ पहुँचता है। लार की उत्पत्ति होती है जिससे भूख-प्यास दूर होती है।

भूमि के नीचे अधिक अवधि तक रहने वाले योगी पूरे समय खेचरी मुद्रा लगाये रहते हैं। अतः बिना किसी प्रकार की हानि पहुँचे इच्छानुसार अवधि तक श्वास रोकने में समर्थ होते हैं।

यह मुद्रा प्राण-शक्ति के संचय एवं कुण्डलिनी-शक्ति को जागृत करती है।

इस अभ्यास की पूर्णता की प्राप्ति पर सूक्ष्म एवं स्थूल शरीर के मध्य सम्बन्ध-विच्छेद हो जाता है। चेतना की स्थिति सूक्ष्म एवं स्थूल स्तर के मध्य अर्थात् आकाश में हो जाती है।

प्राचीन योग शास्त्रों में इस मुद्रा को बहुत महत्त्वपूर्ण माना जाता है।

योग मुद्रा

योग मुद्रा

विधि

पद्मासन में बैठिये।

समस्त शरीर को शिथिल कीजिये। नेत्रों को बंद कर रेचक कीजिये।

श्वास रोकिये और मूलाधार चक्र पर ध्यान कीजिये।

श्वास का अनुभव करते हुए धीरे-धीरे पूरक कीजिये।

चेतना को मूलाधार चक्र से आज्ञा चक्र पर लाइये।

रेचक क्रिया प्रारम्भ करते हुए सामने झुकिये। साथ ही चेतना को आज्ञा चक्र से नीचे मूलाधार पर ले आइये।

श्वास की गति एवं शरीर की गति में समानता होनी चाहिये।

रेचक क्रिया के साथ ही सामने सिर का स्पर्श भूमि से हो।

मूलाधार पर ध्यान करते हुए कुछ देर के लिए बहिर्कुम्भक लगाइये।

पूरक करते हुए धड़ को सीधा कर चेतना को आज्ञा चक्र पर लाइये। धड की लम्बरूप अवस्था में श्वास को रोकते हुए आज्ञा चक्र पर ध्यान कीजिये।

रेचक करते हुए धड़ को धीरे-धीरे नीचे झुकाइये।

टिप्पणी

योगमुद्रा आसन की भाँति ही अभ्यास की विधि है; केवल एकाग्रता की क्रिया में भिन्नता है।

लाभ

ध्यान की तैयारी के लिए अति उत्तम अभ्यास है।

आध्यात्मिक शक्ति के प्रति जागरूकता एवं नियंत्रण प्रदान करता है।

मन में स्थिरता एवं शान्ति लाता है।

क्रोध या अधिक तनाव के समय अभ्यास करना चाहिए।

योगमुद्रा नामक आसन (आसनों का अध्याय देखिये) के सभी लाभ प्रदान करता है।

प्राण मुद्रा



द्वितीय अवस्था



चतुर्थ अवस्था

प्राण मुद्रा

विधि

ध्यान के किसी भी आसन में बैठ जाइये।

मेरुदण्ड लंबवत् हो व मुँह सामने की ओर हो। हाथों को गोद में रखिये तथा नेत्रों को बंद कीजिये।

प्रथम अवस्था

क्षमतानुसार लम्बा रेचक कीजिये। इस क्रिया में उदर के स्नायुओं का संकोचन करते हुए फेफड़ों से अधिकतम वायु का निष्कासन कीजिये। श्वास रोकिये, साथ ही मूलबंध लगाइये।

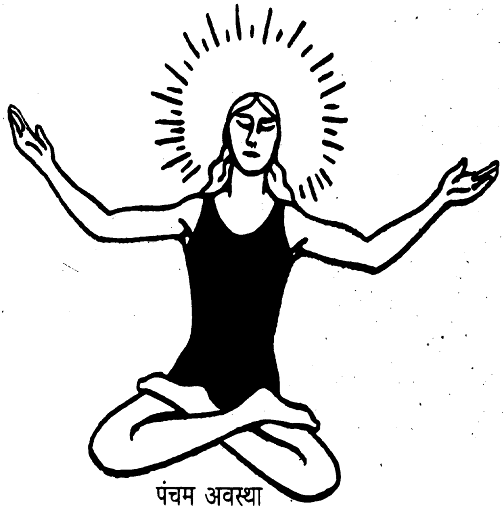
मूलाधार चक्र पर ध्यान कीजिये।

आरामदायक स्थिति तक श्वास रोकिये।

द्वितीय अवस्था

मूलबंध शिथिल कीजिये। उदर का विस्तार करते हुए धीरे-धीरे लंबा पूरक कीजिये। अधिकतम मात्रा में वायु का प्रवेश फेफड़ों में होना चाहिए। साथ ही हाथों को उठाकर नाभि प्रदेश के सम्मुख ले आइये। हथेलियाँ धड़ की ओर खुली रहें। दोनों हाथों की अंगुलियों का रुख एक-दूसरे की ओर हो; परन्तु वे आपस में स्पर्श न करें।

इस द्वितीय अभ्यास में उदर से पूरक करते समय प्राण-शक्ति का अनुभव मूलाधार चक्र से ऊपर मणिपुर चक्र में जाते हुए कीजिये।



पंचम अवस्था

उदर द्वारा की गई पूरक-क्रिया एवं हाथों की गति को परस्पर संबंधित कीजिये।

तृतीय अवस्था

छाती का विस्तार करते हुए पूरक क्रिया करते जाइए। साथ ही हाथों को ऊपर उठाइये। इस अवस्था में हाथों की स्थिति छाती के सम्मुख हो। छाती के विस्तार द्वारा पूरक करते हुए इस अभ्यास में अनुभव कीजिये कि मणिपुर से प्राण-शक्ति अनाहत की ओर खींची गयी है।

चतुर्थ अवस्था

कंधों को ऊपर उठाते हुए फेफड़ों में और अधिक वायु भरने की कोशिश कीजिये। इस अभ्यास में अनुभव कीजिये कि प्राणशक्ति अनाहत चक्र से विशुद्धि चक्र में आ गयी। तत्पश्चात् वह आज्ञा चक्र में तरंगों के समान प्रसारित होती हुई सहस्रार में पहुँच गयी।

हाथों को ग्रीवा के समीप लाते हुए गति का संबंध श्वास से कीजिये।

पंचम अवस्था

दोनों हाथों को धड़ के दोनों बाजुओं में फैलाते हुए अंतरंग कुंभक कीजिये। अंतिम अवस्था में फैले हुए हाथ कानों के समतल रहेंगे।

हाथ बाहर की ओर फैले रहेंगे, परन्तु पूरी तरह तने हुए नहीं रहेंगे।

सहस्रार पर ध्यान कीजिए।

सिर से शुद्ध ज्योति-चक्र को निकलते हुए देखने का प्रयास करें। अनुभव कीजिए कि आपका समस्त शरीर सम्पूर्ण मानव जाति में शान्ति की तरंगें बिखेर रहा है। अधिकतम अवधि तक इस स्थिति में रुकिये। फेफड़ों पर तनाव न पड़े।

अब उपरोक्त पाँचों क्रियाओं की विपरीत रूप से पुनरावृत्ति करते हुए तथा रेचक क्रिया करते हुए प्रारम्भिक अवस्था में लौट आइये। रेचक की अन्तिम स्थिति में चेतना मूलाधार चक्र पर होनी चाहिए। रेचक के समय अनुभव करते जाइये कि प्राण शक्ति क्रमशः नीचे के चक्रों की ओर आ रही है। यह विपरीत रूप पूरक की भाँति होगा। धीमी किन्तु गहरी श्वास लेते हुए शरीर का शिथिलीकरण कीजिये।

एकाग्रता

अभ्यासी की चेतना का प्रवाह मूलाधार से सहस्रार एवं सहस्रार से मूलाधार की ओर अविरल एवं समकालीन होना चाहिए। इसका संबंध श्वसन एवं हाथ की क्रियाओं से हो।

पूर्णता-प्राप्ति पर श्वास श्वेत प्रकाश की धारा की तरह ऊपर चढ़ती एवं नीचे उतरती हुई सुषुम्ना नाड़ी में दिखाई देगी।

क्रम

ध्यानाभ्यास के पूर्व।

सावधानी

नियमित अभ्यास से पूरक, कुम्भक व रेचक की अवधि में वृद्धि करें।

फेफड़ों पर अधिक तनाव न पड़े।

लाभ

यह एक श्रेष्ठ मुद्रा है जिसमें प्राणायाम (सूक्ष्म शक्ति पर नियंत्रण) का योग, मुद्रा के सांकेतिक भावों से है।

प्रत्येक व्यक्ति में निहित सुषुम्ना प्राण शक्ति को जागृत करने के लिए प्रथम श्रेणी का अभ्यास है। यह प्राण शक्ति का वितरण सम्पूर्ण शरीर में करता है। इस प्रकार हमारे शारीरिक बल, व्यक्तिगत आकर्षण शक्ति तथा स्वास्थ्य में वृद्धि होती है।

विपरीतकरणी मुद्रा

विपरीतकरणी मुद्रा

विधि

विपरीतकरणी मुद्रा नामक आसन करें। (आसनों का अध्याय देखें) नेत्रों को बन्द कर खेचरी मुद्रा लगाइये। उज्जायी प्राणायाम कीजिये। पूरक करते समय श्वसन एवं चेतना को मणिपुर चक्र से विशुद्धि चक्र की ओर जाते हुए अनुभव कीजिये।

रेचक करते समय चेतना को विशुद्धि चक्र पर केन्द्रित कीजिये।

द्वितीय पूरक के साथ पुनः यह अनुभव कीजिये कि चेतना एवं श्वसन-प्रवाह मणिपुर चक्र से विशुद्धि चक्र की ओर है।

क्षमता के अनुपात में क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

समय

प्रथम दिन कुछ सेकेण्ड तक अभ्यास करें। धीरे-धीरे अवधि बढ़ाइये। १५ मिनट या अधिक देर तक अभ्यास किया जा सकता है।

क्रम

आसन और मुद्रा या किसी एक के अभ्यास के अन्त में।

सम्भव हो तो ध्यान के पूर्व।

भोजन के कम से कम तीन घंटे उपरान्त ही यह मुद्रा कीजिये।

सीमाएँ

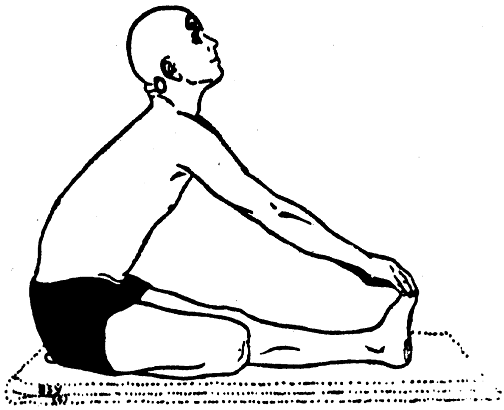
उच्च रक्तचाप, हृदय की गम्भीर बीमारी या चुल्लिका ग्रन्थि के बढ़ जाने पर अभ्यास का निषेध है।

लाभ

इससे शरीर में प्राण के प्रवाह में सूक्ष्म परिवर्तन आता है।

विशेषतः यह अभ्यास सूक्ष्म शरीर में स्थित प्राण के केन्द्र अर्थात् मणिपुर चक्र से प्राणशक्ति का प्रवाह प्रचुर मात्रा में पवित्रता के केन्द्र याने विशुद्धि चक्र की ओर करता है। इस प्रकार समस्त सूक्ष्म शरीर के शुद्धिकरण में सहायता मिलती है। अतः यह अभ्यास भौतिक स्तर पर बीमारी आदि के प्रकटीकरण को रोकता है। यह ओज-शक्ति को ऊपर के केन्द्रों में ले जाने की एक महत्त्वपूर्ण मुद्रा है।

महामुद्रा



महामुद्रा

महामुद्रा

विधि

भूमि पर इस विधि से बैठिये कि दाहिने पैर की एड़ी गुदाद्वार के नीचे रहे तथा बायाँ पैर शरीर के सामने फैला रहे।

इतना सामने झुकिये कि आप दोनों हाथों से बायें पैर के अंगूठे को पकड़ सकें।

पूरे शरीर को शिथिल कीजिये।

दीर्घ पूरक कीजिये।

मूलबन्ध एवं शाम्भवी मुद्रा का अभ्यास कीजिये।

अंतरंग कुम्भक लगाते हुए चेतना को क्रमशः मूलाधार, विशुद्धि एवं आज्ञा चक्र में घुमाइये। प्रत्येक चक्र पर चेतना को मात्र एक या दो सेकेण्ड तक रखिये।

श्वास रोकने की क्षमतानुसार चेतना को मूलाधार, विशुद्धि, आज्ञा, मूलाधार, विशुद्धि, आज्ञा, आदि पर घुमाते रहिए।
चित्र में दर्शाये लघु वृत्त चेतना बिन्दु को स्पष्ट करते हैं।

अब धीरे से रेचक कीजिये।

सामने झुकी हुई अवस्था में श्वास रोकिये।

दीर्घ पूरक कीजिये। क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

बायें पैर की एड़ी को गुदाद्वार के नीचे रखते हुए तथा दाहिने पैर को सामने फैलाकर अभ्यास कीजिये।

प्रकारान्तर

यदि किसी को इस अवस्था में अभ्यास करने में कठिनाई हो तो उसे सिद्धासन या सिद्धयोनि आसन में महामुद्रा करनी चाहिए।

ख्याल रखें कि एड़ी से गुदा-प्रदेश पर इसी भाँति दबाव पड़े।

आवृत्ति

प्रारम्भिक अभ्यासी प्रत्येक पैर से ३ बार अभ्यास कर सकता है।

धीरे-धीरे इच्छानुसार क्रिया की संख्या में वृद्धि की जा सकती है।

क्रम

किसी भी समय अभ्यास किया जा सकता है।

विशेषकर ध्यान के पूर्व अभ्यास करने का निर्देश दिया जाता है।

सावधानी

जितनी अधिक देर कुम्भक किया जाये, उतना ही लाभप्रद है परन्तु फेफड़ों पर किसी प्रकार का तनाव न पड़े।

लाभ

सम्पूर्ण शरीर एवं मन को स्थिर करता है इसलिए ध्यान की उत्तम तैयारी करता है।

पूरे शरीर की प्राण-शक्ति को उत्प्रेरित करता है।

उदर की अव्यवस्था दूर करता है।

महाबेध मुद्रा



महाबेध मुद्रा

महाबेध मुद्रा

विधि

दायें पैर की एड़ी को गुदाद्वार के नीचे रखिये तथा बायें पैर को सामने फैलाते हुए बैठ जाइये।

सामने झुककर दोनों हाथों से फैले हुए पैर के अंगूठे को पकड़िये।

पूरी तरह पूरक कीजिये। तत्पश्चात् दीर्घ रेचक कीजिये।

नासिकाग्र दृष्टि कीजिये।

जालन्धर बन्ध, मूलबन्ध तथा उड्डियान बन्ध लगाइये।

क्रमशः मूलाधार, मणिपुर एवं विशुद्धि चक्र पर ध्यान कीजिए। प्रत्येक चक्र पर एक या दो सेकेण्ड अपनी चेतना को रखने के उपरान्त दूसरे चक्र पर चेतना को ले आइये– मूलाधार, मणिपुर, विशुद्धि, मूलाधार, मणिपुर, विशुद्धि... इस प्रकार।

आरामदायक स्थिति तक श्वास बाहर रोककर अभ्यास कीजिये।

अब क्रमशः उड्डियान बन्ध, मूलबन्ध और अन्त में जालन्धर बन्ध को शिथिल कीजिये।

साथ ही नेत्रों को भी शिथिल कीजिये।

धीरे-धीरे दीर्घ पूरक कीजिये।

लाभ

आत्मा से संबंध स्थापित करने का यह बहुत ही शक्तिशाली प्रयोग है।

'बेध' का अर्थ है– बेधना या छेदना।

इसमें चेतना द्वारा चक्रों एवं आत्मिक चेतना-पथ को बेधा जाता है।

शेष विवरण महामुद्रा की भाँति ही है।

वज्रोली मुद्रा

वज्रोली मुद्रा

विधि

सरल अभ्यास

किसी भी ध्यान के आसन में बैठिये। हाथ घुटनों पर रहें।

नेत्रों को बन्द कर शरीर को शिथिल कीजिये। निम्न उदर प्रदेश पर तनाव लाते हुए तथा मूत्र-प्रणाली का संकोचन करते हुए प्रजनन-अंगों को ऊपर की ओर खींचिये। यह आकुंचन क्रिया ठीक वैसी ही है जैसी कि मूत्र-त्याग क्रिया को कुछ समय तक रोकने के लिए की जाती है।

प्रजनन-अंगों का खिंचाव कुछ ऊपर की ओर होना चाहिए।

उच्च अभ्यास

योग्य गुरु के निर्देशन में ही उच्च अभ्यास करना चाहिए अन्यथा स्थायी चोट पहुँचने की संभावना रहती है।

मूत्र-नलिका में लगभग १२ इंच लम्बी चाँदी की नली का प्रवेश कराया जाता है।

इस नलिका से पानी ऊपर खींचा जाता है। इस क्रिया में पूर्णता प्राप्ति के उपरांत इसी नली से मधु और पारा ऊपर खींचा जाता है।

लम्बी अवधि के अभ्यास के उपरान्त नलिका की मदद के बिना ही उपरोक्त क्रिया सम्पन्न की जा सकती है।

प्रारम्भ में १ इंच तक ही चाँदी या रबर की नली को भीतर डालिये।

तत्पश्चात् धीरे-धीरे यह दूरी १२ इंच कीजिये।

एकाग्रता

स्वाधिष्ठान चक्र पर।

लाभ

वज्र नामक नाड़ी से इसका संबंध है जो प्रजनन अंगों में प्राण-शक्ति का प्रवाह करती है।

ब्रह्मचर्य-पालन के लिए उपयोगी विधि है। इस क्रिया के परिणामस्वरूप प्राण-शक्ति पर नियंत्रण प्राप्त होता है जो कि प्रायः वीर्यपात के कारण नष्ट हो जाया करती है। इस शक्ति का रूप-परिवर्तन उच्च यौगिक अभ्यास के लिए कर सकते हैं।

योनि मुद्रा

योनि मुद्रा

विधि

किसी आरामदायक ध्यान के आसन में बैठिये। पद्मासन या सिद्धासन को प्राथमिकता दीजिये। धीरे-धीरे दीर्घ पूरक कीजिये।

श्वास रोकिये। हाथों को उठाकर मुँह तक लाइये।

कर्ण-छिद्रों को अंगूठों, आँखों को दोनों तर्जनियों तथा नासिका-छिद्रों को मध्यमा अंगुलियों से बंद कीजिये।

दोनों हाथों की अनामिका एवं छोटी अंगुलियों को होठों के ऊपर एवं नीचे रखते हुए मुँह को बंद कीजिये।

श्वास को भीतर रोकते हुए बिन्दु पर ध्यान कीजिये।

नाद को ग्रहण करने का प्रयास करें। आरामदायक स्थिति तक श्वास रोकने के उपरांत नासिका पर से अंगुलियों को हटा लीजिये।

रेचक कीजिये। अन्य अंगुलियाँ अपने स्थानों पर ही रहेंगी।

पूरक कीजिये। इसके अंत में पुनः दोनों नथुनों को बन्द कर लीजिये।

वर्णित क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

टिप्पणी

वद्धयोनि आसन देखिये।

समय

समय की सुविधानुसार।

एकाग्रता

बिन्दु चक्र पर।

लाभ

यह प्रत्याहार की शक्तिशाली क्रिया है।

वास्तविकतः यह प्रक्रिया नाद योग की है जिसमें अभ्यासी बिन्दु से उत्पन्न होने वाली विभिन्न सूक्ष्म ध्वनियों का अनुभव प्राप्त करता है।

नवमुखी मुद्रा

नवमुखी मुद्रा

विधि

ध्यान के किसी भी आरामप्रद आसन में बैठ जाइये।

धीमी एवं लम्बी श्वास लेते हुए शरीर शिथिल कीजिये।

श्वास के अनुभव के साथ चेतना को मूलाधार से स्वाधिष्ठान, मणिपुर अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा, बिन्दु और सहस्रार तक पहुँचाइये।

अन्तर्कुम्भक लगाइये।

योनि मुद्रा में वर्णित विधि से कर्ण, नेत्र तथा मुँह को बंद कर लीजिये। मूलबन्ध एवं वज्रोली मुद्रा का अभ्यास कीजिये।

कुम्भक की स्थिति में ही सहस्रार पर ध्यान कीजिये।

संभावित अवधि तक कुंभक कीजिये।

तत्पश्चात् नासिका को खोलकर धीरे-धीरे रेचक कीजिये।

रेचक क्रिया के समय मूलबंध एवं वज्रोली मुद्रा को शिथिल कीजिये, परन्तु हाथों को यथास्थान रखिए।

सहस्रार पर ही चेतना को बनाये रखिये।

रेचक के बाद कुछ विश्राम कीजिये। क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

समय

बिना तनाव के जितनी देर संभव हो।

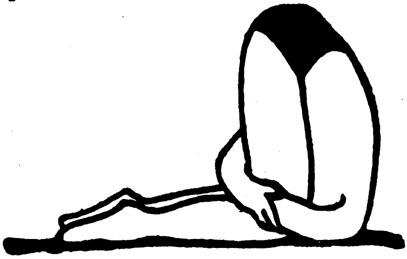
टिप्पणी

हमारे शरीर में नौ द्वार हैं जिनके द्वारा हम बाह्य जगत् के इन्द्रिय-ज्ञान का अनुभव ग्रहण करते हैं। ये हैं– दो कान, दो आँख, दो नासिका छिद्र, मुँह, गुदाद्वार एवं मूत्रेन्द्रिय। शरीर रूपी गुफा के ये नौ दरवाजे हैं। इन दरवाजों को बन्द कर इन्द्रियों को अन्तर्मुखी बनाकर व्यक्ति आध्यात्मिक जागरणरूपी दसवें द्वार को भेदने में समर्थ हो जाता है। इस प्रकार लौकिक चेतना को श्रेष्ठता प्रदान की जा सकती है। इस दसवें अपूर्व द्वार की स्थिति सिर के शीर्ष प्रदेश (सहस्रार) पर है। इसे 'ब्रह्म द्वार' या 'उच्च चेतना' भी कहते हैं।

लाभ

अधिक शक्तिशाली रूप में योनि मुद्रा के लाभों की प्राप्ति होती है।

पाशिनी मुद्रा



पाशिनी मुद्रा

पाशिनी मुद्रा

विधि

प्रारम्भिक अभ्यास

हलासन कीजिये। (आसनों का अध्याय देखिये)

पैरों को लगभग आधा मीटर दूर कीजिये। इन्हें घुटनों से मोड़िये।

जाँघों को छाती के इतने समीप लाइये कि घुटनों का स्पर्श कानों, कंधों एवं भूमि से हो।

हाथों को मजबूती से पैरों एवं सिर के चारों ओर लपेटिये।

धीरे-धीरे दीर्घ श्वसन कीजिये। मणिपुर चक्र पर चेतना को रखिये।

आरामदायक अवस्था तक इस स्थिति में रुकिये।

उच्च अभ्यास

द्वि पाद कन्धरासन कीजिये। (आसनों के अध्याय में देखिये)

शरीर में शिथिलीकरण क्रिया अधिकतम रूप से कीजिये।

मंद एवं दीर्घ श्वसन कीजिये। मणिपुर चक्र पर ध्यान कीजिये।

सावधानी

पीठ की मांसपेशियों को अधिक श्रम न करना पड़े।

लाभ

नाड़ी-संस्थान में संतुलन तथा स्थिरता लाता है।

प्रत्याहार की स्थिति उत्पन्न करता है।

मेरुदण्ड एवं उसके चारों ओर की नाड़ियों को क्रियाशील बनाता है।

पृष्ठ एवं उदरस्थ अंगों की अच्छी मालिश करता है।

प्रजनन-अंगों को शक्ति प्रदान करता है।

ताड़न क्रिया

ताड़न क्रिया

विधि

पद्मासन में बैठकर मूलाधार चक्र का ध्यान कीजिये।

हथेलियाँ भूमि पर समतल तथा शरीर के दोनों बाजू में स्थिर रहेंगी।

दीर्घ पूरक के बाद अंतर्कुम्भक तथा जालंधर बंध का अभ्यास कीजिये। हाथों को सीधा करते एवं शरीर को मोड़ते हुए ऊपर उठाईये एवं नीचे लाते हुए नितम्बों को जमीन पर पटकिए। मूलाधार चक्र पर एकाग्रता बनाये रखिये।

कुंभक की पूर्ण अवधि में क्रिया की पुनरावृत्ति ७ बार कीजिए।

तत्पश्चात् नितम्बों को भूमि पर टिकाकर रेचक कीजिये। रेचक क्रिया दीर्घ एवं मंद रूप से हो। यह एक आवृत्ति है।

सामान्य स्थिति में पुनः दीर्घ पूरक कीजिये तथा प्रक्रिया को दुहराइये।

टिप्पणी

अभ्यास में अनावश्यक श्रम न कीजिये। शरीर को ऊपर उठाने एवं नीचे लाने पर नितम्बों, पैरों के पृष्ठ-प्रदेशों का स्पर्श भूमि से हो एवं यह क्रिया साथ-साथ होनी चाहिए।

आवृत्ति

प्रारम्भिक अवस्था में ३ आवृत्तियाँ कीजिए।

अभ्यास के बाद १० या अधिक आवृत्तियाँ कीजिये।

एकाग्रता

पूर्ण अवस्था में मूलाधार चक्र पर।

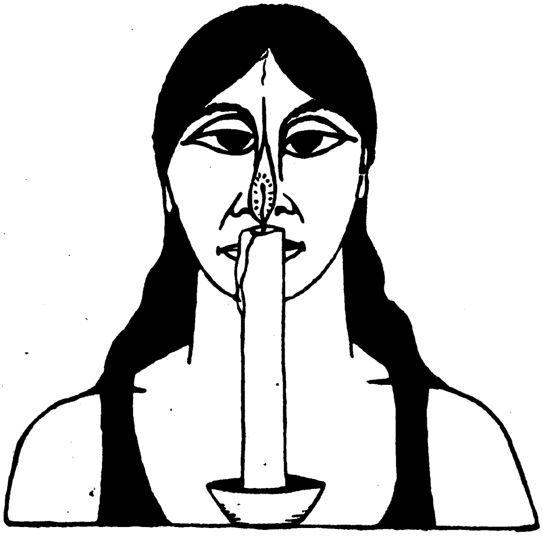
सावधानी

नितम्बों को अधिक वेग से भूमि पर न पटकिये, अन्यथा चोट पहुँच सकती है।

लाभ

प्रत्येक व्यक्ति में निहित सुषुप्त कुण्डलिनी शक्ति (आध्यात्मिक शक्ति) को जागृत करने के लिए यह एक शक्तिशाली अभ्यास है। यह शक्ति मूलाधार चक्र में रहती है। स्थूल रूप से इस शक्ति-जागरण का प्रकटन-शारीरिक शक्ति तथा सहन शक्ति की वृद्धि के रूप में होता है।

त्राटक



त्राटक

त्राटक

परम्परा से इस अभ्यास को हठयोग का एक अंग माना जाता है। यह अभ्यास 'मुद्रा' के अभ्यास से समानता रखता है इसलिए इसे 'राजयोग' का भी अंग माना गया है। इसका नियमित अभ्यास व्यक्ति में असीम एकाग्रता की वृद्धि करता है। एकाग्रता की इस शक्ति के परिणामस्वरूप साधकों में गुप्त-अप्रयुक्त शक्ति का जागरण होता है।

विधि

इस क्रिया की अनेक विधियाँ हैं किन्तु सर्वमान्य एवं सरलतम विधियाँ निम्नानुसार हैं–

प्रथम अभ्यास

अंधेरे कमरे में किसी आरामदायक आसन में बैठिये। ध्यान के आसनों को प्राथमिकता दीजिये।

एक प्रज्ज्वलित मोमबत्ती को लगभग डेढ़ या दो फुट की दूरी पर नेत्रों के सामने धरातल पर रखिये। सर्वप्रथम नेत्रों को बन्द कीजिये। मेरुदण्ड को सीधा एवं शरीर को शिथिल रखिये।

स्थूल शरीर पर पूर्णतः अपनी चेतना को रखिये। शरीर को मूर्तिवत स्थिर

रखिये। एक बार आसन की स्थिति में बैठने पर पूर्ण अभ्यास-काल तक किसी भी शर्त पर, किसी भी दशा में शरीर में किसी प्रकार की गति न कीजिए। अभ्यास के लिए पूर्णतः तैयार हो जाने पर नेत्रों को खोलिए। गहन एकाग्रता से लौ के सर्वाधिक प्रकाशित बिंदु को देखिये जो बत्ती के अंतिम छोर के ठीक ऊपर होता है। कुछ अभ्यास के पश्चात् नेत्रों में बिना गति उत्पन्न किये या पलक झपकाये आप कुछ देर लौ की ओर देखने में समर्थ होंगे।

पूर्ण एकाग्रता से उसे देखते रहिये। पूर्ण चेतना नेत्रों पर इस सीमा तक एकाग्र कीजिये कि आपका शेष शारीरिक ध्यान विस्मृत हो जाये।

एकाग्र दृष्टि पूर्णतः एक विशेष बिन्दु पर ही हो। नेत्रों के थक जाने पर (अनुमानतः कुछ क्षणों के बाद) या नेत्रों में आँसू आने प्रारम्भ होने पर उन्हें बन्द कर शिथिल कीजिये। शरीर को स्थिर ही रखिये। बन्द नेत्रों के सम्मुख लौ के प्रतिबिम्ब के प्रति सजग रहिए। अचानक सूर्य या तेज प्रकाश की ओर देखकर नेत्रों को बन्द करने के उपरान्त नेत्रों के गोलकों पर पड़े उस वस्तु के प्रभाव के परिणामस्वरूप वस्तु-विशेष का साफ प्रतिबिम्ब कुछ देर तक दिखाई देता है। प्रायः सभी व्यक्तियों को इसका अनुभव होगा। इसी प्रकार लौ का प्रतिबिम्ब स्पष्टतः दृष्टिगोचर होता है। इसे भ्रूमध्य के ठीक सामने या कुछ पीछे स्थित करते हुए उस पर त्राटक कीजिये। जैसे ही यह प्रतिबिम्ब फीका या धुँधला पड़ जाये, नेत्रों को खोलकर बाहरी लौ पर त्राटक करना प्रारम्भ कीजिये।

लाभ

शारीरिक रूप से न्यून दृष्टि-दोष दूर करता है।

मानसिक लाभ के रूप में इस अभ्यास से नाड़ियों की स्थिरता में वृद्धि होती है, अनिद्रा का निवारण होता है, अत्यधिक अशान्त मन भी तनाव-रहित हो जाता है।

शारीरिक क्रिया होते हुए भी त्राटक का अभ्यास आध्यात्मिक शक्ति का विकास करता है। ध्यान की भाँति इसका अभ्यास साधना के रूप में करना चाहिए क्योंकि यह एकाग्रता को बढ़ाता है जो कि ध्यान की क्रिया का प्राणाधार है।

नेत्र मस्तिष्क के द्वार हैं तथा उससे निकट रूप से सम्बन्धित हैं। जब

आँखों को अपलक तथा स्थिर रखा जाता है तो मन की भी यही दशा हो जाती है। एकाग्रता-वृद्धि के साथ विचार-प्रक्रिया स्वतः शिथिल हो जाती है। अत्यधिक अशान्त मन एवं विचार-तरंगों के नियंत्रण के लिए त्राटक बहुत ही शक्तिशाली विधि है।

द्वितीय अभ्यास

त्राटक का अभ्यास एक लघु बिन्दु, पूर्ण चन्द्र, छाया, स्फटिक के गोल टुकड़े, नासिकाग्र, जल, अन्धकार, शून्यता (भूचरी मुद्रा देखिये), शिवलिंग, सामान्य चमकीली वस्तु या अनेक वस्तुओं पर कर सकते हैं। व्यक्तिगत इष्टदेव या गुरु के चित्र में उनके मुखारविन्द पर त्राटक उनकी आध्यात्मिक उपस्थिति की अनुभूति के साथ करना चाहिए। त्राटक का अभ्यास उगते हुए बाल-रवि, दर्पण में स्वयं के प्रतिबिम्ब या अन्य व्यक्ति के नेत्रों पर भी किया जा सकता है।

इन अभ्यासों में कुछ बाधायें होती हैं, अतः इसे गुरु के निर्देशन में करें।

त्राटक को प्रमुखतः दो भागों में विभाजित किया गया है –

(१) बहिरंग या बाह्य (२) अंतरंग या अन्तः।

ऊपर दिये हुए अभ्यास बहिरंग त्राटक के ही अंग हैं।

चक्र या व्यक्तिगत इष्टदेव को आंतरिक दृष्टि से देखने की क्रिया ही अंतरंग त्राटक है। इस त्राटक में साधारणतः नेत्र बन्द रहते हैं। यदि नेत्र खुले हों तो आन्तरिक एकाग्रता इतनी होनी चाहिए कि बाहरी वस्तुओं को नेत्र ग्रहण न करें।

समय

सामान्य उद्देश्य-पूर्ति हेतु १५ से २० मिनट का अभ्यास पर्याप्त है। आध्यात्मिक उद्देश्य पूर्ति या नेत्र-विकार के निवारण हेतु अभ्यास की अवधि अधिक से अधिक बढ़ाई जा सकती है।

क्रम

प्रातः ४ से ६ बजे तक का समय सर्वोत्तम है। अभ्यास आसन-प्राणायाम के उपरांत करना चाहिए।

दिन में किसी भी समय का अभ्यास लाभप्रद है।

गहन एकाग्रता के लिए पेट खाली होना चाहिए।

हठयोग

परिचय

वस्तुतः प्राचीन हठयोग विज्ञान क्या है? वर्तमान में हठयोग ने अपना अर्थ खो दिया है। उसे शारीरिक योग ही मान कर उसका संबंध आसन-प्राणायाम से जोड़ा जाता है। यह भ्रम है। प्राचीन हठयोग में कुछ विशेष प्रक्रियाओं का समन्वय होता था। इनका वर्णन इस पुस्तक में किया जायेगा। अभ्यास के प्रमुख ६ वर्ग हठयोग के अंतर्गत आते हैं। अतः हठयोग का अर्थ विशेष रूप से आसन-प्राणायाम से ही नहीं लगाना चाहिए।

'हठ' शब्द की उत्पत्ति दो बीज मंत्रों के योग से हुई है। ये हैं– *हं* एवं *ठं*। इनका विवेचन नाड़ियों से संबंधित 'यौगिक आत्मिक जीवतत्व' नामक खण्ड में किया जायेगा। सृष्टि में दो विपरीत धारायें या शक्तियाँ कार्य करती हैं। ये धनात्मक एवं ऋणात्मक धारायें हैं। इनकी उत्पत्ति मानव की इड़ा नाड़ी में मानसिक शक्ति के रूप में होती है। प्राण शक्ति का स्रोत पिंगला नाड़ी है जो शारीरिक क्रियाओं से संबंधित है। बीज मंत्र *हं* पिंगला नाड़ी में प्रवाहित सूर्य-प्रवाह का परिचायक है। बीज मंत्र *ठं* इड़ा नाड़ी में बहने वाले चन्द्र-प्रवाह की ओर संकेत करता है। प्राण के इन दो प्रवाहों के मध्य संतुलन लाना ही हठयोग का उद्देश्य है। इस संतुलन के परिणामस्वरूप प्राण का प्रवाह आत्म-शरीर में स्थित महत्वपूर्ण सुषुम्ना नाड़ी में प्रारम्भ हो जाता है। इस प्रकार मानव-चेतना का विकास होता है। उसके चरण आध्यात्मिक आलोक या ज्ञान की ओर बढ़ते हैं। योग की समस्त शाखाओं का उद्देश्य यही है परन्तु हठयोग की विधियाँ अपूर्व हैं।

'घेरण्ड संहिता' नामक योग की प्राचीन पुस्तक के अनुसार सात ऐसे सोपान हैं जिनका अच्छी तरह अभ्यास आत्मज्ञान प्राप्ति के पूर्व आवश्यक है। ये निम्नानुसार हैं–

१. शोधन – हठयोग द्वारा शारीरिक शुद्धि।

२. दृढ़ता – आसन द्वारा शरीर एवं मन की दृढ़ता।

३. स्थिरता – मुद्रा-बंध के अभ्यास से शारीरिक एवं मानसिक शांति।

४. धैर्य – प्रत्याहार की क्रिया द्वारा बाह्य जगत से संबंध-विच्छेद।

५. लाघव – प्राणायाम द्वारा शरीर को हल्का बनाना।

६. धारणा – एकाग्रता एवं ध्यान द्वारा ध्येय वस्तु का साक्षात्कार।

७. समाधि – इन्द्रियगत अनुभवों से अनासक्ति या विकर्षण।

इस प्रकार स्थूल शरीर का शुद्धिकरण इस दिव्य मार्ग की प्राथमिक आवश्यकता है। शरीरगत् विषाक्त तत्व या अशुद्धियों को दूर किये बिना उच्च योगाभ्यास बहुत कठिन है। इस मूल उद्देश्य की पूर्ति हेतु प्राचीन योगियों द्वारा ६ वैज्ञानिक व यौगिक प्रक्रियाओं का विकास किया गया है। इन्हें 'षटकर्म' कहते हैं। इन्हीं ६ क्रियाओं से हठयोग नामक योग की शाखा-विशेष का निर्माण होता है।

षट्कर्म निम्न हैं –

१. नेति – नासिका-प्रदेश के शुद्धिकरण की विधि है।

२. धौति – मुँह से गुदाद्वार तक की संपूर्ण अन्न-नलिका के शुद्धिकरण की प्रक्रियाओं की शृंखला है। इसमें नेत्र, कर्ण, दाँत, जिह्वा, खोपड़ी की सरल सफाई की विधियाँ भी सम्मिलित हैं।

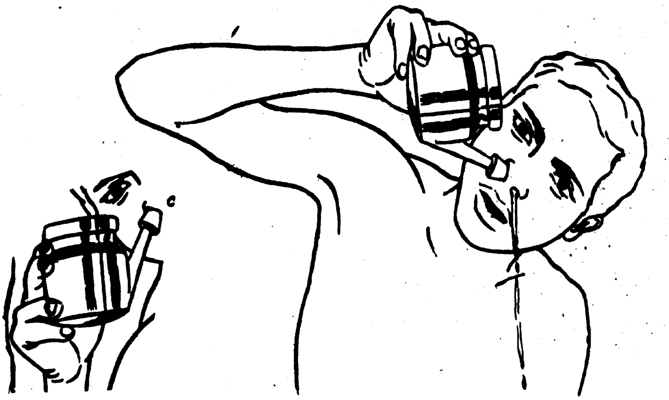
३. नौलि – उदरस्थ अंगों की मालिश तथा उन्हें बल प्रदान करने की शक्तिशाली विधि है।

४. बस्ति – बस्ति बड़ी आँत की सफाई करने एवं उसमें सुचारुता लाने के लिए है।

५. कपालभाति – मस्तिष्क के अग्र प्रदेश की शुद्धता के लिए तीन क्रियाओं की सरल शृंखला है।

६. त्राटक – किसी वस्तु पर गहन एकाग्रता की क्रिया है। इससे एकाग्रता में वृद्धि होती है तथा प्रत्येक व्यक्ति में निहित सुषुप्त उन आत्मिक शक्तियों का विकास होता है जिनके प्रति हम अचेत रहते हैं। नेत्रों को शक्ति प्रदान करता है। इस क्रिया का विस्तृत विवरण दिया जा चुका है।

नेति



नेति लोटा

जल नेति

जल नेति

आवश्यक सामग्री

एक विशेष प्रकार का लोटा लें। (चित्रानुसार)

लोटे में कुनकुना पानी भरिये। यह रक्त के तापक्रम के उपयुक्त एवं नासिका-छिद्र से प्रवाहित होने के लायक हो।

प्रति आधा लीटर पानी में एक चाय का चम्मच भर नमक मिलाइये। पानी में नमक पूर्णतः घुल जाना चाहिए।

विधि

लोटे की टोंटी को धीरे से बायें नथुने के भीतर डालिये। सिर को धीरे-धीरे कुछ दाहिनी ओर झुकाइये। साथ ही लोटे को इस विधि से ऊपर उठाइये कि जल का प्रवाह बायें नथुने में ही हो।

मुँह को पूरी तरह खुला रखिये ताकि नासिका के बदले श्वास-क्रिया मुँह से की जा सके।

जल का प्रवाह बायें नासिका-छिद्र से भीतर जाकर दाहिने नथुने से बाहर आ जायेगा। यह क्रिया स्वाभाविक रूप से होगी। शर्त यह है कि लोटे की स्थिति एवं सिर का झुकाव सही हो तथा श्वसन-क्रिया मुँह द्वारा हो।

लगभग बीस सेकेण्ड तक जल का स्वतंत्र प्रवाह होने दीजिये।

अब लोटा हटा लीजिये। भस्त्रिका प्राणायाम की भाँति तीव्र श्वसन द्वारा नासिका को स्वच्छ कीजिये। श्वास छोड़ने की गति अत्यधिक तीव्र न हो, अन्यथा क्षति पहुँचेगी।

अब दाहिने नथुने में लोटे की टोंटी को लगाइये। बायीं ओर सिर को झुकाइये। जल का प्रवाह दाहिने नथुने में भेजिये जो बायें से बाहर आ जाये। इस प्रकार ऊपर वर्णित क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

पुनः क्रमशः बायें एवं दाहिने नथुनों से नेति-क्रिया कीजिये। अंतिम बार फिर बायें तथा दाहिने नथुने से क्रिया को दुहराइये।

नासिका को शुष्क करना

अब निम्न विधि के अनुसार नासिका को पूर्णतः स्वच्छ एवं शुष्क कीजिये।

दोनों पैरों को परस्पर समीप रखते हुए खड़े हो जाइये।

दोनों हाथों को पीछे बाँध कर रखिये।

कमर से सामने की ओर झुकिये। सिर ऊपर उठा रहे। तीस सेकेण्ड तक इस स्थिति में रुकिये।

इस क्रिया से नासिका का पानी बाहर आ जायेगा। झुकी स्थिति में ही नासिका से पाँच बार धौंकनी की तरह श्वसन-क्रिया कीजिये।

पुनः सीधे खड़े हो जाइये।

एक नथुने को दबाकर बंद कर लीजिये।

खुले नथुने से तीव्र गति से तीस बार श्वसन-क्रिया कीजिये। रेचक पर बल डालिये ताकि नासिका-छिद्र से नमी बाहर आ जाये।

दूसरे नथुने से भी उपरोक्त क्रिया कीजिये।

पुनः दोनों नासिका छिद्रों से इसी क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

इस सरल क्रिया के उपरांत नासिका में कोई जल-कण नहीं रह जायेगा। यदि कुछ जल शेष रह जाये तो पूर्ण जल के निकास तक इस क्रिया को कीजिये।

सामान्य निर्देश

जिन व्यक्तियों की नासिका में रचनात्मक अवरोध हैं, वे इस क्रिया का अभ्यास करने में समर्थ नहीं होंगे। ऐसी स्थिति में उन्हें सूत्र-नेति का अभ्यास करना चाहिये। इस क्रिया का वर्णन आगे किया जायेगा। इसमें

कठिनाई का कारण यह है कि श्लेष्मा झिल्ली को पानी के साथ सम्पर्क करने का अभ्यास नहीं होता है। जल नेति के कुछ दिनों के अभ्यास के उपरान्त यह संवेदना शेष नहीं रह जायेगी।

प्रारम्भ के कुछ दिनों तक अभ्यास के उपरांत आँखों में भी लालिमा आ सकती है। बाद में यह तकलीफ भी समाप्त हो जायेगी।

क्रम

प्रतिदिन प्रातः या जुकाम की अवस्था में।

सावधानी

जल का प्रवाह सिर्फ नासिका में से होना चाहिए। यदि गले या मुँह में जल का प्रवेश हो जाये तो समझिये कि सिर की स्थिति सही नहीं है। अतः सिर की स्थिति में इस भाँति सुधार कीजिये कि पानी का बहाव नासिका में ही हो। यदि समस्या का निवारण न कर सकें तो किसी योग शिक्षक से सलाह लीजिये।

जल नेति के उपरान्त नासिका को पूर्णतः शुष्क कर लीजियें, अन्यथा उसमें उत्तेजना उत्पन्न हो जायेगी तथा जुकाम के कष्टप्रद लक्षण दिखाई देने लगेंगे।

जल नेति का उद्देश्य नासिका-प्रदेश को स्वास्थ्य प्रदान करना है; अतः अधिक बलपूर्वक रेचक क्रिया द्वारा उसे चोट न पहुँचाइये।

सीमाएँ

नासिका से रक्त-स्राव की दीर्घकालीन बीमारी की अवस्था में योग्य निर्देशक की सलाह के बिना नेति का अभ्यास न कीजिये।

लाभ

यह अभ्यास नासिका की अशुद्धियों व जीवाणु-पूरित श्लेष्मा का निष्कासन करता है। जुकाम एवं वायु-रन्ध्र दोष (sinusitis) के उपचार में मदद करता है। कान, आँख तथा गले की अनेक बीमारियों जैसे– अनेक प्रकार के बहरेपन, ह्रस्व दृष्टि दोष, गले की कौड़ी का बढ़ना, श्लेष्मा झिल्ली तथा एडिनॉयड की वृद्धि आदि दोषों के निवारण में मदद करता है।

मिर्गी या अपस्मार, उन्माद, विक्षेप, अत्यधिक सिर दर्द, अनियंत्रित क्रोध आदि विकारों पर अच्छा प्रभाव डालता है। सुस्ती दूर कर ताजगी लाता है जिससे शरीर तथा मस्तिष्क में हल्कापन आता है।

श्वास-रन्ध्र के ऊपर स्थित गंध-पिण्डों को उत्तेजित करते हुए आज्ञा चक्र के जागरण में सहायक है।

प्रकारान्तर

उच्च अभ्यासी गिलास से ही नासिका द्वारा पानी पीकर जल नेति कर सकते हैं। गर्म या ठंडे पानी का भी उपयोग कर सकते हैं।

विशेष अवस्थाओं में नेति के लिए दूध (दुग्ध नेति), शुद्ध घी (घृत नेति), जल मिश्रित तेल (तेल नेति) या शिवाम्बु का प्रयोग किया जा सकता है। योग शिक्षक के निर्देश में ही विशेष प्रकार की नेति करें।

सूत्र नेति

सूत्र का अर्थ है सूत या धागा। क्रमागत विधि के अनुसार एक सूती धागे को मोम से कड़ा कर एक नथुने से भीतर डाला जाता है। धागे का सिरा गले में होते हुए मुँह में आता है। मुँह से उसे खींचा जाता है। वर्तमान समय में मोम लगे धागे के स्थान पर रबर की पतली नलिका का प्रयोग किया जाता है। यह दवा की किसी भी दुकान से प्राप्त की जा सकती है।

विधि

रबर की नली को नासिका छिद्र से डालकर मुँह से खींचिये।

रबर की नली को खींचकर आगे-पीछे कीजिये जिससे वह नासिका-छिद्र में आगे-पीछे हो। इस क्रिया को ३० से ५० बार तक कीजिये।

नली को पूर्णतः निकालकर ऊपर की क्रिया दूसरे नथुने से करें।

क्रम

प्रतिदिन जल नेति के उपरान्त।

सावधानी

रबर की नलिका को नासिका में से धीरे-धीरे डालिये।

योग्य निर्देशक की अनुपस्थिति में अभ्यास न कीजिये।

लाभ

श्वास-रन्ध्र के असाधारण स्राव, विभिन्न मांसल अवरोध व सामान्य सूजन को दूरकर बन्द नासिका-छिद्रों को खोल देता है। वर्षों से बन्द नासिका से पीड़ित व्यक्तियों को भी इससे बहुत लाभ हुआ है। इससे जल नेति के ही समान अन्य लाभों की प्राप्ति होती है।

धौति

धौति शरीर के शुद्धिकरण की सामान्य क्रिया है।

शरीर के विभिन्न अंगों की सफाई के लिए निम्नांकित विधियाँ हैं–

दंत धौति

ग्रीवा के ऊपरी अंगों की सफाई के लिए यह धौति क्रिया है। दाँत धोने का महीन चूर्ण या नीम की दातौन का प्रयोग इसके अंतर्गत आता है जिससे दाँतों को स्वच्छ किया जाता है। अन्य क्रियाएँ ये हैं–

जिह्वा धौति	अंगुलियों से रगड़ कर जिह्वा की सफाई।
कर्ण धौति	कानों की सफाई।
कपालरंध्र धौति	सिर एवं खोपड़ी की सफाई।
चक्षु धौति	जल द्वारा नेत्रों की सफाई।

वातसार धौति

मुँह से वायु पीकर जठर को नवजीवन प्रदान करने की विधि है।

भुजंगिनी मुद्रा में भी यही क्रिया की जाती है। पेट में कुछ देर हवा को घुमाया जाता है, तत्पश्चात् जँभाई लेते हुए धीरे-धीरे वायु का निकास किया जाता है। इस अभ्यास से अनेक उदर-रोग दूर होते हैं।

वारिसार धौति या शंखप्रक्षालन

हठयोग के अंतर्गत यह महत्वपूर्ण क्रिया है। 'प्रक्षालन' का अर्थ है– पूर्णतः साफ करना। इस विधि द्वारा 'शंखाकृति' अर्थात् आँतों की सफाई की जाती है। इसी कारण इस क्रिया का यह नामकरण है।

यह मुँह से गुदाद्वार तक पूर्ण अन्ननलिका के शुद्धिकरण की एक विधिवत् एवं सरल क्रिया है। यह एक लंबी प्रक्रिया है। योग्य योग शिक्षक के निर्देशन के बिना यह क्रिया नहीं करनी चाहिए।

प्रस्तावना

शंख प्रक्षालन के दिन क्रिया के पूर्व चाय, कॉफी या भोज्य पदार्थ ग्रहण न कीजिये। (क्रिया के पश्चात् ग्रहण करने योग्य भोज्य-पदार्थों के विषय में आगे वर्णन मिलेगा)।

एक साफ बाल्टी या किसी भी साफ बर्तन में कुनकुना पानी भरिये।

पानी का स्वाद नमकीन होने तक नमक मिलाइये। नमक का परिमाण न अधिक हो और न बहुत कम।

व्यायाम करने के लिए आरामदायक हल्के वस्त्र धारण कीजिये। तनावरहित व सुखद वातावरण में अभ्यास कीजिये। किसी प्रकार की घबराहट या मानसिक तनाव न रहे, इस हेतु पाँच-दस व्यक्तियों के समूह में अभ्यास कीजिये ताकि सरलतापूर्वक एवं हल्के मन से क्रिया सम्पन्न की जा सके।

विधि

क्षमतानुसार शीघ्रता से दो गिलास नमकीन पानी पीजिये।
तत्पश्चात् निम्नलिखित पाँच आसनों का अभ्यास कीजिये। प्रत्येक आसन की आठ आवृत्तियाँ कीजिये।

ताड़ासन – पृष्ठ संख्या १०० देखिये।
तिर्यक् ताड़ासन – पृष्ठ संख्या १०२ देखिये।
कटि चक्रासन – पृष्ठ संख्या ९९ देखिये।
तिर्यक् भुजंगासन – पृष्ठ संख्या १४२ देखिये।
उदराकर्षणासन – पृष्ठ संख्या ४४ देखिये।

आसनों के खंड में वर्णित विधि के अनुसार ही इनका अभ्यास कीजिये। प्रश्न यह उठता है कि इन आसनों का अभ्यास क्यों किया जाता है? कारण यह है कि अन्न-नलिका में जठर एवं गुदाद्वार के मध्य अनेक द्वार हैं जो इस नियंत्रित प्रदेश को पाचन क्रिया के समय खोलते एवं बंद करते हैं। शंखप्रक्षालन-क्रिया के समय उपरोक्त आसनों के अभ्यास से इनके स्नायु शिथिल हो जाते हैं तथा नमकीन जल को भीतर प्रवेश का मार्ग मिल जाता है। इस जल का प्रवाह गुदाद्वार की ओर होता है जहाँ से उसका निष्कासन हो जाता है। पाँच आसनों के पश्चात् पुनः दो गिलास नमकीन पानी पीजिये।

पुनः पाँच आसनों की आठ-आठ आवृत्तियाँ कीजिये।

पुनः दो गिलास नमकीन पानी ग्रहण कीजिये।

पूर्वतः पाँच आसनों की आठ-आठ आवृत्तियाँ कीजिये।

अब शौच के लिए जाइये। दस्त सरलता से हो तो ठीक है, अन्यथा किसी

भी दशा में तनाव न डालिये। चिंता की बात नहीं है; अभी पर्याप्त समय शेष है।

एक मिनट या कुछ अधिक समय के बाद शौचालय से लौट कर एक गिलास नमकीन पानी पीजिये।

पुनः शौच के लिए जाइये। बल न लगाइये।

पुनः एक गिलास पानी पीकर आसनों की वर्णित क्रिया की उतनी ही आवृत्तियाँ कीजिये। शौच के लिए जाइये।

मल का निकास अवश्य ही होगा।

शंखप्रक्षालन करने वाले अन्य व्यक्तियों से अपनी तुलना न कीजिये। कुछ व्यक्तियों की मल-निष्कासन क्रिया जल्दी हो सकती है। कुछ व्यक्तियों को अपेक्षाकृत कुछ देर लगे या अधिक जल ग्रहण करना पड़े तो किसी प्रकार की चिंता न कीजिये।

सर्वप्रथम ठोस मल का निष्कासन होगा, तत्पश्चात् उसमें द्रव की कुछ मात्रा मिश्रित रहेगी। पानी पीकर आसन करते जाइये।

अंत में मल की समाप्ति पर केवल साफ जल ही बाहर निकलेगा।

इस अवस्था तक पहुँचने के लिए औसतन लगभग १६ से २५ गिलास पानी पर्याप्त होता है। किसी को कम या किसी को अधिक गिलास पानी की आवश्यकता पड़ सकती है। अपवादस्वरूप किसी व्यक्ति को ४० गिलास तक पानी की जरूरत भी पड़ सकती है।

अतिरिक्त अभ्यास

शंखप्रक्षालन में अन्ननलिका की जठर से गुदाद्वार तक की सफाई होती है। सम्पूर्ण पाचन प्रदेश की सफाई के लिए शंखप्रक्षालन क्रिया के बाद निम्न क्रियाएँ करनी चाहिए–

वमन धौति

शेष नमकीन जल के निकास एवं जठर से मुँह तक की सफाई के लिए यह विधि है। (विस्तृत विवरण आगे देखिये)

जल नेति

नासिका प्रदेश की सफाई की क्रिया है। इसका विवरण नेति खंड में किया जा चुका है।

शंखप्रक्षालन के उपरांत विश्राम

शंखप्रक्षालन के बाद ४५ मिनट मौन धारण किये हुए लेटकर या बैठकर आराम करना अनिवार्य है। निद्रा न आने पाये।

इस अवधि में पाचन-संस्थान को पूर्ण विश्राम की प्राप्ति होती है।

विशेष भोजन

शंखप्रक्षालन के ४५ मिनट बाद चावल, मूँग की दाल तथा घी से तैयार की गयी खिचड़ी ग्रहण कीजिये।

यह विशेष भोज्य-पदार्थ पाचन-प्रदेश को सरलता से क्रियाशील बनाता एवं स्निग्धता प्रदान करता है। यह स्मरण रखिये कि शंखप्रक्षालन क्रिया से केवल त्याज्य पदार्थों का ही निष्कासन नहीं हुआ है, वरन् अन्ननलिका की दीवारों की प्राकृतिक, आवश्यक एवं रक्षा करने वाली तहों को भी हटा दिया गया है। पाचन-प्रदेश **आवरणरहित** हो जाता है। अतः नवीन तहों के निर्माण तक घी **अस्थायी** रूप से रक्षक-कवच निर्मित करता है। अधिक काल तक आँत की तत्वरहित अवस्था स्वाभाविक नहीं है। फलतः जहाँ घी उसकी दीवारों को आवरण प्रदान करता है, वहाँ चावल सरलतापूर्वक हजम होने वाले तत्व प्रदान करता है।

दाल प्रोटीन की पर्याप्त मात्रा प्रदान करती है एवं शीघ्र हजम होने वाली है। चावल के कार्बोज तथा घी से प्राप्त चर्बी के साथ संयुक्त होकर यह पूर्ण आहार की पूर्ति करता है।

संयमित भोजन

कम से कम एक हफ्ते तक संयमित भोजन ग्रहण करना अनिवार्य है।

यदि संभव हो तो कुछ अधिक अवधि तक यही आहार लीजिये।

रासायनिक विधि से तैयार भोजन-सामग्री, मांसाहार एवं अम्लीय अन्न का सेवन कम से कम एक हफ्ते तक वर्जित है।

दूध, मट्ठा, अम्लीय फल, संतरा, अंगूर आदि का भी निषेध है।

चाय, कॉफी, शराब, सिगरेट, सुपारी आदि वस्तुयें और पान एक हफ्ते तक वर्जित हैं।

अधिक से अधिक सरल, सुपाच्य, शुद्ध प्राकृतिक आहार (अधिक अम्लीय न हो) ग्रहण करने की सलाह दी जाती है। यह सदैव स्मरण रखिये कि

सम्पूर्ण पाचन-प्रणाली स्वच्छ की गयी है, इसलिये तुरन्त ही देर से पचने वाले अन्न ग्रहण करने से बुखार, अपचन, अजीर्ण आदि के रूप में प्रतिक्रिया हो सकती है।

लाभ

अनेक बीमारियों की उत्पत्ति आँत में विषैले पदार्थों के एकत्रित हो जाने से होती है जो रक्त को अशुद्ध बना देते हैं। इसका प्रतिघात समस्त शरीर पर पड़ता है। समस्त पाचन-प्रदेश के शुद्धिकरण के परिणामस्वरूप रक्त भी शुद्ध हो जाता है और स्वास्थ्य में भी असाधारण सुधार दिखाई देता है।

पाचन-संस्थान से संबंधित अनेक रोगों का निवारण होता है। इन बीमारियों के अंतर्गत मधुमेह, उच्च अम्लीय अवस्था, दीर्घकालीन पेचिश, अजीर्ण तथा विषाक्त रक्त से उत्पन्न विकारों का समावेश है। स्वस्थ व्यक्तियों के लिए भी यह क्रिया लाभप्रद है क्योंकि शरीर के हल्केपन, मन की निर्मलता, प्रसन्नता तथा आनंद की प्राप्ति होती है। यह आध्यात्मिक साधकों के लिए भी हितकर है। क्रियायोग, कुंडलिनी योग, जप-अनुष्ठान जैसी उच्च साधना के पूर्व यह क्रिया अनिवार्य है।

क्रम

हर छः महीनों के उपरान्त या विशेष परिस्थितियों में कम अवधि में यह क्रिया करनी चाहिए।

सामान्य निर्देश

नियम अनेक हैं जिनके विभिन्न कारण हैं। इनका पालन करना अनिवार्य है। किसी एक नियम की अवहेलना से भी समस्या उत्पन्न होनी संभव है। नियम-भंग के परिणामस्वरूप अभ्यासी इससे प्राप्त होने वाले अनेक लाभों से वंचित हो जायेगा।

विधि का स्थूल वर्णन अवश्य किया गया है परन्तु योग शिक्षक के निर्देशन के बिना यह क्रिया न करें। यह बात सदैव स्मरण रखें।

लघु शंखप्रक्षालन

शंख प्रक्षालन में वर्णित विधि से नमकीन जल तैयार कीजिये।

प्रातःकाल बिना कुछ खाये-पिये दो गिलास यह पानी पीजिये।

तत्पश्चात् उन्हीं पाँच आसनों की आठ-आठ आवृत्तियाँ कीजिये।

पुनः दो गिलास पानी पीकर आसनों का अभ्यास कीजिये।

अब फिर दो गिलास पानी पीकर आसनों की पुनरावृत्ति कीजिये।

इस प्रकार कुल छः गिलास पानी पीकर शौच के लिए जाइये।

सामान्यतः पूर्ण मल-निष्कासन होगा व मूत्र की मात्रा में वृद्धि होगी।

समय एवं क्रम

प्रातःकाल अन्न-जल ग्रहण किये बिना खाली पेट में प्रतिदिन उपचार के रूप में बिना किसी हानि के किया जा सकता है, अन्यथा सप्ताह में एक-दो दिन इसका अभ्यास पर्याप्त होगा।

सावधानी

क्रिया की समाप्ति के कम से कम एक घंटे बाद ही कुछ खाना चाहिए। इस अभ्यास में किसी प्रकार का नियंत्रण नहीं है।

टिप्पणी

निर्देशक की सुविधा न होने पर या अन्य किसी कारण से शंखप्रक्षालन के अभ्यास में असमर्थ व्यक्तियों के लिए यह उत्तम है।

सीमाएँ

जठर या आमाशय में घाव रहने पर उचित सलाह एवं निर्देशन में ही यह अभ्यास करें।

उच्च रक्तचाप से पीड़ित व्यक्तियों को सादे गर्म जल का प्रयोग करते हुए अभ्यास करना चाहिए। नमकीन जल का प्रयोग कदापि न करें।

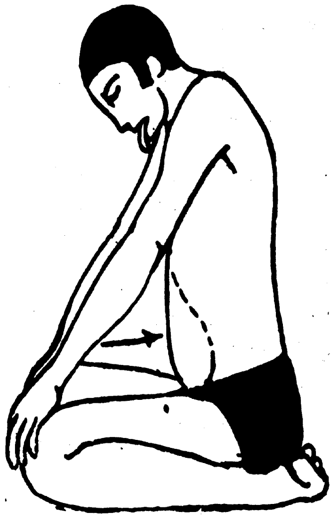
लाभ

दीर्घकालीन पेचिश, वायु अम्लता, अपचन आदि पाचन-विकारों के लिए अति उत्तम है। वृक्क के स्पर्शदोष एवं पथरी के रोग से बचाव करता है, अतः वृक्क एवं मूत्र-प्रणाली के लिए हितकर है।

वह्निसार धौति या अग्निसार क्रिया

प्रारम्भिक अभ्यास

विधि



अग्निसार क्रिया

वज्रासन में बैठिये। घुटनों को अधिक से अधिक दूर रखिये।

दोनों हाथों को घुटनों पर रखिये। सामनें की ओर झुकिये।

मुँह खोलिये। जिह्वा का विस्तार बाहर कीजिये। हाथ सीधे रहें।

उदर का विस्तार एवं संकुचन करते हुए तीव्र गति से श्वास-प्रश्वास क्रिया कीजिये। श्वसन-क्रिया उदर की गति के समकालीन होनी चाहिए। श्वसन-क्रिया कुत्ते के हाँफने की तरह हो।

श्वासोच्छ्वास क्रिया लगभग २५ बार कीजिये।

उच्च अभ्यास

विधि

प्रथम अभ्यास की-सी शारीरिक अवस्था बनाइये।

यथासम्भव दीर्घ रेचक कीजिये। जालंधर बंध लगाइये। तेजी से उदर के स्नायुओं का विस्तार एवं संकुचन कीजिये। कुंभक का क्षमता के अनुसार अभ्यास कीजिये।

सावधानी

भोजन ग्रहण करने के कम से कम ४ घंटे बाद अभ्यास कीजिये।

सीमाएँ

उच्च रक्तचाप, हृदय रोग, पेट या आमाशय में नासूर हो जाने पर अभ्यास वर्जित है।

लाभ

यकृत की न्यून क्रियाशीलता, वायु, अजीर्ण आदि उदर एवं जठर के रोगों का निवारण करता है। सभी उदरस्थ अंगों को क्रियाशील बनाता एवं जठराग्नि को तीव्र करता है।

हृद् धौति

यह क्रिया हृदय प्रदेश में स्थित अंगों के शुद्धिकरण की है। इसके निम्नांकित उपखण्ड क़िये गये हैं –

(१) दंड धौति

इस क्रिया में विशेष रूप से तैयार की गयी बेंत से श्वास-नली तथा गले से जठर तक अन्न नलिका की सफाई की जाती है। अधिकतर केले के पौधे के मध्य स्थित पतले दंड का प्रयोग किया जाता है।

इसका व्यास आधा इंच और लम्बाई दो फुट होनी चाहिए। इसे धीरे-धीरे गले में से होते हुए जठर तक पहुँचाया जाता है। तत्पश्चात् उसे बाहर निकाल लेते हैं। इस अभ्यास से श्लेष्मा, कफ, अम्लता तथा श्वास-नलिका के सामान्य दोषों का निवारण होता है।

(२) वस्त्र धौति

विधि

इस क्रिया में विशेष रूप से तैयार किये गये दो इंच चौड़े एवं कुछ फुट लंबे सूती कपड़े द्वारा श्वास-नलिका एवं जठर की सफाई की जाती है। इसके एक सिरे को मुँह में डालकर अन्न की भाँति लार मिश्रित करते हुए धीरे-धीरे सावधानीपूर्वक निगलते जाइये। दूसरा सिरा मुँह के बाहर रखे हुए इतना वस्त्र निगल जाइये कि प्रथम सिरा जठर तक पहुँच जाये।

उच्च अभ्यासी इस अवस्था में नौलि क्रिया कर सकते हैं।

२० मिनट के उपरांत वस्त्र को बाहर निकाल लीजिये।

सावधानी

योग्य निर्देशक से ही इसका प्रशिक्षण प्राप्त कीजिये।

इसका अभ्यास खाली पेट में ही कीजिये।

बहुत अधिक लम्बे वस्त्र को मुँह के भीतर न डालिए; अन्यथा इसका प्रवेश आँत में हो जायेगा। अभ्यास-काल में पूर्णतः मौन रहिये।

लाभ

दमा, दीर्घकालीन बलगम, कास रोग (Bronchitis) तथा श्वसन-संस्थान के रोगों को दूर करने के लिए उपयोगी अभ्यास है। अपच, पेट की वायु व अम्लता से बचाव एवं उनका निवारण करता है।

(३) वमन धौति

इच्छाधीन वमन क्रिया जठर की सफाई की विधि है। इस क्रिया के दो प्रकार नीचे वर्णित हैं–

(क) कुंजल क्रिया

विधि

सीधे खड़े हो जाइये। अब छः गिलास नमकीन कुनकुना पानी लीजिये और जितनी जल्दी हो सके, इसे पी लीजिये।

आगे झुकिये। दाहिने हाथ की तर्जनी और मध्यमा को गले में अधिक से अधिक अन्दर डालिए। नाख़ून छोटे तथा साफ हों।

जिह्वा के पिछले भाग पर मध्यमा से दबाव डालिए। इससे वमन होगा और पेट का सम्पूर्ण जल तेज बहाव की शृंखला द्वारा बाहर आ जायेगा। जल के पूर्णतः निकलने तक जिह्वा पर दबाव डाले रहिए।

समय

प्रतिदिन खाली पेट में। शंखप्रक्षालन क्रिया के उपरांत।

सावधानी

अभ्यास के २० मिनट बाद तक अन्न ग्रहण न करें।

सीमाएँ

दमा, पेट के नासूर, हृदय-विकार व हर्निया में निर्देशक से सलाह लें।

लाभ

पेट की वायु तथा अम्लीयता को रोकता एवं उपचार करता है।

अन्न-नलिका में एकत्रित बलगम को निकालता है। इस तरह कास रोग तथा श्वसन के अन्य दोषों को दूर करता है। जठर की दीवारों में स्नायु-संकुचन के माध्यम से समस्त अंगों को प्रेरित एवं सुव्यवस्थित करता है।

(ख) व्याघ्र क्रिया

टिप्पणी

यह कुंजल क्रिया की तरह ही है परन्तु इसका अभ्यास भरे हुए पेट में किया जाता है। बाघ की यह विशेषता है कि वह शिकार से पेट को बहुत अधिक भर लेता है, फिर तीन-चार घंटे उपरांत अपूर्ण रूप से पचे हुए भोजन को वमन द्वारा बाहर निकाल देता है।

अपचा पदार्थ मानव शरीर से भी न चाहते हुए वमन द्वारा बाहर आ जाता है। ऊपर की क्रिया इसी भाँति है। अन्तर मात्र यही है कि इसमें इच्छानुसार वमन क्रिया सम्पादित होती है। यदि हम अशुद्ध भोजन ग्रहण करें या पाचन शक्ति ठीक नहीं है तो स्वाभाविक रूप से वमन हो जाता है। व्याघ्र की वमन क्रिया ठीक ऐसी ही है। दुर्बुद्धि से हम अशुद्ध या अधिक मात्रा में भोजन कर लेते हैं। शरीर इसे अधिक से अधिक पचाने का प्रयास करता है। ऐसी स्थिति में पेट में भारीपन आ जाता है और व्यक्ति को कुछ घण्टों तक असुविधा का अनुभव होता है। इस कष्ट को रोकने एवं निवारण के लिए सरलतम विधि यही है कि अन्न को मुँह द्वारा पेट से बाहर निकाल दिया जाये।

विधि

पेट में किसी प्रकार के भारीपन या तकलीफ होने पर यह क्रिया ठीक कुंजल क्रिया की भाँति ही कीजिये। जठर के सब अन्न का निकास हो जायेगा। भोजन के बाद ३ से ६ घंटे के अन्दर यह क्रिया कीजिये। क्रमागत नियम के अनुसार इसके बाद चावल की खीर खाई जाती है परन्तु यह अनिवार्य नहीं है।

सावधानी

नासिका-प्रदेश में अन्न-कण का प्रवेश न होने पाये।

यदि यह स्थिति उत्पन्न होती है तो जल नेति का अभ्यास कीजिये।

सीमाएँ

पेट के नासूर, हर्निया, हृदय-विकार एवं उच्च रक्तचाप में वर्जित है।

लाभ

अनुपयुक्त भोजन एवं अधिक मात्रा में भोजन ग्रहण करने के परिणाम-स्वरूप अपचन हो जाता है। इस दशा में आधुनिक व्यक्ति कुछ गोलियों के सेवन द्वारा लाभ की इच्छा रखते हैं परन्तु न्यूनतम हानि एवं सर्वोत्तम लाभ वाली शरीरगत प्राकृतिक विधि 'वमन' है।

मूलशोधन

विधि

इस क्रिया में हल्दी की नर्म जड़ का प्रवेश गुदाद्वार से धीरे-धीरे भीतर किया जाता है तथा उसे पुनः बाहर निकाला जाता है। इस विशेष जड़ की अनुपलब्धता पर मध्यमा अंगुली का प्रयोग किया जा सकता है। अंत में गुदा-मार्ग को जल से अच्छी तरह धो लीजिये।

लाभ

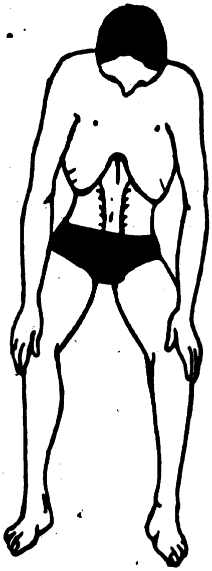
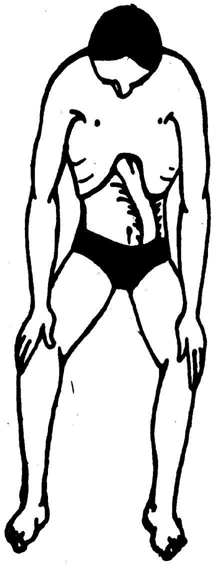
यह क्रिया गुंदा-प्रदेश की सफाई करती है।

हल्दी के पौधे का औषधि के रूप में बहुत महत्व है। यह रक्त को शुद्ध करने वाला एवं घावों को सड़ने-गलने से बचाने वाला है। अतः भारत के अनेक स्थानों में इसका प्रयोग अनेक घावों में एवं कटे हुए स्थान पर स्पर्शदोष की प्रतिकूल दवा के रूप में किया जाता है।

निम्न-प्रदेश में एकत्रित कड़े मल का सहज निष्कासन कर रक्त-संस्थान को अशुद्ध या अव्यवस्थित होने से बचाया जा सकता है।

वक्रों को प्रेरित करता एवं अपचन दूर करता है।

नौलि

नौलि

मध्यम नौलि

वाम नौलि

विधि

पैरों को परस्पर दूर रखे हुए खड़े हो जाइये। उड्डियान बंध लगाइये।

अभ्यास १

गुदा के समीप उदर-स्नायुओं को संकुचित कर उसे उदर के केन्द्र तक ले आइये। यही मध्यम नौलि है।

इसमें पूर्णता प्राप्ति पर अगला अभ्यास कीजिये।

अभ्यास २

प्रथम अभ्यास की तरह ही क्रिया कीजिये परन्तु स्नायुओं को शरीर के बायीं ओर ले आइये। यह वाम नौलि है।

अभ्यास ३

द्वितीय अभ्यास की भाँति है। अंतर यह है कि इसमें गुदा के समीप के उदर-स्नायुओं को दाहिनी ओर लाते हैं। इसे दक्षिण नौलि कहते हैं।

अभ्यास ४

इस अभ्यास में बिना किसी कठिनाई के उपरोक्त तीनों क्रियाओं का अभ्यास किया जाता है। खड़े होकर उड्डियान बन्ध लगाइये।

क्रमानुसार मध्यम, वाम तथा दक्षिण नौलि कीजिये।

गति धीमी तथा एक समान हो।

बहिर्कुम्भक लगाते हुए गति तीव्र कर दीजिये।

स्नायुओं को अधिकतम शिथिल कर पूरक कीजिये।

श्वसन समाप्त हो जाने के उपरान्त क्रिया की पुनरावृत्ति कीजिये।

पूर्व के अभ्यास

नौलि क्रिया का प्रथम अभ्यास प्रारम्भ करने के पूर्व अग्निसार एवं उड्डियान बंध पर अधिकार पाना अनिवार्य है।

समय

कुम्भक लगाने की क्षमतानुसार प्रत्येक ओर से तीन-तीन आवृत्तियाँ कीजिये।

प्रक्रिया में पूर्णता-प्राप्ति की अवधि

प्रतिदिन नियमित दीर्घकालीन अभ्यास करना अनिवार्य है।

यदि तीन माह के उपरान्त आप चतुर्थ अभ्यास करने में सफल हैं तो उन्नति अच्छी है।

सावधानी

योग शिक्षक से इसकी शिक्षा ग्रहण करना उत्तम है।

भोजन के कम से कम चार घण्टे उपरान्त ही अभ्यास कीजिये।

उच्च रक्तचाप, आमाशय या पेट के घाव, हर्निया या अन्य गंभीर पाचन संबंधी विकारों में अभ्यास नहीं करना चाहिए।

लाभ

उदर के समस्त रोगों को दूर करने के लिए शक्तिशाली अभ्यास है।

प्रजनन-संबंधी विकारों को दूर करने में मदद करता है।

आध्यात्मिक लाभ प्रदान करते हुए मणिपुर चक्र के जागरण में सहयोग प्रदान करता है।

बस्ति एवं कपालभाति

बस्ति – इस क्रिया की निम्नांकित दो विधियाँ हैं –

(१) जल बस्ति – (यौगिक एनिमा)

नाभि तक पानी में खड़े हो जाइये। बहती नदी आदर्श स्थान है।

सामने झुकिये। हाथों को घुटनों पर रखिये। गुदाद्वार के संकोचक स्नायुओं का विस्तार कीजिये; साथ ही उड्डियान बंध लगाकर नौलि क्रिया इस प्रकार कीजिये कि पानी गुदाद्वार से ऊपर को चढ़े। आँत में कुछ समय तक पानी को रोकिये, तत्पश्चात् उसी मार्ग से बाहर निकालिये। इसमें अश्विनी मुद्रा का अभ्यास भी कर सकते हैं।

लाभ

बड़ी आँत की शुद्धि होती है तथा वायु एवं मल का निकास होता है। रक्त-शुद्धता में वृद्धि होती है। प्राणायाम के उच्च अभ्यासी इस क्रिया का अभ्यास ताप को न्यून करने के लिए करते हैं।

टिप्पणी

अभ्यास को सरल बनाने के लिए प्रारम्भिक अभ्यासी एक छोटी नली को गुदाद्वार से भीतर डाल कर अभ्यास कर सकते हैं।

योग शिक्षक के निर्देशन में ही इस क्रिया का अभ्यास करना चाहिए।

(२) स्थल बस्ति – (शुष्क बस्ति)

पश्चिमोत्तानासन का अंतिम अभ्यास कीजिये। गुदाद्वार से आँतों में पच्चीस बार वायु खींचते हुए अश्विनी मुद्रा कीजिये।

कुछ देर वायु को रोकिये। पुनः गुदाद्वार से उसका निकास कीजिये।

लाभ

अश्विनी मुद्रा की भाँति ही हैं।

कपालभाति – इसकी निम्नांकित तीन विधियाँ हैं –

(१) वातक्रम कपालभाति

कपालभाति प्राणायाम की-सी विधि है।

(२) व्युतक्रम कपालभाति

नासिका से जल भीतर खींच कर उसे मुँह से निकालते हैं।

(३) शीतक्रम कपालभाति

इसमें मुँह से जल पीकर उसका निष्कासन नासिका से किया जाता है।

यह अधिक प्रभावपूर्ण ढंग से जलनेति के समस्त लाभ प्रदान करता है।

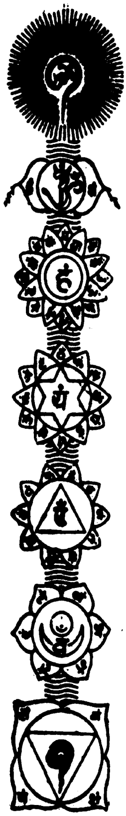
यौगिक आत्मिक जीवतत्व

आसनों एवं अन्य अभ्यासों के साथ विशेष बिन्दु पर चित्त एकाग्र करने का निर्देश इस पुस्तक में दिया गया है। किसी अभ्यास में श्वास पर एकाग्रता रखने को कहा गया है और कहीं अंग-विशेष पर एकाग्रता के लिए आदेश मिलता है। अधिकांशतः एकाग्रता का केन्द्र बिंदु कोई 'चक्र' है। ये आत्मिक बिंदु एकाग्रता के विकास के लिए अनिवार्य माध्यम हैं जो स्वयं में गहन उपयोगिता रखते हैं। योगाभ्यासों के द्वारा हम मन को शिथिल कर अधिकतम रूप से लाभान्वित होना चाहते हैं तो यह आवश्यक है कि किसी वस्तु-विशेष पर एकाग्रता की जाये। किसी वस्तु पर ध्यान केन्द्रित करने की अपेक्षा यदि हम श्वास-क्रिया या शरीर के किसी विशेष प्रदेश पर चित्त को एकाग्र कर यौगिक अभ्यास करें तो उसका प्रभाव बहुत अधिक बढ़ जाता है।

भौतिक रूप से चक्रों का संबंध प्रमुख नाड़ी-जालों तथा अंतःस्रावी-ग्रंथियों से है। मानव रचना के ये प्रमुख प्रसारक एवं नियंत्रण केन्द्र हैं। इन नाड़ी-जालों या ग्रंथियों पर अधिकांश आसनों का विशेष शक्तिशाली एवं लाभदायक प्रभाव पड़ता है। एक या दो ग्रंथियों पर विभिन्न आसन प्रभाव डालते हैं। उदाहरणार्थ– सर्वांगासन के शक्तिशाली प्रभाव से ग्रीवा प्रदेश में स्थित चुल्लिका ग्रन्थि की अच्छी मालिश होती है तथा उसकी क्रिया में अत्यन्त सुधार होता है। यदि इसके अभ्यास काल में इसी स्थान-विशेष पर चित्त को स्थिर किया जाये तो बहुत अधिक लाभार्जन होगा।

अधिकांश व्यक्तियों में ये आत्मिक केन्द्र सुषुप्त एवं निष्क्रिय होते हैं और शक्ति का अधिकांश भाग अप्रयुक्त ही रह जाता है। योग दर्शन के अनुसार साधारणतः मानव की संभावित मानसिक शक्ति का दसवाँ भाग ही प्रयुक्त किया जाता है। शेष अप्रयुक्त शक्ति सुषुप्त रहती है जिसका चेतना-प्रक्रिया से संबंध नहीं होता है। मस्तिष्क का यह सुषुप्त व अज्ञात प्रदेश विस्तृत है। इसी भाँति अवचेतन और अचेतन मन की गहराइयों में ऐसी बातें हैं जो अज्ञात हैं या जिनका बहुत कम ज्ञान हमें है। आधुनिक मनोविज्ञान इसका समर्थन करता है।

स्वतंत्र रूप से या आसन के अभ्यास के साथ इन चक्रों पर ध्यान करभे से शक्ति को चक्रों की ओर बहने की प्रेरणा मिलती है। इससे आत्मिक एवं मानसिक शरीर में स्थित शक्ति- केन्द्रों के जागरण में सहायता मिलती है। फलतः व्यक्ति अन्य चेतन स्तरों का अनुभव प्राप्त करने में सक्षम बनता है जिनके विषय में सामान्यतः वह अचेत रहता है।



प्रमुख चक्र सात हैं। इनकी स्थिति मेरुदंड के मूल से सिर के शीर्ष प्रदेश तक है। ये परस्पर आत्मिक नलिकाओं या नाड़ियों के जाल से संबंधित हैं। स्थूल स्तर पर ये नाड़ियाँ नाड़ी-संस्थान की नसों से संयुक्त हैं। प्रत्येक चक्र की आकृति पद्म की तरह है। प्रत्येक में दलों की संख्या निश्चित है एवं वे विशेष रंगों में हैं। दल उस विशेष चक्र की आत्मिक शक्ति तथा उसमें स्थित बाह्य एवं अंतःप्रवाह की आत्मिक नलिकाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। प्रत्येक चक्र तत्व-विशेष के केन्द्र हैं जिनकी विशेष आकृतियाँ हैं, बीज मंत्र हैं, प्रमुख इष्ट तथा उनके वाहन एवं संबंधित विशेषतायें हैं।

प्रत्येक चक्र का पूर्ण वर्णन नीचे दिया जा रहा है–

१. मूलाधार चक्र

स्थिति के अनुसार यह सबसे नीचे का चक्र है। यह मूल केन्द्र है। मूलाधार के नीचे भी कई केन्द्र हैं जो निम्न श्रेणी के प्राणियों के चेतना-स्तर का प्रतिनिधित्व करते हैं। अन्य प्राणियों में ये क्रियाशील होते हैं परन्तु मनुष्यों में पूर्णतः सुषुप्त रहते हैं। इसका चिन्ह गहरे लाल रंग का चतुर्दलीय कमल है। प्रत्येक दल या पंखुड़ी पर मंत्र 'वं' 'शं' 'षं' 'सं' लिखा हुआ है। यह पृथ्वी-तत्व का केन्द्र है जिसकी आकृति चौकोन है तथा बीज मंत्र 'लं' है। यह हाथी पर सवार है तथा पृथ्वी की स्थिरता एवं दृढ़ता का प्रतीक है। मूलाधार के प्रमुख देवता सृष्टि के निर्माता 'ब्रह्मा' हैं तथा देवी 'डाकिनी' हैं जो शरीर की स्पर्शानुभूति का नियंत्रण करती हैं।

मूलाधार के केन्द्र में एक लाल त्रिभुज है जिसका सिरा नीचे की ओर है। त्रिभुज के अंदर धुएँ के रंग का शिवलिंग है जिसके चारों ओर सुनहरे रंग के सर्प की साढ़े तीन कुण्डली है।

मूलाधार को मूल केन्द्र कहा जाता है क्योंकि यह प्राथमिक महत्व की शक्ति अर्थात् कुंडलिनी शक्ति का निवास-स्थल है। यह शक्ति सर्प के रूप में गहरी निद्रावस्था में है जो शिवलिंग के चारों ओर कुंडली मारे हुए है। ब्रह्माण्ड एवं मानवीय शक्तियों का यही केन्द्र है जिनका प्रकटीकरण काम शक्ति, संवेदना, आत्मिक या आध्यात्मिक शक्तियों के रूप में होता है। 'शक्ति' मात्र एक है– केवल एक। यही वह केन्द्र है जहाँ से वह उत्पन्न होती है तथा जिससे कुछ गुणों एवं विशेषताओं की प्राप्ति होती है। मनोविज्ञान की कुछ शाखाओं के अनुसार यह विचार प्रबल है कि मानवीय रचना के भीतर काम-वासना (libido) ही मूल शक्ति है और वह अपना प्रदर्शन कई रूपों में करती है।

अधिकांश व्यक्तियों में इस शक्ति की वृहत् मात्रा का प्रदर्शन मूलाधार के समीप स्थित प्रजनन-केन्द्र के द्वारा होता है। इसी कारण मनुष्यों में काम-प्रवृत्तियाँ प्रबल हैं।

वृहत् परिमाण की यह शक्ति भी प्रत्येक व्यक्ति में निहित प्रबल शक्ति की बहुत ही अल्प मात्रा है। आत्मशुद्धि एवं मन की एकाग्रता के द्वारा इस असीम शक्ति को जागृत कर उसे ऊपर के चक्रों से ले जाते हुए व अन्त में सहस्रार तक ले जाकर शुद्ध शक्ति का पवित्र चेतना से संयोग (शिव एवं शक्ति का योग) ही 'योग' का अन्तिम लक्ष्य है।

२. स्वाधिष्ठान चक्र

इसकी स्थिति मेरुदण्ड में मूलाधार के कुछ ऊपर तथा मूत्रेन्द्रिय के ठीक पृष्ठ-प्रदेश में है। स्वाधिष्ठान का शाब्दिक अर्थ है– 'व्यक्ति विशेष का निवासस्थल'। इस चक्र का चिह्न तेज लाल रंग का षट् दलीय पद्म है। दलों पर मंत्र– 'बं' 'भं' 'मं' 'यं' 'रं' तथा 'लं' लिखा है। मध्य में अर्ध चन्द्र है तथा बीज मंत्र 'वं' है। वाहन मगर है जो जल तत्व का प्रतिनिधित्व करता है। इसके इष्टदेव सृष्टि के रक्षक एवं पोषक भगवान विष्णु हैं। देवी राकिनी हैं जो रक्त तत्व की नियंत्रक हैं।

भौतिक स्तर में स्वाधिष्ठान चक्र का प्रमुख संबंध उत्सर्जक तथा प्रजनन अंगों से है। अतः इस केन्द्र की शक्ति से इन अंगों में सुधार लाकर उन्हें

व्यवस्थित किया जा सकता है।

सूक्ष्म स्तर पर स्वाधिष्ठान चक्र अचेतन मन का स्थान है। अचेतन मन एकत्रित चेतना है– संस्कारों को एकत्रित करने वाला कक्ष तथा भूतकाल की सूक्ष्म स्मृतियों को संग्रहीत करके रखने वाली चेतना। यह मनुष्य की ऐसी अति प्राचीन प्रवृत्तियों का केन्द्र है जिनकी जड़ें बहुत नीचे हैं। इस केन्द्र के शुद्धिकरण के पश्चात् मनुष्य पाशविक प्रवृत्तियों से ऊपर उठ जाता है।

इस केन्द्र पर ध्यान करने के लिए साधक को एक विशाल गहरे समुद्र में, अंधेरी रात में, आकाश के नीचे अशान्त तूफानी लहरों का दृश्य सामने लाना चाहिए। समुद्री तरंगें हमारी चेतना के उतार-चढ़ाव एवं बहाव का प्रतिनिधित्व करती हैं।

३. मणिपुर चक्र

मणिपुर का अर्थ स्पष्टतः मणि का नगर है। यह अग्नि का केन्द्र है, ताप का मध्य बिन्दु है, मणि की भाँति चमकदार है तथा चैतन्यता और शक्ति से दीप्तिमान है। मणिपुर चक्र का वर्णन दस दल वाले पीतवर्णीय पद्म के रूप में मिलता है। दलों पर ये अक्षर लिखे हुए हैं–'डं' 'ढं' 'णं' 'तं' 'थं' 'दं' 'धं' 'नं' 'पं' 'फं'। पद्म के अन्दर उल्टा त्रिभुज है जिसका रंग लाल है। बीज मंत्र 'रं' है। वाहन 'भेड़' है जो चमकदार परन्तु आक्रमण करने वाला या आघात पहुँचाने वाला चौपाया जानवर है। प्रमुख देवता सृष्टि के संहारकर्ता 'रुद्र' हैं। मांसल तत्त्वों को नियंत्रित करने वाली देवी 'लाकिनी' है।

सूर्य क्षेत्र वह केन्द्र है जिसका संबंध प्रधानतः पाचन की प्राणमयी क्रिया तथा भोजन के शोषण से है। हमारे पेट में स्थित क्लोम, पित्ताशय आदि अन्य ग्रंथियों का कार्य वितरण के पूर्व भोजन की दाह-क्रिया के लिए पाचक द्रव, अम्ल, रस आदि का स्राव करना है। मणिपुर चक्र एक ऐसा सूक्ष्म केन्द्र है जो इन कार्यों पर नियंत्रण रखता है। साथ ही वृक्कों के ऊपर स्थित उपवृक्क ग्रन्थियाँ भी मणिपुर चक्र की स्थूल रचनायें हैं। इन ग्रंथियों से उपवृक्कीय रस का स्राव होता है। विशेष परिस्थितियों में इन ग्रन्थियों द्वारा यह रस रक्त-संस्थान में भेजा जाता है। इससे समस्त शारीरिक प्रक्रियायें तीव्र हो जाती हैं और मस्तिष्क चैतन्य एवं तेज होता है। इसके अलावा हृदय-गति में वृद्धि हो जाती है, श्वास क्रिया की गति बढ़ जाती है व नेत्र अधिक खुल जाते हैं।

सामान्यतः मनुष्यों में प्रतिघात करने की या चपलता की जो शक्ति होती है, उससे कहीं अधिक तीव्र क्रियाशीलता के लिए मानव शरीर तत्पर रहता है। आलस, सुस्ती, निराशा, अपचन और मधुमेह आदि पाचन-संस्थान के दोषों से जो व्यक्ति पीड़ित हैं, उन्हें मणिपुर चक्र पर ध्यान इस अनुभूति के साथ करना चाहिए कि इस प्रदेश से ताप एवं शक्ति की उत्पत्ति हो रही है।

कुछ मतानुसार (जैसे जैन, बौद्ध-धर्म) मणिपुर चक्र ही कुंडलिनी का स्थान है; अतः यह बहुत ही महत्वपूर्ण है। यह विचार इस दृष्टि से सत्य है कि रूपान्तरण के समय कुण्डलिनी मणिपुर चक्र से अधिक प्रकाशमान होती हुई जाती है।

मणिपुर चक्र आत्मिक तथा भौतिक शरीर का प्राण केन्द्र है। यहाँ प्राण (ऊपर जाने वाली शक्ति) एवं अपान (नीचे आने वाली शक्ति) का संगम होता है जिसके परिणामस्वरूप 'ताप' की उत्पत्ति होती है और जो जीवन-रक्षा के लिए अनिवार्य है।

४. अनाहत चक्र

अनाहत चक्र का शाब्दिक अर्थ है– 'आघातरहित'। सृष्टि की समस्त ध्वनियों की उत्पत्ति परस्पर दो वस्तुओं के आघात से ही होती है परन्तु भौतिक जगत् के परे जो दिव्य ध्वनि है, वही सभी ध्वनियों का स्रोत है। इसे 'अनहद् नाद' कहते हैं। हृदय केन्द्र वह स्थान है जहाँ से ये ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं। यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की धड़कन है। योगी इस आंतरिक, अस्तित्वहीन, अनन्त तरंग को ग्रहण कर सकते हैं।

इसका लाक्षणिक चिह्न १२ दलों वाला नीले रंग का कमल फूल है। दलों पर अंकित वर्ण ये हैं– 'कं' 'खं' 'गं' 'घं' 'ङं' 'चं' 'छं' 'जं' 'झं' 'ञं' 'टं' और 'ठं'। मध्य में षट्कोणाकृति है जिसकी रचना दो मिले हुए त्रिभुजों से हुई है। यह यहूदियों के देवता डेविड के तारे के समान होता है। बीजमंत्र 'यं' है। वाहन शीघ्रगामी काले रंग का हिरण है। यह वायु तत्व का प्रतीक है। प्रमुख देव 'ईशा' हैं जो सभी में व्याप्त हैं। शरीर के चर्बीदार तत्व की देवी 'काकिनी' इसमें स्थित हैं।

भौतिक स्तर पर स्वाभाविकतः अनाहत चक्र का संबंध हृदय एवं फेफड़ों से है। साथ ही रक्त-संस्थान एवं श्वसन से भी यह सम्बन्धित है। पांडु रोग, धड़कन की बीमारी, क्षयरोग, श्वास की बीमारी, कास रोग

(bronchitis) व अत्यधिक तनाव की स्थिति में इस पर ध्यान करना चाहिए। विशेषतः आसनों या अन्य यौगिक अभ्यासों के समय इस चक्र पर चित्त को एकाग्र करना चाहिए।

हृदय प्रदेश में एक अंधेरे कमरे या गुफा की कल्पना करते हुए इस चक्र पर ध्यान करना चाहिए। इसे हृदयकक्ष कहते हैं और इस खाली प्रदेश की रिक्तता-पूर्ति श्वास क्रिया के प्रसारण-संकुचन तथा धड़कन की ध्वनियों से की जाती है।

अभ्यासी को दीपक की जलती हुई एक छोटी सी लौ देखने की कोशिश करनी चाहिए। वायुरहित स्थान में लौ की स्थिरता की कल्पना करनी चाहिए। यह प्रत्येक व्यक्ति में निहित जीवात्मा का संकेत है जिसे सांसारिक बातें अशांत नहीं कर सकतीं।

५. विशुद्धि चक्र

विशुद्धि का शब्दार्थ है– 'शुद्ध करना'। विशुद्धि चक्र शुद्धिकरण का केन्द्र है। इसका सांकेतिक चिह्न सोलह पंखुड़ियों वाला कमल पुष्प है, कमल का रंग जामुनी मिश्रित धुएँ का रंग है। दलों पर संस्कृत के वर्ण हैं– 'अं' 'आं' 'इं' 'ईं' 'उं' 'ऊं' 'ऋं' 'ॠं' 'ऌं' 'ॡं' 'एं' 'ऐं' 'ओं' 'औं' 'अं' 'अः'।

पद्म के मध्य श्वेत वृत्त है। बीज मंत्र 'हं' है। इसका वाहन शुद्ध श्वेत गज है जो आकाश का सांकेतिक चिह्न है। इष्टदेव 'अर्द्धनारीश्वर' हैं (अर्द्ध शरीर शिव या पुरुष रूप एवं अर्द्ध शरीर पार्वती या नाड़ी रूप।) इस चक्र की देवी 'साकिनी' हैं जिनका अधिकार अस्थि तत्व पर है।

विशुद्धि चक्र कंठ नलिका, चुल्लिका एवं उपचुल्लिका ग्रंथि प्रदेश अर्थात् स्वर-कोष्ठ को प्रभावित करता है। इस प्रदेश के शरीरगत दोषों का निवारण इस चक्र पर चित्त की गहन एकाग्रता द्वारा किया जा सकता है।

ग्रीवा का यह केन्द्र वह स्थान है जहाँ दिव्य रस अमृत का पान किया जा सकता है। यह अमृत वह स्वादिष्ट मीठा रस है जिसकी उत्पत्ति ललना चक्र द्वारा होती है। ललना चक्र ग्रीवा के पृष्ठ प्रदेश के समीप स्थित है। अमृत अमरत्व प्रदान करने वाला रस है। खेचरी मुद्रा जैसे उच्च यौगिक अभ्यासों द्वारा इस रस की ग्रंथि को क्रियाशील बनाया जा सकता है। इस विशेष रस का पान कर योगी इच्छानुसार कितनी भी अवधि तक बिना अन्न-जल ग्रहण

किये जीवित रह सकता है। ललना चक्र पर अधिकार प्राप्त कर भारत के अनेक योगी भूमिगत समाधि का प्रदर्शन करते हैं। उनका शरीर भूमि में दफना दिया जाता है। कई दिनों के बाद भी वे जीवित अवस्था में ही बाहर आते हैं। ललना चक्र को उत्प्रेरित करने वाला कोई भी अभ्यास योग्य गुरु के निर्देशन में ही करना चाहिए, अन्यथा कुछ संकट उत्पन्न हो सकता है। इस प्रकार के उच्च अभ्यास के लिए साधक की दशा उपयुक्त न होने पर कड़वे व विषैले रस की उत्पत्ति होती है।

व्यक्ति को इस चक्र पर ध्यान इस अनुभव के साथ करना चाहिए कि अमृत की शीतल मीठी बूँदें उस पर गिर रही हैं और विषैले तत्वों का नाश कर आनन्दानुभूति प्रदान कर रही हैं।

६. आज्ञा चक्र

इस चक्र को 'तृतीय नेत्र', ज्ञान चक्षु, त्रिकुटी, त्रिवेणी, भ्रूमध्य, गुरुचक्र या शिवनेत्र भी कहा जाता है। ध्यान की ऊँची अवस्था में शिष्यगण इसी चक्र के माध्यम से गुरु की आज्ञा और निर्देशों को ग्रहण करते हैं। दिव्य उच्च चेतना का आदेश भी इसी से ग्रहण किया जाता है। इसका लाक्षणिक चिह्न हल्के भूरे या श्वेत रंग का द्विदलीय पद्म है। दलों पर 'हं', 'क्षं' लिखा होता है। ये प्राणशक्ति के ऋणात्मक एवं धनात्मक प्रवाह का प्रतिनिधित्व करते हैं। दोनों प्रवाह इसी बिंदु की ओर हैं। पद्म के मध्य में बीज मंत्र 'ॐ' है। इष्ट देव परमशिव, अरूप चेतना है। इस चक्र की देवी 'हाकिनी' हैं जो इस चक्र के तत्व सूक्ष्म मन या मानस का नियंत्रण करती हैं।

आज्ञा चक्र एक प्रसिद्ध केन्द्र है। ध्यान की अनेक क्रियाओं में इस पर ही ध्यान किया जाता है। सामान्यतः हम भ्रूमध्य पर ही ध्यान करते हैं परन्तु इस चक्र का वास्तविक स्थान मस्तिष्क प्रदेश में है। भौतिक शरीर में इससे समानता रखने वाली रचना पीनियल (pineal) नामक गूढ़ अंतःस्रावी ग्रंथि है। औषधि क्षेत्र के वैज्ञानिकों ने अभी तक इसके जीवतत्व संबंधी कार्यों का पता नहीं लगाया है। इस केन्द्र की वास्तविक स्थिति का पता लगाना कठिन है। भ्रूमध्य केन्द्र इस चक्र को प्रेरित करने के लिए एक बटन का काम करता है। यह चक्र दृष्टि, नाड़ी, गंध, पिंड तथा बुद्धि, न्याय, तर्क जैसी मानसिक प्रक्रियाओं के लिए जिम्मेदार मस्तिष्क के अनुरूप भी है। मानव की प्रमुख

विशेषता है कि वह इन्द्रियों द्वारा प्राप्त विभिन्न सूचनाओं का चुनाव एवं त्याग उनकी महत्ता के आधार पर करता है। यह राजयोग का विषय है। इसमें तीन विभिन्न उप-विभागों का भी समावेश है जिन्हें 'बुद्धि' (अन्तर्दृष्टि, उच्च ज्ञान), 'चित्त' (भूतकालीन प्रभावों का संग्रहालय) और 'अहंकार' (व्यक्तिगत भाव) कहते हैं।

आज्ञा चक्र का स्थान पीनियल ग्रन्थि है। यह ग्रन्थि मस्तिष्क में छोटे मटर के बराबर होती है। विकसित मनुष्यों में इसका आकार अपेक्षाकृत बहुत ही छोटा हो जाता है। आत्मिक स्तर पर यह सूक्ष्म बिंदु भौतिक, मानसिक और आत्मिक शरीर के मध्य सेतु का कार्य करता है। आज्ञा चक्र के जागरण द्वारा ही व्यक्ति दिव्य-दृष्टि, दिव्य-श्रवण, विचार-संचरण तथा अन्य असाधारण गुप्त शक्तियों का विकास कर सकता है। विचार-शक्ति भी अति सूक्ष्म विभिन्न तत्वों का रूप ग्रहण करती है। जब मस्तिष्क उन्नत एवं संवेदनशील बन जाता है तब आज्ञा चक्र के माध्यम से विचार शक्ति को भेजना एवं ग्रहण करना संभव हो जाता है। गहरी तथा ऊँची चेतना के प्रदेश में खुलने वाला यह आत्मिक द्वार है।

इसके अतिरिक्त आज्ञा चक्र को सक्रिय बनाकर बौद्धिक शक्ति, स्मरण शक्ति, इच्छा शक्ति, एकाग्रता आदि मानसिक शक्तियों की वृद्धि की जा सकती है।

७. बिन्दु विसर्ग

सिर के ठीक पीछे जहाँ हिन्दू चोटी रखते हैं, एक विशेष 'बिन्दु' है। यह एक रहस्यपूर्ण आत्मिक केन्द्र है। उसे 'सोम-चक्र' कहा जाता है। इसका सांकेतिक चिह्न अर्द्धचंद्र एवं चाँदनी रात्रि है। इसका संबंध पुरुषों में वीर्यरस उत्पन्न करने से है। इसी बिन्दु से यह रस टपकता है। बिन्दु का अर्थ ही है– 'वीर्य-बूँद'।

प्राचीन क्रिया योग विज्ञान के अनुसार 'बिन्दु चक्र' एकाग्रता के लिए अत्यधिक महत्व का है। यहाँ उत्पन्न होने वाली आत्मिक ध्वनियों को उस पर ध्यान करते हुए ग्रहण किया जा सकता है।

८. सहस्रार

वास्तविकतः यह चक्र नहीं, वरन् उच्चतम चेतना के वास का स्थान

है। इसे सहस्र दलों वाले चमकीले कमल पुष्प के रूप में दृष्टिगत किया जा सकता है। दलों पर संस्कृत के समस्त वर्ण अंकित हैं। सम्मिलित रूप से इसमें सम्पूर्ण शक्तियाँ निहित हैं जिनका सम्बन्ध पचास बीज मंत्र की शक्ति के बीस गुणक से है। कमल के केन्द्र-स्थल पर उज्ज्वल शिवलिंग है जो पवित्र चेतना (शिव) का प्रतीक है। यह वही स्थल है जहाँ शिव-शक्ति का आश्चर्यजनक योग, चेतना का तत्व एवं शक्ति से संयोग तथा व्यक्तिगत आत्मा का असीम आत्मा से मिलन होता है।

योग और तंत्र-दर्शन के अनुसार ब्रह्माण्ड की सृष्टि इन्हीं शक्तियों के विच्छेदन से हुई है। सत्यतः इन दोनों शक्तियों की मूलवस्तु एक-ही है। चेतना स्थिर शक्ति तथा प्रकृति क्रियात्मक शक्ति है। सर्वप्रथम प्रकृति तीन विभागों या गुणों में विभाजित होती है। ये हैं– तमस् (जड़ता, आलस्य), रजस् (क्रियाशीलता, शक्ति) और सत्व (समतुल्य, संतुलन, शांति)। हमारे मन तथा शरीर से लेकर सूर्य तथा तारों और संपूर्ण सृष्टि में ये तीन शक्तियाँ व्याप्त हो जाती हैं। इन तीन गुणों से प्रकृति के आठ तत्व विकसित होते हैं जिनकी सूची दी जा चुकी है। विकास क्रिया सूक्ष्म तत्व से स्थूल तत्व की ओर होती है। उदाहरणार्थ– बुद्धि, अहंकार इत्यादि से अग्नि, जल व पृथ्वी की ओर। पृथ्वी सर्वाधिक स्थूल तत्व है, अतः यहाँ इस क्रिया का अंत हो जाता है। निम्नतम उत्पत्ति के उपरान्त निर्माण की प्रक्रिया पूर्ण हो जाती है।

इस प्रकार निम्न प्रदेशों में स्थित पाँच चक्र स्थूल तत्व हैं। आज्ञा चक्र सूक्ष्म तत्व है तथा उच्चतम केन्द्र 'सहस्रार' शुद्ध चेतना तथा सर्वोन्नत है। जागृति के उपरान्त कुण्डलिनी सब चक्रों में से होती हुई सहस्रार पर पहुँचती है तथा उसी स्रोत में उसका विलीनीकरण हो जाता है जहाँ से उसकी उत्पत्ति हुई थी।

नाड़ी

नाड़ी का शाब्दिक अर्थ धारा या प्रवाह है। प्राचीन ग्रन्थों के अनुसार आत्मिक शरीर में ७२ हजार नाड़ियाँ हैं। आत्म-दृष्टि-प्राप्ति के उपरान्त व्यक्ति इन्हें प्रकाशधारा के रूप में देख सकता है। वर्तमान समय में 'नाड़ी' शब्द का रूपान्तरण 'नस या तंत्रिका' शब्द में किया गया है। यह शब्द उपयुक्त नहीं है क्योंकि नाड़ी की रचना सूक्ष्म तत्वों से होती है और सत्यतः ये नसें नहीं हैं। चक्रों की भाँति इनकी स्थिति भौतिक शरीर में नहीं है। भौतिक

शरीर में स्थित नसों को उनके समरूप या उनके द्वारा उत्पन्न की गयी भौतिक रचना कहा जा सकता है। नाड़ियाँ वे सूक्ष्म नलिकायें हैं जिनमें से प्राण-शक्तियों का प्रवाह होता है। आत्मिक शरीर की अनेक नाड़ियों में से १४ महत्वपूर्ण हैं तथा इन १४ नाड़ियों में ३ प्रमुख एवं सर्वाधिक महत्व की हैं। ये हैं– इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना। सभी नाड़ियाँ सुषुम्ना की उपनाड़ियाँ हैं। इड़ा-पिंगला का समावेश भी इसमें है। सुषुम्ना नाड़ी का प्रवाह मेरुदण्ड में मूलाधार चक्र (निम्नतम प्रदेश) से आज्ञा चक्र (शीर्ष प्रदेश) तक है। इस सुप्त नाड़ी का रंग चाँदी-सा है।

मूलाधार चक्र के बायीं ओर से निकलकर प्रत्येक चक्र में से वक्राकार बहती हुई अन्त में आज्ञा चक्र के बायीं ओर समाप्त होने वाली नाड़ी 'इड़ा' है। इड़ा का रंग नीला है। इसके विपरीत मूलाधार के दाहिनी ओर से निकलकर प्रत्येक चक्र में 'इड़ा' की विपरीत दिशा में वक्राकार बहकर जाने वाली 'पिंगला' नाड़ी का अन्त आज्ञा चक्र के दाहिनी ओर होता है। इसका रंग अंगार-सा लाल होता है।

'इड़ा' और 'पिंगला' हमारे शरीर में दो विपरीत ध्रुवों से बहने वाली जीवन-शक्तियों के प्रवाह-मार्ग हैं। 'इड़ा' ऋणात्मक है जिसे चंद्र नाड़ी भी कहते हैं। 'पिंगला' धनात्मक है। इसे सूर्य नाड़ी कहा जाता है। निम्नांकित तालिका से इनके गुण स्पष्ट हो जाते हैं–

गुण	इड़ा	पिंगला
श्वसन	बायाँ नासिका छिद्र	दाहिना नासिका छिद्र
तापक्रम	शीतल	गरम
लिंग	स्त्रीलिंग	पुंल्लिग
गुण	मानसिक	शारीरिक
रंग	नीला	लाल
धातु	रजत	स्वर्ण
शक्ति	ऋणात्मक	धनात्मक
नस	परानुकंपी	अनुकंपी
नदी	गंगा	यमुना
नक्षत्र	चंद्र	सूर्य

इडा, पिंगला तथा सुषुम्ना में शक्तियों का तीव्र प्रवाह क्रमागत

नियमानुसार होता है। किसी भी समय नथुने से बहने वाले श्वास-प्रवाह का अनुभव करते हुए यह ज्ञात किया जा सकता है कि उस विशेष समय में किस नाड़ी में प्रवाह है। यदि बायें में प्रवाह अधिक हो तो समझिये कि इड़ा तीव्र चल रही है। यदि दाहिने नथुने में वायु-प्रवाह अधिक हो तो स्पष्टतः पिंगला नाड़ी में प्रवाह का संकेत है और यदि दोनों नासिका-छिद्रों में समान वायु-प्रवाह है तो यह सुषुम्ना नाड़ी-प्रवाह के लक्षण हैं। अवलोकन से प्राप्त होता है कि एक नथुने में दूसरे की अपेक्षा वायु-प्रवाह अधिक होता है। दाहिने नथुने के प्रवाह-काल में प्राण शक्ति अधिक क्रियाशील होती है; इससे शारीरिक कार्य, पाचन आदि में सहायता मिलती है। इस अवधि में मन बहिर्मुखी रहता है एवं शरीर में अधिक ताप उत्पन्न होता है। यदि बायीं नासिका में अधिक प्रवाह हो या इड़ा नाड़ी चल रही हो तो मानसिक शक्तियों की प्रधानता होती है। मन अंतर्मुखी होता है। इस अवधि में चिंतन, चित्त-एकाग्रता आदि कार्य संपादित करने चाहिए। इड़ा नाड़ी का प्रवाह अधिकतर निद्रा-अवस्था में होता है। यदि रात्रि में पिंगला में प्रवाह हो तो व्यक्ति को असुविधा प्रतीत होती है तथा कठिनाई से नींद्र आती है। इसी भाँति यदि भोजन के समय इड़ा नाड़ी में प्रवाह हो तो पाचन क्रिया ठीक नहीं होती तथा अपचन हो जाता है। हमारी समस्त क्रियायें इन्हीं नाड़ी-प्रवाहों के परिणामस्वरूप होती हैं। इच्छा शक्ति एवं पादादिरासन आदि यौगिक अभ्यासों के द्वारा इच्छानुसार स्वर-प्रवाह में परिवर्तन किया जा सकता है। उदाहरणार्थ– किसी व्यक्ति को यदि कार्य करना है और उसे नींद की अनुभूति हो रही है तो वह उपरोक्त विधि से स्वर प्रवाह पिंगला में करते हुए कार्य हेतु अनिवार्य शक्ति प्राप्त कर सकता है।

स्वर योग नामक विज्ञान में विस्तृत रूप में परिवर्तित नाड़ी-प्रवाह का वर्णन किया जाता है। हठयोग का भी प्रथम उद्देश्य इड़ा और पिंगला के प्राण-प्रवाह के मध्य संतुलन लाना है (ह-सूर्य; ठ-चन्द्र)। इस कार्य के लिए षट्कर्मों द्वारा शरीर की शुद्धिकरण-क्रिया की जाती है। सभी व्यक्तियों को इन दोनों प्रवाहों में संतुलन बनाये रखना आवश्यक है ताकि व्यक्ति बहुत अधिक मानसिक रूप से एकाग्र न हो और न बहुत अधिक शारीरिक कार्य में ही लगा रहे या भौतिक कार्य में ही उसकी चेतना बनी रहे। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि स्थूलमान से चौबीस घण्टों में लगभग बारह घण्टे बायें स्वर-प्रवाह की प्रमुखता होनी चाहिए तथा शेष बारह घण्टे दाहिने स्वर में प्रवाह की प्रधानता होनी चाहिए।

इन दो नाड़ियों की शुद्धि तथा मन पर नियंत्रण प्राप्त हो जाने पर तृतीय प्रमुख नाड़ी सुषुम्ना में प्रवाह होता है। इड़ा तथा पिंगला नाड़ियों में प्राण के प्रवाह में सन्तुलन आने पर यह स्थिति उत्पन्न होती है तथा बायें एवं दाहिने स्वर-प्रवाह में समानता होने पर ही प्राणों के प्रवाह में सन्तुलन आता है। ध्यान के अभ्यास में उच्चतम सफलता प्राप्ति के लिए सुषुम्ना का प्रवाहित होना अनिवार्य है। इस अभ्यास-काल में यदि पिंगला में प्रवाह होगा तो साधक कुछ असुविधा का अनुभव करेगा और यदि इड़ा में प्रवाह होगा तो चिंतन-क्रिया अधिक होगी। मात्र सुषुम्ना के प्रवाह से ही साधक उच्च ध्यान में सफल होगा, क्योंकि सुषुम्ना नाड़ी से ही कुण्डलिनी विभिन्न चक्रों से होती हुई जाती है।

मानव-शरीर विज्ञान के अनुसार अनैच्छिक नाड़ी संस्थान की दो नाड़ियों अर्थात् अनुकम्पी एवं परानुकम्पी तंत्रिकाओं से 'इड़ा-पिंगला' की समानता स्थूलतः दी जा सकती है। पिंगला नाड़ी अनुकंपी तंत्रिका के समरूप है जो कि तीव्र क्रियाशीलता के लिए उत्तरदायी है। इन क्रियाओं का सम्बन्ध बाह्य वातावरण से तथा उन आंतरिक अंगों से होता है, जो आन्तरिक रूप से शक्ति का प्रयोग करते हैं। उदाहरणार्थ – अनुकंपी तंत्रिका हृदय की गति तीव्र करती है, रक्त नलिकाओं में फैलाव लाती है, श्वसन दर में वृद्धि करती है, कर्ण व नेत्रों की क्षमता को बढ़ाती है। इस प्रकार व्यक्ति का शरीर बाह्य क्रियाओं के लिए तैयार किया जाता है। परानुकम्पी तंत्रिकायें इसके विपरीत कार्य करती हैं। ये तंत्रिकायें हृदय-गति न्यून कर देती हैं तथा रक्त नलिकाओं का आकुंचन करती हैं, श्वसन क्रिया मंद कर देती हैं। परिणामतः व्यक्ति अंतर्मुखी हो जाता है। अधिकांश व्यक्तियों के लिए इन नाड़ियों की क्रियायें अनैच्छिक एवं अज्ञात रहती हैं। व्यक्ति इनके प्रति सचेत नहीं रहते। यही बात इड़ा-पिंगला के लिए भी लागू होती है। यौगिक अभ्यासों द्वारा इन पर नियंत्रण-प्राप्ति तक इनकी क्रियायें भी पूर्णतः अनैच्छिक तथा अचेतन रूप से होती हैं।

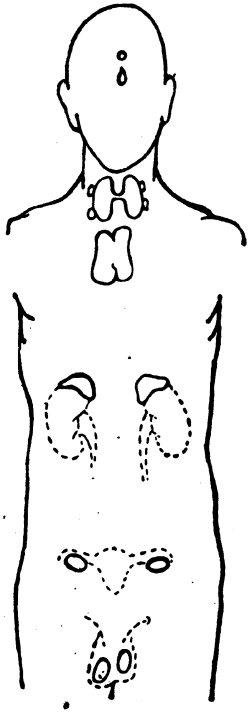
मानवीय अंतः रचना

मनुष्य की आंतरिक रचनाओं द्वारा ही उसके प्रत्येक कार्य सम्पन्न होते हैं और इन्हीं के द्वारा वह बाह्य वातावरण की बातों को ग्रहण करता है। तथापि यह दुख का विषय है कि न्यूनतम व्यक्तियों को ही शरीर के आंतरिक कार्यों का ज्ञान है। हमें बाहरी संसार का ज्ञान तो बहुत है; परन्तु आश्चर्य है कि बहुत कम लोगों को ही इस बात का ज्ञान है कि उनके शरीर में कौन-कौन सी क्रियायें होती हैं।

प्रत्येक व्यक्ति को यदि विस्तृत रूप से नहीं तो इस बात का सामान्य प्रारम्भिक ज्ञान अवश्य ही होना चाहिये कि शरीर के कार्य क्या हैं और उसके अंतःप्रदेश में कौन - कौन से आश्चर्यजनक कार्य होते हैं। शरीर के साथ उचित व्यवहार न होने के कारण ही अनेक व्यक्तियों में शारीरिक एवं मानसिक समस्यायें उत्पन्न हो जाती हैं। उदाहरणार्थ – खरीदी गई नई मोटर की हम उचित देखभाल करते हैं। यदि कोई ऐसा न करे तो हम उसे अज्ञानी समझते हैं। मोटर के क्रिया-कलापों एवं उसकी सक्षमता के विषय में जानकर व्यक्ति उसकी उपयुक्त देखभाल करता है, उसे इस ढंग से चलाता है कि उसकी मशीनों के कार्यों में किसी प्रकार की अव्यवस्था न आने पाये। इसके विपरीत अज्ञानी व्यक्ति उसका दुरुपयोग करता है। ठीक यही दशा शरीर की है। जिन व्यक्तियों को शरीर-विज्ञान का ज्ञान होता है, वे शरीर के आन्तरिक अंगों की उचित देखभाल करते हैं; अन्यथा इन अंतरांगों को दुरुपयोग का शिकार बनना पड़ता है।

इसी कारण शरीर-विज्ञान की पुस्तक न होते हुए भी इस पुस्तक में कुछ आंतरिक अंगों का वर्णन उनका प्रारम्भिक ज्ञान प्रदान करते हुए दिया जा रहा है। इस ज्ञान की प्राप्ति से व्यक्ति में इन अंगों के प्रति सम्मान में वृद्धि होगी। साथ ही इस पुस्तक में यौगिक क्रियाओं के साथ जिन शारीरिक अंगों का सन्दर्भ दिया गया है, उन्हें समझने में भी पाठकगण समर्थ होंगे।

अंत:स्रावी ग्रन्थि - प्रणाली



अन्त:स्रावी ग्रन्थि - प्रणाली

शरीरगत अधिकांश ग्रंथियों में नलिकायें होती हैं। इन नलिकाओं के माध्यम से ही वे अपने स्राव या रस का बहाव उस स्थान-विशेष को करती हैं जिनसे संबंधित कार्य वे करती हैं । उदाहरण के लिये, पाचन ग्रन्थियाँ पाचक रस को जठर और आँतों में भेजती हैं । स्वेद-ग्रंथियाँ पसीने के रूप में अपने रस को चर्म-स्तर पर पहुँचाती हैं।

कुछ अन्य प्रकार की ग्रंथियाँ भी होती हैं। इनमें विशेष नलिकाओं की रचना नहीं होती । इनके द्वारा रासायनिक द्रवों की उत्पत्ति होती है जिन्हें 'रस' कहते हैं। इनका प्रवाह प्रत्यक्षत: रक्त-प्रवाह में हो जाता है। सम्मिलित रूप से ये ग्रंथियाँ नलिकाविहीन ग्रंथि या अंत:स्रावी ग्रंथियाँ कहलाती हैं। समस्त शारीरिक एवं मानसिक कार्यों पर इनका गहरा प्रभाव पड़ता है। इनके द्वारा निर्मित रस रक्त में मिश्रित होकर तथा विभिन्न अंगों में पहुँचकर उनकी

क्रियाशीलता में परिवर्तन लाते हुए शारीरिक रचना की क्रियाओं में परिवर्तन करते हैं।

इन अंतःस्रावी ग्रंथियों के अंतर्गत पीयूष ग्रंथि, पीनियल ग्रंथि, क्लोम, उपवृक्क, चुल्लिका, उपचुल्लिका, बीजाण्डकोष एवं वृष्ण सम्मिलित हैं। प्रत्येक ग्रंथि की संख्या दो है जिनका कार्य संयुक्त रूप से होता है। यदि एक में दोष आ जाये या वह निष्क्रिय हो जाये तो दूसरी कार्य करती रहती है। परिणामतः शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती रहती है और उनके कार्यों में अवरोध उत्पन्न नहीं होने पाता।

विभिन्न अंतःस्रावी ग्रंथियों के कार्य परस्पर संबंधित हैं। कोई ग्रंथि स्वतंत्र रूप से कार्य नहीं करती। अतः किसी एक ग्रंथि में अव्यवस्था आने पर इसकी प्रतिक्रिया अन्य अंतःस्रावी ग्रंथियों पर होती है।

१. पीयूष या शीर्षस्थ ग्रंथि

यह मटर के बराबर छोटी ग्रंथि है। इसका वास-स्थल मस्तिष्क का आधार है। इसका वजन मात्र आधा ग्राम होता है। छोटी आकृति को देखते हुए इस ग्रंथि को महत्वहीन न समझिये, क्योंकि समस्त शारीरिक ग्रंथियों में यह प्रधान ग्रंथि है। पूर्ण अंतःस्रावी ग्रंथि-प्रणाली से शक्तिशाली रसों की उत्पत्ति होती है। अतः अनिवार्य है कि पूरे समय उनके निर्माण-कार्य में व्यवस्था बनी रहे; अन्यथा पूरी प्रणाली निरर्थक सिद्ध हो जायेगी। यह कार्य शीर्षस्थ ग्रंथि का है। इस ग्रंथि से अनेक प्रकार के रसों का निर्माण होता है। इनमें से कुछ प्रत्यक्षतः शरीर पर प्रभाव डालते हैं; परन्तु अधिकांश रसों का कार्य अन्य अंतःस्रावी ग्रंथियों के कार्यों का नियंत्रण करना है। शरीरगत सभी क्रिया-कलापों पर शीर्षस्थ ग्रंथियों का विस्तृत रूप से प्रभाव पड़ता है। शरीर का विकास तथा रोग-निरोध-शक्ति का विकास शरीरपोषक रस 'somatotrophic hormone STH' द्वारा ही होता है। इसकी अनुपस्थिति में हल्के स्पर्शदोष से भी सरलता से मृत्यु हो जायेगी। यह विशेष रस श्वेत रक्त कोशिकाओं को गतिशील तथा प्रतिकारक बनाता है जो स्पर्शदोष से हमारी रक्षा करती हैं।

इसी ग्रंथि द्वारा तैयार किया गया एक दूसरा पोषक रस 'adrenocortrophic hormone ACTH' है जो उपवृक्क ग्रंथि को क्रियाशील बनाता है।

चुल्लिका ग्रंथि के उत्प्रेरक के रूप में एक विशेष रस (Thyro trophin TSH) की उत्पत्ति भी इसी ग्रंथि द्वारा होती है। इस रस विशेष की अनुपस्थिति में समस्त शारीरिक तथा मानसिक कार्यों को विपत्ति का सामना करना पड़ेगा।

इस ग्रंथि से रक्तचाप बढ़ाने वाले रस (pituitrin hormone) तथा एक छोटी ग्रंथि को क्रियाशील बनाने वाले रस (follicle stimulating hormone FSH) का स्राव भी होता है जिसके कारण भ्रूण का विकास होता है तथा जो **रज:पिण्ड** को इस्ट्रोजन (estrogen) नामक रस के उत्पादन-कार्य हेतु क्रियाशील बनाता है। एक अन्य महत्वपूर्ण रस (luteinizing hormonc LH) की उत्पत्ति होती है जो स्त्रियों के नियमित मासिक धर्म का कारण है।

इसके अतिरिक्त इस ग्रंथि से कई प्रकार के रस-स्राव होते हैं। इस संक्षिप्त विवरण में उनका वर्णन कठिन है।

२. पीनियल ग्रंथि

यह ग्रंथि वैज्ञानिकों के लिये अभी भी समझ से परे हैं। इसकी निश्चित क्रियाओं का पता शरीर-विज्ञान नहीं लगा सका है।

योग के अनुसार यह ग्रंथि स्थूल शरीर तथा चैतन्य शरीर के मध्य की कड़ी है।

३. चुल्लिका ग्रंथि

इस छोटी ग्रंथि की आकृति तितली की भाँति होती है। ग्रीवा के सम्मुख वायु नलिका के दोनों ओर यह स्थित है। यह शक्तिशाली रस (thyroxin) की उत्पत्ति करती है जो व्यावहारिक रूप से शरीर के प्रत्यक्ष कोशिका पर प्रभाव डालता है। शरीर की चयापचय क्रिया में प्रत्येक कोशा द्वारा ओषजन एवं भोजन का शोषण होता है। इस ग्रंथि द्वारा इस क्रिया की दर को व्यवस्थित किया जाता है। अन्य वस्तुओं की चयापचय-क्रिया पर यह नियंत्रणकारी प्रभाव डालती है। हड्डियों के विकास-कार्य को प्रेरित करती है, नाड़ी-संस्थान की संवेदनशीलता में वृद्धि करती है तथा शरीर के अन्य अंगों पर सक्रिय या निष्क्रिय प्रभाव डालती है।

सामान्य क्रियाशील व्यक्ति में चुल्लिका रस की उत्पत्ति पर्याप्त मात्रा में होती है जिससे उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती है। ऐसे व्यक्ति में

प्रचुर मात्रा में शक्ति होती है तथा वह कार्यों से थकता नहीं है। इसके विपरीत अर्द्धमृत से दिखने वाले सुस्त व्यक्तियों में इस रस की कमी होती है। इस अवस्था को 'हाइपोथॉयराइडिज्म' कहते हैं। उनमें चयापचय क्रिया की दर निम्न हो जाती है; जीवन सत्व, चर्बी, कार्बोज आदि की रूपान्तर क्रिया भी कम हो जाती है। शारीरिक तापक्रम कम हो जाता है और मस्तिष्क की क्रियाशीलता कम हो जाती है। ऐसी स्थिति में साधारणतः पाण्डु रोग हो जाता है। चुल्लिका रस की उत्पत्ति के लिये आयोडिन तत्व की उपस्थिति आवश्यक है। इसी कारण उपरोक्त रोग उस प्रदेश में अधिक होता है जहाँ की मिट्टी में आयोडिन की मात्रा कम या नहीं के बराबर होती हैं। चुल्लिका ग्रंथि के पर्याप्त क्रियाशील न होने पर भी इसके रस-स्राव का परिणाम कम हो जाता है। इस क्षेत्र में योग सहायक है। योगाभ्यासों द्वारा इस ग्रंथि की क्रियाशीलता बढ़ा कर उचित मात्रा में इस शक्ति-प्रदत्त रस की प्राप्ति की जा सकती है।

इसके विपरीत अधिक स्राव होने पर 'हाइपरथायराइडिज्म' की स्थिति पैदा हो जाती है। इस अवस्था में व्यक्ति असामान्यतः क्रियाशील तथा कठोर परिश्रमी बन जाता है। चुल्लिका ग्रंथि की क्रियाशीलता सीमा को पार कर जाती है। चयापचय क्रिया में अधिकतम तीव्रता आ जाती है। व्यक्ति दुर्बल हो जाता है। नाड़ी-संस्थान अधिक संवेदनशील हो जाता है। फलतः हाथों में कम्पन प्रारम्भ हो जाता है। हृदय की धड़कन बढ़ जाती है तथा साधारणतः घबराहट उत्पन्न होती है। पुनः योगाभ्यास द्वारा ग्रंथि के कार्यों को व्यवस्थित कर उपयुक्त परिमाण में चुल्लिका रस का स्राव किया जा सकता है।

४. उपचुल्लिका ग्रंथि

ये बहुत छोटी ग्रंथियाँ हैं। वायु नलिका के दोनों तरफ इनकी स्थिति होती है। ये पूर्णतः चुल्लिका ग्रंथियों के भीतर अर्थात् उनसे ढँकी होती हैं परन्तु स्वतंत्र रूप से एक विशेष रस का स्राव करती हैं। यह ग्रंथि अस्थि के विकास कार्य को प्रेरित करती है तथा शरीर में कैल्शियम तथा फॉस्फोरस के वितरण-कार्य में व्यवस्था लाती है।

५. उपवृक्क ग्रंथि

ये दो ग्रंथियाँ वृक्क के शीर्ष प्रदेश से संयुक्त रहती हैं। प्रत्येक ग्रंथि के दो उपविभाग होते हैं परन्तु सामान्यतः ये उपविभाग दिखाई नहीं देते। मध्यस्थ भाग को मेड्यूला (medulla) कहते हैं। ऊपर के कोणीय आवरण को कॉर्टेक्स (cortex) कहते हैं।

मध्यवर्ती प्रदेश या मेड्यूला की रचना पृष्ठवंशीय नाड़ियों की भाँति नाड़ी कोशाओं से होती है। यहाँ दो बहुत ही शक्तिशाली रसों का स्राव होता है जिन्हें एड्रिनलिन (adrenalin) तथा नॉरएड्रिनलिन (noradrenalin) कहते हैं। दोनों रसों द्वारा रक्तचाप उच्च होता है। उपवृक्कीय रस हृदय की धड़कन को बढ़ाता है, रक्त नलिकाओं की संकोचन-क्रिया द्वारा रक्तचाप बढ़ाता है, शरीर में ओषजन की शोषण-क्रिया में वृद्धि करता है, श्वसन-दर बढ़ाता है तथा शरीर के अधिकतम अंगों में तथा अंतरांगों के बाहर रक्त प्रवाहित करता है। यह पाचन-क्रिया मंद करता है; कर्ण, नेत्र आदि ज्ञानेन्द्रियों को अपेक्षाकृत अधिक संवेदनशील बनाता है तथा अन्य कई कार्य करता है। यह ग्रंथि शरीर को उत्तम क्रिया द्वारा प्रतिकार करने के योग्य बनाती है। इस उददे्श्य की पूर्ति शरीर को बाह्य रूप से सजग तथा प्रेरित करते हुये होती है। तनाव या भय की स्थिति में ग्रंथि की क्रिया मस्तिष्क के सामने के भागों से प्रारम्भ होती है। मस्तिष्क के मध्य में स्थित हाइपोथैलेमस (hypo-thalamus) को संदेश प्रसारित किया जाता है। यहाँ से नाड़ीय-प्रभाव या संदेश उपवृक्कोय मेड्यूला को भेजा जाता है। परिणामतः शीघ्र ही उपवृक्कीय रस का स्राव रक्त में हो जाता है। उसी क्षण शरीर अतिरिक्त बल के लिये तैयार हो जाता है।

नॉरएड्रिनलिन रस सभी नाड़ीय प्रभावों को प्रेरित करता है।

प्रत्येक ग्रंथि के ऊपरी आवरण या कॉर्टेक्स कुछ शक्तिशाली रसों की उत्पत्ति करते हैं। इनका मेड्यूला से किसी प्रकार सम्बन्ध नहीं रहता। इनसे उत्पन्न रस को स्टेरॉइड्स (steroids) कहते हैं। शरीर में इनके अनेक कार्य हैं। विभिन्न गुणों के तीस से भी अधिक स्टेरॉइड्स के स्राव का पता लगा है। सभी की उत्पत्ति कोलेस्टेरॉल (cholesterol) नामक रासायनिक तत्व से होती है। इस उत्पन्न रस की क्रिया यकृत, वृक्क तथा प्रजनन अंगों पर होती है। वृक्कों की क्रिया कार्टिजोन (cortisone) रस द्वारा होती है जो सोडियम के पुनः शोषण तथा पोटेशियम की उत्सर्जन-क्रिया में वृद्धि करता है।

यदि उपवृक्क ग्रन्थियों की क्रियाशीलता कम हो जाये तो कोशाओं में पोटेशियम की मात्रा न्यून हो जायेगी। इससे रक्त का घनफल कम हो जायेगा तथा रक्तचाप न्यून हो जायेगा। उपवृक्कीय कॉर्टेक्स द्वारा निर्मित रसों में सबसे महत्वपूर्ण रस कार्टिजोन है क्योंकि यह शरीरगत जीवन सत्व के परिवर्तन की दर को नियंत्रित करता है। शारीरिक कोशाओं द्वारा ग्लूकोज (blood sugar) का प्रयोग किया जाता है। यह रस क्रिया की गति पर अपना अधिकार रखता है।

६. क्लोम

सत्यतः यह अंतःस्रावी ग्रंथि नहीं है परन्तु इसके ऊपर आयलेट्स ऑफ लैंगरहेंस (islets of langerhans) या अनेक कोशाओं का जो बड़ा समूह है, उसके गुण अंतःस्रावी ग्रंथि के सदृश ही हैं। इनसे मधुवशि (insulin) नामक रस का स्राव होता है। यह वह शक्तिशाली रस है जो रक्त में ग्लूकोज की मात्रा को कम करता है। इस स्राव में कमी होने पर 'मधुमेह' का प्रकोप हो जाता है। इस स्थिति में रक्त में ग्लूकोज की मात्रा बहुत हो जाती है।

ग्लूकोज की अतिरिक्त मात्रा का निष्कासन मूत्र द्वारा होता है। वास्तविकतः इस बीमारी का संबंध केवल क्लोम से ही नहीं वरन् वृक्कों एवं नाड़ी-संस्थान से भी होता है। वृक्क ग्रंथि, शीर्षस्थ ग्रंथि तथा चुल्लिका ग्रंथि का भी इससे संबंध है। रक्त में ग्लूकोज की मात्रा को कम या अधिक बनाये रखना कठिन काम है। इस प्रक्रिया के लिए आवश्यक है कि अंतःस्रावी ग्रंथि-संस्थान का कार्य सामान्य हो।

क्लोम का प्रमुख कार्य पाचक रस की उत्पत्ति करना है।

७. यौन ग्रन्थि

पुरुषों में इस ग्रंथि को वृष्ण या वीर्यपिंड कहते हैं। स्त्रियों में ये ग्रंथियाँ बीजाण्ड कोष या रजःपिंड कहलाती हैं। पुरुष एवं स्त्री की अंतःस्रावी ग्रंथि प्रणाली में समानता होती है। अनिवार्यतः अंतर मात्र यौन रसों में है। वीर्यपिंड के स्राव द्वारा बालक पुरुष में परिवर्तित हो जाता है। रजःपिंड के विकास एवं स्राव द्वारा बालिका स्त्री बन जाती है। इस क्रिया में अवरोध आने से असाधारण विकास हो सकता है या यौन-वृद्धि में कमी आ सकती है।

पुरुषों के वृष्ण से जो शक्तिशाली रस-स्राव होता है उसे टेस्टेरॉन (testerone) कहते हैं। रक्त प्रवाह द्वारा इसी रस का वितरण पूरे शरीर में होता है; परिणामतः बालक पुरुष बन जाता है। दाढ़ी बढ़ना, मोटी आवाज, शक्तिशाली स्नायु आदि पुरुषोचित गुण बालक में आ जाते हैं।

स्त्रियों के रजःपिंड के दो प्रमुख कार्य हैं। प्रथम है– अंड की उत्पत्ति एवं द्वितीय है–दो अनिवार्य स्त्रियोचित यौन रसों की उत्पत्ति। इन दोनों रसों के नाम इस्ट्रोजेन (estrogen) तथा प्रोजेस्टेरोन (progesterone) हैं। ये दोनों रस भ्रूण के विकास (बच्चे के रूप में) के लिये गर्भ का निर्माण करते हैं। भ्रूण के निर्माण के बाद इनके द्वारा एक नलिका की रचना होती है जो भ्रूण को

अतिरिक्त रक्त-प्रदान करती है। नारी जीवन पर इन रसों का बहुत प्रभाव पड़ता है।

८. थायमस

इसकी स्थिति हृदय-प्रदेश में है। यह स्पष्ट नहीं है कि इस ग्रंथि को अंतःस्रावी ग्रंथि-प्रणाली के अन्तर्गत क्यों सम्मिलित किया गया है। बच्चों में इसकी आकृति बड़ी होती है। यह विकास क्रिया में सहायक है। व्यक्ति के बड़े होने पर इसकी आकृति क्रमशः छोटी होती जाती है। पूर्ण विकसित व्यक्ति में यह बहुत छोटी होती है। यह शरीर को स्पर्शदोष से बचाव करने की शक्ति प्रदान करती है।

योग द्वारा स्वस्थ अंतःस्रावी ग्रन्थि प्रणाली

इस पुस्तक में वर्णित विभिन्न यौगिक अभ्यास शरीर के विशेष प्रदेशों पर तनाव एवं दबाव डालते हैं। इससे अंगों से संबंधित नाड़ियों की स्वास्थ्य-रक्षा होती है तथा उन्हें पुनः शक्ति की प्राप्ति होती है। यही प्रभाव अंतःस्रावी ग्रंथियों पर भी पड़ता है। शरीरांगों की मालिश होती है, फलतः इन ग्रंथियों सहित वे स्वस्थ अवस्था में रहते हैं।

नाड़ी शोधन आदि कुछ प्राणायाम क्रमशः परानुकम्पी तंत्रिका तंत्र तथा अनुकम्पी तंत्रिका तंत्र को सक्रिय बनाते एवं उन पर नियंत्रण रखते हैं। अतः इन नाड़ियों से संबंधित अंतःस्रावी ग्रंथियाँ स्वतः शिथिल एवं क्रियाशील हो जाती हैं। ये ग्रंथियाँ सदैव बहुत सक्रिय रहती हैं। उन्हें योगाभ्यास आवश्यक विश्रान्ति प्रदान करता है। तदुपरान्त उनकी क्रियाशीलता में वृद्धि हो जाती है।

हठयोग की *शंखप्रक्षालन* क्रिया में इन ग्रंथियों को पर्याप्त विश्राम मिलता है। पूर्ण अन्ननलिका की सफाई हो जाने के उपरान्त अधिकांश अंतः-स्रावी ग्रंथियों को, विशेषकर पाचन एवं चयापचय से संबंधित ग्रंथियों को भोजन ग्रहण करने से पूर्व ४५ मिनट तक आराम मिलता है। इस विश्रान्ति का बहुत ही अच्छा प्रभाव इन ग्रंथियों, पाचन-संस्थान और सम्पूर्ण शरीर पर पड़ता है। मधुमेह आदि में इसका आश्चर्यजनक प्रभाव पड़ता है। वर्षों पूर्व की निष्क्रिय ग्रंथियाँ भी सक्रिय हो जाती हैं। सिर के बल किये जाने वाले आसन विशेषकर शीर्षासन का इन ग्रंथियों के कार्यों पर सुप्रभाव पड़ता है। ये क्रियायें शीर्षस्थ ग्रंथि पर प्रभाव डालती हैं। इससे हाइपोथैलेमस से रक्त का बहाव शीर्षस्थ ग्रंथि में प्रचुर मात्रा में होता है जिससे इसमें सन्तुलन आता है।

पाचन संस्थान

ग्रहण किया गया भोज्य पदार्थ प्रत्यक्ष रूप से शरीर में प्रवेश कर तुरन्त पचकर एक - रूप नहीं हो जाता। एक विशेष प्रक्रिया द्वारा यह कई पदार्थों में परिवर्तित होता है जिसका शोषण रक्त - प्रवाह से होता है। तत्पश्चात् रक्त - प्रवाह द्वारा भोजन का वितरण सम्पूर्ण शरीर में होता है। इस प्रक्रिया को 'पाचन' कहते हैं। मुँह में भोजन के पहुँचते ही पाचन प्रारंभ हो जाता है। पाचन की प्रथम क्रिया चबाने की है। इस क्रिया में अन्न के छोटे - छोटे टुकड़े किये जाते हैं। इससे पाचक रस को उन्हें पूरी तरह ले जाने में सुविधा होती है।

मुँह की लारोत्पादक ग्रंथि एक विशेष पाचक टायलिन् (ptyclin) का स्राव करती है जो अन्न में मिश्रित हो जाता है तथा भोजन के स्टार्च को कार्बोज के सरल रूप अर्थात् शक्कर में परिवर्तित कर देता है।

जठर एक लम्बी व पोली स्नायविक रचना है। इसमें उचित मात्रा में अन्न रखने की शक्ति होती है। इसमें जठर रस नामक पाचक रस द्वारा अन्न को मथ दिया जाता है। अन्य पाचक अंगों की अपेक्षा इसकी दीवारें मोटी होती हैं। इन दीवारों पर स्थित ग्रंथियों से प्रति दिन औसतन कुछ लीटर पाचक रस का स्राव होता है। जठर रस की मात्रा व्यक्तिगत भोजन पर निर्भर है। स्वादरहित तथा सर्वथा एक-सा भोजन ग्रहण करने से इसकी उत्पत्ति कम होती है, जबकि स्वादिष्ट व अच्छा भोजन इन रसों के स्राव को प्रोत्साहित करता है। मानसिक स्थिति का प्रभाव भी इन रसों पर पड़ता है। शांतिपूर्वक भोजन करने से पाचन ठीक होता है। तनाव एवं क्रोध से अपचन होता है।

जठर रसों में पेप्सिन, हाइड्रोक्लोरिक अम्ल तथा रेनिन होता है। पेप्सिन तथा हाइड्रोक्लोरिक अम्ल जीवन-सत्व को विभाजित करते हैं। रेनिन कुछ भोज्य पदार्थों को ठोस रूप में परिवर्तित कर देता है (जैसे दूध के केसिन नामक नाइट्रोजन-युक्त पदार्थ पर प्रभाव पड़ने से दही बन जाता है)। इससे पाचक रस अधिक समय तक उस पर विभाजन का कार्य कर सकता है। जठर रस में एक और पाचक रस होता है जिसे पेप्सिनोजेन कहते हैं। यह रस लार की क्रिया को समाप्त करता है एवं जीवाणु को नष्ट करता है।

जल या अन्य द्रव पदार्थ जठर या आमाशय में कुछ मिनट से अधिक नहीं रहते। वे तुरन्त पक्वाशय (छोटी आँत का प्रथम भाग) में पहुँच जाते हैं। वहाँ उनका शोषण हो जाता है। ठोस पदार्थ जठर में ही रहते हैं। जठर रस में

मिलाने के लिये बहुत अधिक संकुचन क्रिया द्वारा इनके आकार-प्रकार में कई परिवर्तन होते हैं।

सबसे शक्तिशाली क्रिया जठर के पक्वाशय में खुलने के मार्ग (pylorus) के समीप होती है। इस पूरे प्रदेश में आकुंचन-लहरियाँ होती हैं और पाचन-क्रिया अविरल रूप से चलती रहती है। समय-समय पर द्वार (pyloric) खुल जाता है तथा द्रव रूप में परिवर्तित कुछ पदार्थ पक्वाशय में प्रवेश करते है। गैस्ट्रो-इन्टेस्टाइनल सिस्टम की ग्रंथियों द्वारा स्रावित रसों का मिश्रण पक्वाशय में प्रवेश किये गये पदार्थों में किया जाता है। इन ग्रंथियों में सर्वाधिक महत्व क्लोम का है जो आँतों को पाचक रस प्रदान करती है। इसकी स्थिति जठर के पृष्ठ भाग में है तथा यह पक्वाशय से लगभग पूरी तरह घिरी हुई है। इसका रस-स्राव छोटी नलिका के माध्यम से पक्वाशय में होता है। क्लोम रस में शक्तिशाली पाचक रस होता है जो हर प्रकार के भोजन तत्व, जीवन सत्व, चर्बी तथा कार्वोज को पचाने में समर्थ होता है।

शर्करा, स्टार्च व कार्बोज पदार्थों का विश्लेषण करने वाला क्लोमीय पाचक रस एमीलेस या डायेस्टेस कहलाता है। चर्बी को विभाजित करने वाला रस लायपेज है जो पित्त के साथ संयुक्त रूप से कार्य करता है। ट्रिप्सिन जीवन सत्व को विभाजित करता है। जठर में भोजन के साथ हाइड्रोक्लोरिक अम्ल के अच्छी तरह मिश्रित हो जाने के उपरान्त ही क्लोम रस का कार्य ठीक होता है, इसके बिना नहीं।

द्वितीय पाचक ग्रन्थि यकृत है। यह शरीर की सबसे बड़ी ग्रन्थि है। इसके कार्य अनेक हैं। रक्त में अन्न के शोषित हो जाने के बाद ही यकृत का सम्बन्ध उससे होता है। यकृत में अधिकांश अन्न का संग्रह एवं परिवर्तन ग्लाइकोजेन के रूप में होता है। किसी अंग की आवश्यकतानुसार इसका परिवर्तन ग्लूकोज (blood sugar) में हो जाता है तथा उसे रक्त-प्रवाह में भेज दिया जाता है। यकृत स्वच्छ स्वर्णिम द्रव तैयार करता है जिसे पित्त कहते हैं। इसका संग्रह पित्ताशय में होता है जहाँ उसकी शक्ति में वृद्धि हो जाती है। इससे वह गहरे हरे रंग का हो जाता है। क्लोम रस लायपेज के साथ चर्बी के विभाजन के लिये महत्वपूर्ण है। यह आँतों की आकुंचन-लहरी को क्रियाशील बनाता है जिससे आँतों में भोजन की गतिशीलता बनी रहती है।

छोटी आँत की दीवारों पर बहुत सी छोटी ग्रन्थियाँ होती हैं। ये अग्रिम पाचन क्रिया के लिये पाचक रस उत्पन्न करती हैं। ये पाचक रस कई प्रकार के

होते हैं जैसे–माल्टेज, सुक्रेज, लेक्टेज, न्यूक्लीएज, फास्फेटेज, इन्टराकेज आदि।

छोटी आँत की भीतरी सतह मखमल की-सी दिखाई देती है। सूक्ष्मदर्शक यंत्र द्वारा दीवारों पर सूक्ष्म कक्ष (शोषण केन्द्र) दिखाई देते हैं। ये बाहर निकली हुई शाखायें हैं। इनमें अनेक रक्त नलिकायें होती हैं। इस प्रकार छोटी आँत अपने स्तर में वृद्धि करती है ताकि भोजन को सरलतापूर्वक शोषित कर सके तथा रक्त-प्रवाह के द्वारा उसे यकृत में पहुँचा सके।

आँतों की दीवारों पर अनेक स्नायु होते हैं। आकुंचन-लहरीं-नाड़ियों के प्रभाव से इन्हें संकुचित तथा शिथिल किया जाता है। पाचन क्रिया के समय आकुंचन लहरी के कारण छोटी आँत में अविरल गतिशीलता बनी रहती है। फलतः आँत के भोजन में भी गति होती है और उसका संयोग अन्य पाचक रसों से होता है।

छोटी आँत की लम्बाई २० फुट से अधिक होती है। इसकी चौड़ाई बड़ी आँत की अपेक्षा कम होती है इसलिये इसे यह नाम दिया गया है। परिवर्तन-काल में भोजन इस आँत की पूरी लम्बाई में घूमता है। अंत में इस आँत की सामग्री एक विशेष द्वार (ileocacal valve) के द्वारा बड़ी आँत में भेज दी जाती है। इस द्वार के कारण अन्न धीरे-धीरे बड़ी आँत में जाता है। इससे छोटी आँत जल्द ही रिक्त नहीं होती।

बड़ी आँत की लम्बाई लगभग ५ फुट है। शरीर में द्रव का पुनर्शोषण करना ही इसका कार्य है। यह कार्य द्रव की **भविष्य की** उपयोगिता के लिए किया जाता है।

बिना पचे हुये, अशोषित शेष त्याज्य पदार्थ को धीरे-धीरे गुदा में भेजा जाता है। मल रूप में इसका शरीर से निकास होता है।

अनेक यौगिक अभ्यासों द्वारा पाचन दोषों को दूर किया जा सकता है तथा आन्तरिक अंगों को स्वस्थ रखा जा सकता है।

हमारे द्वारा ग्रहण किये जाने वाले भोजन का विभाजन निम्न चार भागों में किया जा सकता है–

(१) कार्बोज एवं चर्बी

इनसे शरीर को आवश्यक शक्ति प्राप्त होती है। शक्ति का सबसे अधिक उपयोग ताप के रूप में होता है। इससे शारीरिक तापक्रम विधिवत् बना रहता

है। शेष शक्तियों का उपयोग शरीर के समस्त स्नायुओं के लिये होता है। हृदय, यकृत आदि आंतरिक अंगों के स्नायु भी हाथ-पैरों के स्नायुओं के साथ इसमें सम्मिलित हैं।

चर्बी रक्षक-कवच का निर्माण करती है जो कोमल अंगों की बाह्य आघातों से रक्षा करती है। भविष्य के उपयोग के लिये शक्ति के संग्रह में भी यह मदद पहुँचाती है।

इसके अंतर्गत आलू, चावल, रोटी, मक्खन, घी, तेल, शर्करा आदि पदार्थ आते हैं।

(२) जीवन सत्व

ये विशेष ध्यान देने योग्य भोज्य पदार्थ हैं। इनके द्वारा नवीन कोशाओं का निर्माण होता है। जिन कोशाओं को कुछ क्षति पहुँची हो, उनके सुधार तथा स्नायु-विकास के लिये भी इनकी आवश्यकता है। शरीर में रोग-निरोध शक्ति उत्पन्न करने के लिये भी ये कई पदार्थों का निर्माण करते हैं। कुछ अन्य ऐसे पदार्थों की उत्पत्ति भी करते हैं जिनका उपयोग शरीर में अंतःस्रावी रस तथा पाचक रस आदि के लिये होता है। जीवन सत्व कई प्रकार के होते हैं। प्रत्येक का शरीर में विशेष कार्य है। भोजन का यह उपयोगी अंश है। अधिकांशतः इनकी उपस्थिति दूर्ध, पनीर, मट्ठा मांस, मछली, अण्डा, चना, सेम, अखरोट, बादाम आदि में होती है। अनाज़, हंरी सब्जी तथा फलों में इनकी मात्रा न्यून होती है।

(३) खनिज लवण

भोजन के आवश्यक तत्वों में यह एक वर्ग है। शारीरिक अवस्था ठीक रखने का कार्य इसका है। उदाहरणार्थ– अस्थियों तथा दाँतों को मजबूत बनाये रखने के लिये कैल्शियम तथा फॉस्फोरस अनिवार्य हैं। हीमोग्लोबिन (रक्त कोशा में जीवन सत्व) की उत्पत्ति के लिए लोहा अनिवार्य खनिज है। इसकी अनुपस्थिति में शरीर अनुपयोगी बन जाता है। शरीर में आयोडिन के कुछ ही कण होते हैं परन्तु इसके अभाव में चुल्लिका ग्रन्थि रस-निर्माण कार्य में असमर्थ रहती है। सोडियम क्लोराइड के रूप में नमक भी आवश्यक है। यह शरीर के अम्लों में संतुलन रखता है। इसके बिना जीवन दुर्लभ है। परन्तु यह याद रखना चाहिये कि नमक की अधिक मात्रा से रक्तचाप बढ़ जाता है तथा पैरों और पूरे शरीर में सूजन आ जाती है। अतः उचित मात्रा में ही नमक का प्रयोग करना चाहिये। इन लवणों की उपस्थिति फल, हरी सब्जी (विशेषकर

ताजी एवं बिना पकाई हुई) तथा उसके छिलके में और छिलके के निचले प्रदेश में बहुत परिमाण में होती है।

(४) विटामिन

यह चतुर्थ और अंतिम वर्ग है। इनकी शरीर को अत्यधिक आवश्यकता होती है। ये शरीर के असंख्य रासायनिक परिवर्तनों के लिये उत्प्रेरक का काम करते हैं।

विटामिन ए

शरीर के समस्त महत्वपूर्ण अंगों के लिए यह आवश्यक है। यह चर्म को चिकना व स्वच्छ रखने में मदद करता है। नासिका की श्लेष्मा झिल्ली, वायु नलिका तथा गले को शक्तिशाली रखते हुये जुकाम तथा इस प्रदेश के अन्य दोषों से बचाव करता है। वृक्क, मूत्राशय तथा मूत्रनलिका और पाचन ग्रंथि पर अच्छा प्रभाव डालता है। अस्थियों एवं दाँतों के सामान्य विकास के लिये अनिवार्य है। इसकी अनुपस्थिति का प्रभाव कोशाओं पर पड़ता है। चमड़ी मोटी और खुरदुरी हो जाती है, आँखों की चमक तथा उनकी क्रियाशीलता कम हो जाती है। शरीर अधिकांशतः एवं सरलतापूर्वक स्पर्शदोष का शिकार हो जाता है।

इस विटामिन के सर्वोत्तम स्रोत ये हैं–मक्खन, घी, ताजा दूध, अंडे का पीला भाग, पत्तेदार सब्जियाँ, गाजर-मूली, फल तथा अन्य सब्जियाँ।

विटामिन बी

इसमें एक दर्जन से भी अधिक भोजन तत्वों का योग रहता है। कुछ की आवश्यकता कोशाओं में शक्ति पहुँचाने के लिये होती है। शेष लाल रक्त-कोशाओं के निर्माण के लिये अनिवार्य हैं। महत्वपूर्ण भोजन तत्व में से एक विटामिन बी/१ (thiamine) है। इसका सम्बन्ध स्नायुओं एवं नाड़ियों से है। इसके बिना कोई कार्य नहीं हो सकता। कोशा में यदि इसका अभाव हो तो कार्बोज का उपयोग नहीं किया जा सकता। इसकी अनुपस्थिति में नाड़ी संस्थान कार्य नहीं कर सकता, शरीर में दर्द हो जाता है, नाड़ी-दोष आ जाते हैं, भूख की कमी हो जाती है एवं पांडुरोग तथा बेरीबेरी रोग उत्पन्न हो सकते हैं।

दूसरा महत्वपूर्ण भोजन तत्व विटामिन बी/२ (riboflavin) है। इसकी आवश्यकता भोजन को पचाने वाले पाचक रस के लिये है। भोजन के पाचन में

सहायक 'नियासिन' (niacin) के लिये भी इसकी अनिवार्यता है।

सब प्रकार के विटामिन 'बी' की प्राप्ति खाने योग्य अन्न, ताजे फल, अंडे, साग-सब्जी, सेम, मटर तथा मसूर दाल आदि में होती है। स्वच्छ किया गया आटा, स्टार्च, श्वेत शर्करा, पालिश किये चावल आदि भोज्य पदार्थों में इसकी प्राप्ति नहीं होती।

विटामिन सी

यह शरीर को सर्वाधिक रूप से स्वस्थ रखने वाला भोजन तत्व है। रोग-निवारण हेतु शरीर को इसकी आवश्यकता होती है। इसके कुछ अन्य कार्य भी हैं जैसे–कोशे की उत्पत्ति में सहायता देना, छोटी रक्त नलिकाओं की दीवारों को स्थायित्व प्रदान करना तथा पाचन प्रदेश से लोहे के अभिशोषण में मदद करना।

इसकी प्राप्ति की वस्तुयें संतरा, नीबू, अंगूर, टमाटर, सभी ताजे फल, आलू एवं पत्तेदार सब्जियाँ हैं।

विटामिन डी

शक्तिशाली व मजबूत हड्डियों के विकास के लिये यह भोजन तत्व अनिवार्य है। इसका प्रमुख कार्य कैल्शियम तथा फास्फोरस की शक्ति की तीव्रता को बनाये रखना है। इसकी कमी से 'रिकेट' नामक बीमारी होती है जिसमें हड्डियाँ नरम तथा दुर्बल हो जाती हैं।

अंडे, दूध तथा सूर्य-स्नान (शरीर के स्वाभाविक चर्म-तेल पर सूर्य किरण पहुँचाना) द्वारा इस तत्व की प्राप्ति की जा सकती है। सूर्य की किरणों द्वारा शरीर स्वतः विटामिन 'डी' उत्पन्न करता है।

विटामिन इ

यह स्नायविक कार्यों तथा प्रजनन क्रियाओं को प्रभावित करता है। समस्त अन्न, हरी तरकारी, नारियल तेल तथा अन्य वनस्पति तेलों में यह प्राप्त होता है।

विटामिन के

रक्त की जमाव प्रक्रिया के लिये यह आवश्यक है, अन्यथा पांडु-रोग हो जाता है। यकृत के कार्यों में मदद देता है। टमाटर एवं ताजी वनस्पतियों में यह प्राप्त होता है।

सारांश

भोजन में महत्वपूर्ण सभी मूल तत्व यदि न्यून मात्रा में भी उपस्थित हों तो स्वस्थ शरीर अपनी आवश्यकतानुसार उन्हें एक तत्व से दूसरे तत्व में परिवर्तन करने की महान क्षमता रखता है। यौगिक अभ्यास, विशेषकर सूर्य नमस्कार एवं प्राणायाम शरीर की इस क्षमता में वृद्धि करते हैं। इस क्रिया में नियंत्रण-प्राप्ति के उपरांत योगी सामान्य भोजन ग्रहण करते हुये स्वस्थ जीवन बिता सकता है, क्योंकि आवश्यकतानुसार भोजन का विभिन्न तत्वों में परिवर्तन आंतरिक रूप से होता रहता है।

श्वसन संस्थान

पृथ्वी के सजीव प्राणियों की प्रथम आवश्यकता है–'ओषजन वायु।' इसके बिना कोई जीवित नहीं रह सकता। बिना श्वसन के शरीर की कोशायें नष्ट हो जायेंगी, अर्थात् निर्जीव हो जायेंगी। रक्त द्वारा उन्हें ओषजन प्राप्त होती है एवं कोशाओं की कार्बन द्वि ओषिद इसी माध्यम से शरीर से निष्कासित होती है। बाह्य वायु की ओषजन को कोशाओं तक पहुँचाना एवं कार्बन द्वि ओषिद को बाहर निकालना ही श्वसन क्रिया है। वास्तविक ओषजन का उपयोग फेफड़ों में नहीं, वरन् धमनियों एवं कोशाओं में होता है। जीवित कोशाओं के भीतर अविरल रूप से ओषजन का उपयोग या उसकी दाह-क्रिया होती रहती है। इस क्रिया को ओषिदीकरण या उपयुक्त 'जीवन ज्वाला' कहते हैं क्योंकि पदार्थों की ज्वलन क्रिया वैसी ही होती है, जैसी कि खुली हवा में होती है।

ओषजन के नियमित प्रवाह के लिये शरीर में अनुकूल नलिका की आवश्यकता हैं। इसे श्वास नलिका कहते हैं। वायु बाहर भेजने एवं भीतर खींचने के लिये विशेष यंत्र-रचना आवश्यक है। हृदय एवं उदर के प्रसारण एवं संकुचन से वायु का मंद प्रवाह भीतर-बाहर बना रहता है।

श्वास नलिका का प्रारंभ स्वर यंत्र से होता है। हृदय के पास इसकी दो शाखायें हो जाती हैं। एक शाखा दाहिने फेफड़े को तथा दूसरी शाखा बायें फेफड़े को जाती है। इन्हें श्वास-वाहिनियाँ कहते हैं। प्रत्येक श्वास वाहिनी की शाखायें एवं उपशाखायें हो जाती हैं जिन्हें वायु वाहिनियाँ कहते हैं।

अपेक्षाकृत सूक्ष्म नलिकाओं (alveoli) से निर्मित वायुकोशों में इन्हीं वाहिनियों द्वारा वायुं पहुँचायी जाती है। वायुकोश अति सूक्ष्म होते हैं जो सूक्ष्मदर्शी यंत्र द्वारा ही देखे जा सकते हैं। इनकी आकृति मधुमक्खी के छत्ते की भाँति होती है। वायु कोशायें पर्याप्त स्थान प्रदान करती हैं जिसमें से वायु का प्रवाह हो सकता है। यदि इनका फैलाव किया जाये तो वे एक हजार वर्ग फुट से भी अधिक स्थान घेर लेंगी जो कि शरीर के बाह्य चर्म के क्षेत्रफल से बीस गुना अधिक है।

प्रत्येक सूक्ष्म वायुकोशा केशवाहिनियों से अच्छी तरह ढँका होता है जो कि सबसे छोटी रक्त नलिकायें हैं। केशवाहिनियों की दीवारें इतनी पतली होती हैं कि इनमें ओषजन प्रवेश कर रक्त-संस्थान की रक्त-कोशाओं में पहुँच जाती है। ओषजन का संयोग लाल रक्त कोशाओं से होने पर नीला मिश्रित जामुनी रंग का रक्त चमकीले लाल रंग में परिवर्तित हो जाता है। तत्पश्चात् हृदय के द्वारा शरीर के विभिन्न अंगों में ओषजन का वितरण होता है। साथ ही कार्बन द्वि ओषिद का प्रवाह रक्त से वायु कोशाओं में होता है तथा प्रश्वास द्वारा फेफड़ों एवं शरीर के बाहर हो जाता है।

सामान्यतः हम एक मिनट में १५ बार श्वास लेते हैं। प्रत्येक श्वास द्वारा लगभग आधा लीटर वायु ग्रहण की जाती है। फेफड़े साधारणतः तीन लीटर वायु रखने में समर्थ होते हैं। प्रत्येक श्वसन में ली गई वायु का अदल-बदल किया जाता है। कठिन व्यायाम के समय भी यह मात्रा बढ़ जाती है।

श्वसन क्रिया दो विधियों से होती है–

(अ) पसलियों का बाहर व ऊपर की ओर विस्तार।

(ब) उदर की ऊपरी दीवार का बाहरी विकास।

इससे श्वसन पटल का खिंचाव नीचे की ओर होता है।

उपरोक्त दोनों गतिविधियों के कारण हृदय-गह्वर का विस्तार होता है। उसी क्षण फेफड़े इसका अनुकरण करते हैं। दीर्घ श्वास के समय यह गति तीव्र हो जाती है। फलतः हृदय-गुहा का आयतन बढ़ जाता है। यही क्रिया फेफड़ों में होती है। परिणामतः अधिक वायु का प्रवेश फेफड़ों में होता है। वायु का परिमाण लगभग दो लीटर होता है जो सामान्य से अधिक है।

पसलियों के पिंजरे या हृदय गुहा एवं उदर का अधिकतम आकुंचन कर दीर्घ प्रश्वास क्रिया की जा सकती है। इससे अतिरिक्त मात्रा में वायु का

निकास होता है। यह मात्रा लगभग एक लीटर होती है दीर्घ श्वसन में वायु की कुल मात्रा ४ लीटर या अधिक हो सकती है जबकि सामान्य श्वसन में इसका परिमाण लगभग आधा लीटर ही होता है। अधिकतम दीर्घ रेचक के उपरान्त भी फेफड़ों में कुछ वायु शेष रह जाती है। इसकी मात्रा लगभग आधा लीटर होती है।

केन्द्रीय नाड़ी संस्थान श्वसन क्रिया के लिये उत्तरदायी है। यह स्वाभाविक क्रिया है तथापि दीर्घ श्वसन या कुम्भक के समय इसे चेतन रूप से इच्छानुकूल कर सकते हैं।

फेफड़ों की आकृति उस वक्षस्थल की भाँति ही होती है जिसमें वे स्थिर रहते हैं। वक्षस्थल की आकृति शंक्वाकार अर्थात् नीचे चौड़ी एवं ऊपर सँकरी होती है। वक्षस्थल की सतह का निर्माण श्वास-पटल से होता है जो गुम्बज की आकृति की स्नायविक-रचना है। इसका श्वास क्रिया में बहुत महत्व है।

दोनों फेफड़े हृदय द्वारा अलग किये जाते हैं। इनका संबंध हृदय एवं श्वासनलिका के मूल से है। प्रत्येक फेफड़ा अपने कार्यों में स्वतंत्र है। ये कक्षा या विभागों में विभाजित होते हैं। दाहिना फेफड़ा तीन भागों में विभक्त है। बायें फेफड़े के दो उपविभाग हैं। इसकी आंतरिक सतह पर नर्म तथा चिकनी झिल्ली का आवरण होता है जिसे फुस्फुसावरण (plcura) कहते हैं। ऐसा ही आवरण श्वास-पटल के साथ फुस्फुस या फेफड़े के बाहरी ओर अर्थात वक्षस्थल की आंतरिक सतह पर भी होता है। चिकनाहट प्रदान करने वाले विशेष द्रव द्वारा फुस्फुसावरण को नम रखा जाता है। फेफड़ों के विस्तार तथा हृदय और उसके संकुचन की क्रिया इसी के परिणामस्वरूप होती है।

वायु अधिकतर शुष्क तथा बहुत शीतल होती है। अतः फेफड़ों में पहुँचने के पूर्व श्वास द्वारा ली गई वायु में परिवर्तन करना आवश्यक है, अन्यथा फेफड़ों के पेशी-जाल शीघ्र ही शुष्क हो जायेंगे। वातावरण की वायु में धुआँ, धूल-कण एवं कीटाणु मिश्रित होते हैं। इसीलिये फेफड़ों में वायु-प्रवेश के पूर्व अशुद्धियों का निवारण होना चाहिये। विपरीत स्थिति से शीघ्र ही फेफड़े में रोग का आक्रमण हो जायेगा; गंदगी एवं धूलकणों से वह भर जायेगा। इस खतरे से बचने के लिये शरीर में नियमबद्ध वायु-शुद्धिकरण की प्रणाली है। यह प्रक्रिया नासिका से प्रारम्भ होती है। नासिका में केश हैं जिनका रुख बाहर की ओर है। ये बाल वायु को छानकर धूल-कण को एक बड़े पैमाने में भीतर जाने से रोक देते हैं। नासिका का भीतरी भाग वायु को नमी एवं गर्मी प्रदान करता

है। नासिका में अस्थि की विशेष रचना है। इस पर एक मोटे स्पंज के समान नरम लचीली श्लेष्मिक झिल्ली का आवरण है जहाँ से बड़े पैमाने में रक्त-संचार होता है। नासिका पेशी जालों पर से बहने वाली वायु गर्म एवं नम हो जाती है। उसका तापमान शरीर के योग्य हो जाता है।

नासिका के अग्र भाग में बहुत अधिक केशों के होते हुए भी कुछ धूल कणों का प्रवेश हो ही जाता है। कष्ट के इस कारण के निवारणार्थ समस्त श्वास नलिका में श्लेष्मिक झिल्ली तथा केश के समान रचना होती है जिसे सिलिया कहते हैं। इसके अलावा अनेक श्लेष्मिक ग्रंथियाँ होती हैं जिनके द्वारा पतला चिपकने वाला श्लेष्मा तैयार होता है जिसमें धूल-कण चिपक जाते हैं। सूक्ष्मदर्शी यंत्रों की सहायता से दिखने वाले सीलिया प्रति सेकेण्ड १३ बार सामने एवं पीछे की ओर गति करते हैं। इस क्रिया द्वारा श्लेष्मा ऊपर गले में पहुँच जाता है और यहाँ निगल लिया जाता है। अतः यदि जीवाणु शेष हों तो जठर में उपस्थित हाइड्रोक्लोरिक एसिड तथा पाचक रसों के कारण शरीर से हट जाते हैं।

खाँसने की क्रिया श्वास की एक महत्वपूर्ण रक्षक प्रक्रिया है। खाँसी केवल एक वायु-वेग है जो श्वसन-स्थलों के अवरोधों को दूर करता है।

पाठकगण अब इस तथ्य पर मूल्यांकन करेंगे कि जीवन के अधिकांश समय में हम स्वाभाविक रूप से श्वास क्रिया करते रहते हैं, लेकिन उसकी क्रियाओं पर चेतना नहीं रहती। किन्तु शरीर में श्वास प्रणाली बहुत महत्वपूर्ण एवं जटिल है। नासिका के साथ उदर एवं हृदय तक भी श्वास अनिवार्य है। अधिकांश व्यक्ति छोटी श्वास लेते हैं एवं श्वास दर भी अधिक होती है। विधिपूर्वक श्वास लेने से श्वसन-संस्थान पूर्ण क्षमता से कार्य करता है तथा शारीरिक जीवन के लिये ओषजन की पर्याप्त मात्रा प्रदान करता है।

हृदय एवं रक्त-परिवहन संस्थान

मानवीय शरीर की समस्त क्रियाओं में 'धड़कन' की क्रिया प्रमुख है। इसका केन्द्र हृदय है। शरीर के सभी अंगों के कार्यों का यही आधार है, इसमें कोई संदेह नहीं। हृदय का कार्य रुक जाने पर सभी अंगों के कार्यों में विराम आ जाता है । विश्राम की अवधि में हृदय-गति शान्त एवं मंद होती है तथा संचित शक्ति का प्रयोग आवश्यकतानुसार विषम परिस्थितियों में होता है। विशेष परिस्थिति की उत्पत्ति पर हृदय की धड़कन में तुरंत वृद्धि हो जाती है

तथा उन अंगों की रक्त-संचार क्रिया में तीव्रता आ जाती है जिन्हें अतिरिक्त रक्त की आवश्यकता होती है।

हृदय एक सक्षम स्नायविक पिचकारी है। उसकी स्नायविक दीवारों पर स्थित रेशाओं पर उसकी क्षमता निर्भर होती है। कभी इसमें विकार होने पर इन रेशाओं द्वारा अभिसरण क्रिया में अद्‌भुत परिवर्तन किया जाता है। रक्त के आयतन एवं दाब पर अनेक बातों का प्रभाव पड़ता है। इसके अन्तर्गत हृदय-द्वारों की अवस्था, नाड़ी संस्थान द्वारा आन्तरिक व्यास का नियन्त्रण या रक्त नलिकाओं के रन्ध्र प्रवाह में रक्त की मात्रा सम्मिलित है। ये सभी महत्वपूर्ण हैं परन्तु हृदय के स्नायुओं की स्थिति प्राथमिक रूप से सम्बन्धित है।

हृदय विकारों का सर्वसाधारण कारण विपरीत अवस्था एवं लापरवाही है। अनेक व्यक्ति अधिक भोजन ग्रहण करते हैं परन्तु व्यायाम नहीं करते। कुछ अन्य व्यक्ति हमेशा संवेदनात्मक तनावों की स्थिति में रहते हैं तथा पर्याप्त विश्राम नहीं लेते। ये दोनों परिस्थितियाँ शरीर को दुर्बल कर देती हैं तथा सामान्य रक्ताभिसरण में अवरोध उत्पन्न करती है। धमनियाँ (हृदय से केशिकाओं को रक्त पहुँचाने वाली सबसे बड़ी रक्त नलिका) कड़ी हो जाती हैं जिससे उनके लचीले पेशीजालों की दीवारों की नम्यता नष्ट हो जाती है। इससे धमनियों में सिकुड़न आ जाती है, रक्तचाप में वृद्धि हो जाती है; फलतः हृदय की क्रिया में वृद्धि होती है। शरीर के अन्य स्नायुओं की तुलना में इसकी कार्यक्षमता अधिक लम्बी अवधि तक बनी रहती है। यह अति आवश्यक भी है क्योंकि हृदय सबसे अधिक श्रम तथा मेहनत का कार्य करता है।

आंतरिक रूप से हृदय के चार विभाग होते हैं। रक्त फेफड़ों से आता है। इसमें प्रचुर मात्रा में ऑक्सीजन मिश्रित होती है जिसका विभाजन समस्त शरीर में किया जाता है। रक्त का प्रवेश बायें ग्राहक-कोष्ठ में होता है। यहाँ से वह बायें क्षेपक कोष्ठ में पहुँचता है। इसी पर अधिकांशतः रक्त-प्रवाह निर्भर है। बायें क्षेपक कोष्ठ के संकोचन के परिणामस्वरूप मध्यवर्ती पर्दा बन्द हो जाता है। इसी द्वार से बायें ग्राहक एवं क्षेपक कोष्ठों के मध्य सम्पर्क स्थापित होता है। इसी समय महाधमनी का द्वार खुल जाता है और इस प्रमुख धमनी से रक्त शरीर की अन्य धमनियों में पहुँच जाता है।

शरीर की सभी प्रमुख धमनियाँ महाधमनी की ही शाखायें हैं। प्रमुख एवं सबसे बड़ी शाखायें हृदय-धमनियाँ कहलाती हैं। ये दो हैं। एक बायीं तथा दूसरी दाहिनी ओर रक्त प्रदान करती है। ये बहुत ही महत्व की हैं क्योंकि यदि

किसी एक का कार्य भी नियम-भंग करता है तो समस्त अभिसरण-क्रिया असफल हो जाती है। इनकी लम्बाई पाँच इंच तथा व्यास एक इंच का आठवाँ भाग होता है। चौड़ाई में छोटी होने पर भी इनकी जिम्मेदारियाँ बहुत बड़ी हैं। हृदय में स्थित अपेक्षाकृत छोटी रक्त नलिकाओं या वाहिनियों को इनके द्वारा रक्त पहुँचाया जाता है जो कि हृदय में स्थित स्नायविक रेशाओं का पोषण रक्त द्वारा करती हैं। सामान्य स्वस्थ व्यक्तियों में इन नलिकाओं में पर्याप्त रक्त-संचार होता है जिससे हृदय की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। कभी-कभी धमनियों की दीवारों में दोष उत्पन्न हो जाता है। रक्त नलिकाओं की दीवारों के इस दोष को आर्थरोस्केलेरॉसिस (artherosclerosis) कहते हैं। इस दोष का कारण प्राणी-चर्बी, धूम्रपान और अत्यधिक तनाव है। योगाभ्यास द्वारा जीवन के तनावों को दूर कर इस दोष का निरोध एवं निराकरण किया जा सकता है। अप्रत्यक्ष रूप से यह अभ्यास धूम्रपान आदि को निरुत्साहित कर हमारे आहार में सुधार लाता है।

प्रश्न है कि दाहिना ग्राहक एवं क्षेपक कोष्ठ क्या कार्य करते हैं। बायें ग्राहक एवं क्षेपक कोष्ठ की भाँति ही इनकी भी कार्य-प्रणाली है। अंतर यही है कि इनके द्वारा ओषजन-रहित रक्त का प्रवाह होता है। प्रचुर मात्रा में कार्बन द्वि ओषिद मिला हुआ यह रक्त फेफड़ों में भेजा जाता है। इस प्रकार शरीर की कोशाओं में ओषजन को जमाकर रक्त वापस हृदय के दाहिने भाग में पहुँचता है। यहाँ से उसका प्रवाह फेफड़ों में होता है जहाँ कार्बन द्वि ओषिद का त्याग कर तथा नवीन ओषजन वायु को ग्रहण कर वह वापस हृदय के बायीं ओर पहुँच जाता है। वहाँ से उसे पूर्वतः शरीर की कोशाओं में पहुँचाया जाता है।

प्रतिदिन हृदय-गति जितना कार्य करती है, उस पर सहज ही विश्वास नहीं किया जा सकता। हृदय की धड़कन प्रति मिनट औसत रूप से ७० बार होती है। छोटी गणना से ही ज्ञात होता है कि एक दिन में लगभग एक लाख बार हृदय का संकोचन होता है एवं एक वर्ष में इसकी संख्या ३६५ लाख होती है। ७० वर्ष की औसत उम्र में हृदय की धड़कन की कुल संख्या लगभग २.५ अरब होती है। मनुष्य द्वारा निर्मित किसी भी यन्त्र में इतनी कार्यक्षमता नहीं है।

यदि रोगों के कारण उसकी कोई क्षति होती है तो काम करते हुए वह क्षति-पूर्ति कर लेता है। यदि वात, ज्वर आदि बीमारियों से उसके द्वार स्थूल हो जाते हैं तो विकारों से बचने के लिये तथा कमी-पूर्ति हेतु यह अंग अपनी स्नायविक दीवारों को भी मोटा कर देता है। गंभीर बीमारी में तनाव की

स्थिति में इसकी क्रिया सामान्य से दुगुनी या तिगुनी हो जाती है जिससे शरीर को स्वस्थ होने में सहायता मिलती है।

हृदय-गति की दर विशेष पेशीजालों से बनी एक छोटी रचना (pacemaker) द्वारा नियंत्रित रहती है। इसकी स्थिति हृदय के दाहिने बाजू में ऊपर की ओर होती है। यह रचना रेडियो के एक छोटे प्रेषक की भाँति है जिसके द्वारा हृदय के ऊपरी कोष्ठों को संदेश भेजा जाता है। यहाँ से यह संदेश संपूर्ण स्नायविक तंतुओं में प्रसारित किया जाता है। अतः हृदय की गति इस विशेष रचना के प्रभावों से नियंत्रित रहती है। शरीर के किसी भी अंग-विशेष की आवश्यकताओं का शासन इस रचना द्वारा होता है। किसी भी समय अंगों की आवश्यकता उसे प्रभावित कर सकती है।

सम्पूर्ण शरीर में रक्त-संचार की क्रिया छोटी नलिकाओं की बृहत जालीदार रचनाओं द्वारा होती है। ये नलिकायें इतनी सूक्ष्म होती हैं कि उनमें से अधिकांश को बिना यंत्र के नहीं देखा जा सकता। यदि प्रत्येक के सिरे को एक-दूसरे से जोड़ा जाये तो ये इतनी लम्बी हो जायेंगी कि इन्हें पृथ्वी के चारों ओर दो बार लपेटा जा सकता है।

शरीर में कुछ अन्य नलिकायें भी हैं जिन्हें धमनियाँ कहते हैं। इनकी लम्बाई बहुत अधिक नहीं होती। ये अनेक शाखाओं तथा उपशाखाओं में विभाजित रहती हैं। इनकी सूक्ष्मतम उप-शाखाओं को केशवाहिनियाँ कहते हैं।

अभिसरण-क्रिया का प्रारम्भ हृदय से होता है। यहाँ से रक्त धमनियों द्वारा केशवाहिनियों में भेजा जाता है। इस प्रकार जीवनदायक ओषजन-वायुयुक्त रक्त-शरीर की प्रत्येक कोशा को पहुँचाया जाता है। तीव्र संकोचन की प्रत्येक क्रिया के उपरांत हृदय शिथिल या प्रसारित होता है तथा क्षणिक विश्रान्ति लेता है। इसी अवधि में महाधमनी का द्वार बंद हो जाता है और रक्त की तीव्र धारा का प्रवाह महाधमनी से दूसरी धमनियों में होता है। धमनियों की दीवारें लचीली होती हैं। अतः इनमें से होकर जब रक्त-प्रवाह छोटी रक्त वाहिनियों में जाता है, तब ये अपना विस्तार कर लेती हैं। अपनी कलाई पर धीरे से अंगुलियों को रख कर इस नाड़ी-तरंग का अनुभव किया जा सकता है।

रक्त की संचार-क्रिया अविरल बनाये रखने के लिये उसका प्रवाह निश्चित मात्रा के दाब पर होना आवश्यक है। हृदय के द्वारा इस नियम का उल्लंघन होने पर समस्त रक्त का जमाव पैरों में हो जायेगा तथा मस्तिष्क में वह कभी भी नहीं पहुँच सकेगा।

धमनियाँ हृदय से अलग हैं, अतः वे कभी भी विश्रांति नहीं लेतीं। इनमें सदैव तनाव रहता है। हृदय के आकुंचन-काल में धमनियों में दाब बढ़कर पारे के एक सौ बीस मिलीमीटर दबाव के बराबर या इससे भी अधिक हो जाता है। हृदय के लघु विश्रांति-काल में दाब घटकर सत्तर या अस्सी हो जाता है। यह दाब हृदय के द्वितीय स्पंदन तक रहता है। तत्पश्चात् पुनः एक सौ बीस हो जाता है। निम्नतर प्रसरणकालीन दाब बहुत महत्वपूर्ण है। यदि यह दाब अधिक हो तो वह उच्च रक्तचाप या उच्च तनाव की प्रारंभिक अवस्था का सूचक है। रक्तचाप पर कई बातों का प्रभाव पड़ता है। इस पर संवेदनात्मक स्थिति का बहुत अधिक असर पड़ता है। क्रोध और भय की स्थिति में रक्तदाब या रक्तचाप सामान्य से बहुत ऊँचा हो जाता है। भोजन ग्रहण-क्रिया से रक्तचाप कुछ उच्च हो सकता है। शुद्ध व्यायाम भी रक्तचाप में वृद्धि करते हैं। विश्राम की स्थिति में रक्तचाप सामान्य हो जाता है। इस प्रकार प्रतिदिन इसमें उतार-चढ़ाव होता रहता है।

शरीर की कुछ आंतरिक रचनायें रक्तदाब को नियंत्रित करती हैं। उपवृक्कीय ग्रंथि शक्तिशाली रस (adrenalin) का निर्माण करती है। यह रासायनिक पदार्थ छोटी रक्त वाहिनियों का आकुंचन करता है जो कि रक्तचाप का कारण है। जबड़ों के धरातल के कुछ नीचे गले में स्थित ग्रीवा-कुहर नामक दो छोटे अंग रक्त के दाब तथा उसके प्रवाह पर नियंत्रण रखते हैं। यदि रक्तदाब निम्न होने लगता है तो इनके द्वारा संकेत मस्तिष्क में भेज कर सचेत कर दिया जाता है। फलतः तुरंत ही यह केशिकाओं को संकुचित होने का आदेश प्रसारित करता है और रक्तचाप पुनः उच्च हो जाता है। यदि उच्च रक्तचाप की स्थिति हो तो विपरीत क्रिया होती है, अर्थात केशिकाओं के प्रसारण से रक्तदाब को न्यून किया जाता है। अतः शरीर की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अभिसरण की क्रिया विधिवत् होती है। इस उद्देश्य से उपरोक्त प्रक्रिया अविराम चलती रहती है।

अनेक व्यक्ति उच्च रक्तचाप से पीड़ित रहते हैं। इस उच्च रक्तचाप का कारण क्या है? इसके अनेक कारण हो सकते हैं। लगातार श्रम तथा तनाव इसका प्रमुख कारण है। जीवन के सामान्य उतार-चढ़ाव का प्रभाव कुछ लोगों पर असाधारण रूप से पड़ता है। घबराहट की स्थिति के परिणामस्वरूप कोशिकाओं में बहुत अधिक संकोचन होता है। यदि सदैव यही मानसिक स्थिति रही तो उच्च रक्तचाप स्थायी हो जाता है। समस्या सामान्य या उच्च रक्तचाप की नहीं है परन्तु इस स्थिति के कारण मस्तिष्क हृदय, वृक्क, नेत्र

आदि अंगों को क्षति पहुँचती है। किसी प्रकार की घबराहट की स्थिति में व्यक्ति अधिकांशतः आवश्यकता से अधिक भोजन करता है। इससे वजन सीमा से अधिक बढ़ जाता है। इस प्रकार मोटापा नसों की कमजोरी या अन्य समस्याओं का विस्तृत रूप है।

योगाभ्यास तनाव दूर कर शान्ति प्रदान करता है; साथ ही नसों की कमजोरी या घबराहट दूर करता है जो कि उच्च रक्तचाप का मूल कारण है। इस प्रकार उच्च रक्तचाप से पीड़ित व्यक्तियों को योगाभ्यास निश्चित रूप से मदद करता है। अनेक योगाभ्यास उच्च रक्तचाप वाले व्यक्तियों के लिये वर्जित हैं परन्तु सामान्य व्यायाम की तरह अनेक अभ्यास किये जा सकते हैं। ये अभ्यास हृदय की गति में विशेष वृद्धि नहीं करते और न इनसे किसी प्रकार का खतरा है।

मस्तिष्क एवं नाड़ी - प्रणाली

मस्तिष्क असंख्य (करीब एक करोड़) नाड़ी-पेशियों या घटकों से निर्मित है। प्रत्येक के कार्यों में विभिन्नता होते हुये भी वे किसी न किसी रूप में एक-दूसरे से संबंधित हैं। मस्तिष्क बुद्धि का बहुत बड़ा केन्द्रीय माध्यम है। यह बहुत बड़े गणक की भाँति कार्य करता है। नेत्र, कर्ण शरीर, अंतःप्रदेश, स्नायु आदि के द्वारा यह बाह्य जगत के संदेशों को ग्रहण करता है। यह पूर्व अनुभव एवं अतीत की स्मृतियों के आधार पर किसी कार्य को करने की विधि या उसे न करने का निर्णय लेता है।

कोमल अंग होते हुए भी मस्तिष्क की क्षमता दीर्घकालीन होती है। इसे कभी विश्रान्ति नहीं मिलती। हृदय और फेफड़ों की भाँति इसकी क्रिया दिन-रात चलती रहती है। प्रति क्षण इसकी सजगता के बिना शरीर को ऐसी क्षति पहुँच सकती है जिसकी पूर्ति असंभव है। सभी स्वाभाविक क्रियाओं पर इसका नियंत्रण रहता है। इसकी गुप्त प्रक्रियाओं द्वारा यह निर्णय होता है कि कितनी बार स्वयं किस गति से हृदय में स्पंदन होना चाहिये। अन्य रचनायें पाचन क्रिया, वृक्क , अंतःस्रावी ग्रंथि तथा अन्य शारीरिक अंगों की क्रियाओं पर नियंत्रण रखती हैं।

सिर की आकृति या आकार द्वारा उसकी विचार-शक्ति का ज्ञान नहीं किया जा सकता। इस क्षेत्र में रक्ताभिसरण क्रिया बहुत महत्वपूर्ण है। मस्तिष्क के परिवहन में किसी प्रकार के अवरोध से विचार एवं तर्क शक्ति में दुखद

परिवर्तन होता है। यदि पूर्ण मस्तिष्क में अच्छी तरह रक्त-संचार हो तो विचार शक्ति पर उम्र का प्रभाव नहीं पड़ता। सदैव ध्यान रखिये कि मानव मस्तिष्क को प्रचुर मात्रा में ओषजन की आवश्यकता पड़ती है। आकृति में मस्तिष्क शरीर का पाँचवाँ भाग है परंतु उसके स्वास्थ्य के लिये हृदय से प्रवाहित कुल रक्त के पाँचवें भाग की ही नहीं वरन् अधिक रक्त की आवश्यकता पड़ती है। प्रत्येक नाड़ी या मस्तिष्क कोशा को अविराम गति से प्रचुर मात्रा में रक्त चाहिये। यदि इसे दो सेकेंड से अधिक देर भी रक्त न मिले तो इसका कार्य रुक जायेगा। पाँच मिनट तक रक्तरहित रहने से इसकी मृत्यु निश्चित है।

मस्तिष्क के प्रमुख तीन विभाग हैं – उच्च, मध्यम तथा निम्न। निम्नतम स्तर पर स्वाभाविक कार्य होते हैं। ये वे शक्तियाँ हैं जो हृदयगति, श्वास की दर एवं गहराई, शारीरिक ताप आदि पर नियंत्रण करती है। मध्यम मस्तिष्क गूढ़ बटनपट्ट (switch board) की भाँति कार्य करता है। यह समस्त शरीर से संदेश ग्रहण करता है, उन्हें क्रम से अलग करता है तथा अपेक्षाकृत उच्च स्तर को भेजता है। ऊपर का मस्तिष्क या सेरेबल कॉर्टेक्स (ccrcbal cortcx) इन संकेतों को ग्रहण कर उसके सूचनानुकूल कार्य करता है। इस मस्तिष्क-प्रदेश में ऐसी कोशायें होती हैं जो हमें चिन्तन एवं तर्क द्वारा उचित निर्णय की क्षमता प्रदान करती हैं।

मस्तिष्क की रचना दो प्रकार के नाड़ीय पेशीजालों से होती है। पहले को भूरा पदार्थ एवं दूसरे को श्वेत पदार्थ कहते हैं। भूरा पदार्थ नाड़ी कोशाओं से निर्मित होता है तथा श्वेत पदार्थ नाड़ी तन्तुओं का बना होता है। नाड़ी कोशाओं एवं नाड़ी तन्तुओं के योग से नाड़ी घटकों का संगठन होता है। नाड़ी कोशाओं एवं नाड़ी तन्तुओं में से किसी एक की मृत्यु से दूसरे की भी मृत्यु निश्चित होती है। नाड़ी तन्तुओं द्वारा नाड़ी-कोशाओं का परस्पर सम्बन्ध होता है। इसकी अनेक शाखाएँ-प्रशाखाएँ हैं जिनकी लम्बाई कुछ अवस्थाओं में २० इंच से भी अधिक हो सकती है। मस्तिष्क से बाहर आने वाले एवं भीतर जाने वाले नाड़ी-तन्तुओं की कुल संख्या २० करोड़ है। कोशाओं को अंत:रूपेण जोड़ने वाले तन्तुओं की संख्या अगणित या कल्पना से परे है। मस्तिष्क के प्रमुख विभागों का विवरण नीचे दिया जा रहा है –

सम्मुख प्रदेश

मस्तक के पीछे तथा मस्तिष्क के सामने उसके अग्र कोष्ठ हैं। इसे 'शान्त प्रदेश' कहते हैं। यहीं पर न्याय, नैतिकता, सत्य, ईमानदारी तथा भले-बुरे का ज्ञान स्थित होता है। इस प्रदेश में किसी प्रकार की चोट लगने पर

या बीमारी के कारण व्यक्ति प्रत्येक कार्य के प्रति असावधान हो जाता है, मूल्यांकन की शक्ति का नाश हो जाता है या उसमें मानसिक चिन्ता, निराशा एवं सन्देह की उत्पत्ति हो जाती है। यह हमारे व्यक्तित्व का केन्द्र बिन्दु है। ये चित्त-भ्रम या उन्मादों के कारण मस्तिष्क के अग्र प्रदेश में स्थित नाड़ी द्वारा पृष्ठ प्रदेश से थैलेमस तथा हाइपोथैलेमस पर पड़ने वाले प्रभाव हैं जहाँ पर निर्णयों को क्रियान्वित किया जाता है।

छोटा मस्तिष्क

इसकी स्थिति मस्तिष्क के पृष्ठ एवं निम्न प्रदेश में है। यह सम्पूर्ण शरीर के स्नायुओं में स्थित केन्द्रीय नाड़ियों में अखण्ड नाड़ी-प्रभाव की धारा विद्यमान रखता है और इस तरह स्नायुओं को स्वस्थ बनाये रखता है। उपरोक्त क्रिया से स्नायुओं में उचित संकोचन बना रहता है। यह स्नायुओं की गतिविधि में भी सम्बन्ध स्थापित करता है तथा साथ ही सम्पूर्ण शरीर की मांसपेशियों की गति में एकरूपता लाता है।

थैलेमस

मेरुदण्ड के शीर्ष प्रदेश में तथा मस्तिष्क के मध्य में इसकी स्थिति है। यह सन्देश प्रसारण करने वाला केन्द्र है। यहाँ से सन्देश मस्तिष्क के उच्च प्रदेशों में भेजे जाते हैं। यह वह क्षेत्र भी है जहाँ चेतना पर प्रथम ज्ञान (protopathic sense) की अनुभूति होती है। यह अपरिपक्व तथा प्राचीन प्रवृत्तियों का सूचक है जो उनके लक्षण, महत्व, अर्थ आदि का स्पष्टीकरण न करते हुए समस्त शरीरांगों के सुख-दुःख की सूचना देता है। अपेक्षाकृत अधिक संवेदनात्मक संकेतों को परिपक्व ज्ञान (epicritic) कहते हैं। ये अधिक लाक्षणिक होते हैं तथा सेरीब्रल कॉर्टेक्स में चेतना स्तर पर पहुँच जाते हैं।

हाइपोथैलेमस

थैलेमस का संबंध हाइपोथैलेमस से होता है। हमारी संवेदनात्मक स्थिति के लिये थैलेमस उसे नाड़ीय-प्रवाह प्रदान करता है। उच्च मस्तिष्क केन्द्रों के प्रभावों से मुक्त होकर जब हाइपोथैलेमस कार्य करता है, तब व्यक्ति क्रोधी, सुखी आदि बन जाता है जिसका कोई ज्ञात कारण नहीं होता। हाइपोथैलेमस के दो उपविभाग होते हैं – एक को पुरस्कार या सुख प्रदेश एवं दूसरे को दण्ड या दु:ख क्षेत्र कहते हैं। प्रथम क्षेत्र अपेक्षाकृत बड़ा होता है। अनुकंपी एवं परानुकंपी तन्त्रिका तन्त्रों का प्राथमिक केन्द्र भी यही है।

सजगता का केन्द्र अनुकंपी तन्त्रिकाओं से निर्मित है तथा इसकी स्थिति हाइपोथैलेमस के पृष्ठ -प्रदेश में है। परानुकम्पी तन्त्रिकाओं से रचित सुषुप्ति केन्द्र हाइपोथैलेमस के अग्र प्रदेश में स्थित है।

स्मृति

यह विश्वास किया जाता है कि स्मृतियों का संग्रह मस्तिष्क के निम्न प्रदेश के अग्र क्षेत्र के अन्तिम भाग में होता है। विद्युतीय या नाड़ीय उत्प्रेरणा द्वारा किसी विशेष बिन्दु को प्रदान कर अच्छी या खराब भूतकालिक स्मृतियों का स्मरण किया जा सकता है।

नाड़ी वाहिनियाँ

नाड़ी संस्थान के अंतर्गत केवल मस्तिष्क ही नहीं, वरन् मेरुदण्ड या पृष्ठवंश-रज्जु तथा उनकी शाखायें भी सम्मिलित हैं। ये शाखायें सम्पूर्ण शरीर में फैली हुई हैं। यह एक बृहत् दूरभाषीय यंत्र की तरह है। यहाँ से असंख्य सन्देश मस्तिष्क को एवं वहाँ से अन्य अंगों को भेजे जाते हैं। इस प्रकार शरीर के अंग एवं स्नायु मस्तिष्क से संबंधित होते हैं। कुछ सन्देश चेतना स्तर पर भेजे जाते हैं परन्तु अधिकांशतः ऐसा नहीं होता।

शरीर की इस आवागमन-प्रक्रिया के लिये विभिन्न प्रकार की नाड़ियों की आवश्यकता होती है। प्रथम वर्ग संवेदनावाहक नाड़ियों का है। ये हमारी शारीरिक अवस्था, दर्द व बाह्य वातावरण का ज्ञान कराती हैं। संवेदना प्रसारित करने वाली प्रत्येक नाड़ी को ग्राहक नाड़ियों की आवश्यकता पड़ती है। वस्तु, सुख-दुःख आदि का अनुभव विशेष नाड़ी-ज्ञान पर निर्भर रहता है जो अन्य संवेदना ग्रहण करने में असमर्थ होता है। संपूर्ण शरीर के चर्म पर एवं उसके भीतर ये संवेदनात्मक नाड़ियाँ एक-दूसरे के समीप स्थित रहती हैं। इनमें से होकर जाने वाले नाड़ी-प्रवाह मस्तिष्क में पहुँचते हैं। तत्पश्चात् यहाँ से ये ऐसे केन्द्रों को भेजे जाते हैं जो उस विशेष संवेदना को नियंत्रित करते हैं। भूतकाल के अनुभव के आधार पर उनका अर्थ स्पष्ट किया जाता है। निर्णय होने पर आज्ञा नाड़ी कहलाने वाली दूसरे वर्ग की नाड़ियाँ क्रियाशील हो जाती हैं। इनकी दिशा स्पष्टतः मस्तिष्क से स्नायुओं की ओर होती है तथा वे उन्हें गति एवं उसके समय का संदेश देती हैं। उदाहरणार्थ – किसी विशेष वस्तु की ओर हमारे नेत्र आकर्षित होते हैं। मान लीजिये वह कोई पुस्तक है। हम उसके विषय में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिये उत्सुक हो जाते हैं। संदेशों की श्रृंखला अंगुलियों के स्नायुओं, हाथों एवं

भुजाओं में पहुँचा दी जाती है। अतः ज्ञान एकत्रित करने के लिये हम पुस्तक के पन्ने पलटने लगते हैं।

पृष्ठवंश रज्जु

यह मेरुदण्ड में स्थित केन्द्रीय नाड़ी संस्थान का विस्तार है। इसकी लम्बाई १७ इंच होती है। मेरुदण्ड के शीर्ष प्रदेश की शिरोधास्थि से प्रारम्भ होकर यह कटि प्रदेश की द्वितीय कटिस्थ कशेरुका तक फैली हुई होती है। मेरुदण्ड की नाड़ियाँ दो भागों में विभाजित होती हैं। प्रथम है पृष्ठ मूल जो संवेदनात्मक नाड़ियाँ हैं। द्वितीय अग्र मूल या ज्ञान नाड़ियाँ हैं।

स्वयंचालित नाड़ी संस्थान

जागृत या सुषुप्तावस्था में नाड़ी संस्थान चैतन्य रहता है। यह हमारे जीवन संबंधी कार्यों पर निंगरानी रखता है तथा खतरे से हमारी रक्षा करता है। ये क्रियायें अधिकांशतः स्वचालित होती हैं। उन्हें एक क्षण के लिये भी विचार नहीं भेजा जाता। स्वयं चालित नाड़ी संस्थान हमारे लिये यह कार्य कर देता है। इस प्रणाली के अन्तर्गत अनुकम्पी एवं परानुकम्पी तंत्रिका तंत्र नामक दो विपरीत शक्तियाँ हैं।

व्यक्ति का बाह्य वातावरण से संबंध स्थापित करने वाले अंगों एवं स्नायुओं की क्रियाशीलता में वृद्धि करते हुये अनुकम्पी नाड़ी शरीर को बाह्य क्रियाओं के लिए तैयार करती है। परानुकम्पी नाड़ियाँ इसके लिए विपरीत कार्य करती हैं। शरीर की एकत्रित शक्ति का उपयोग करते हुये ये अंतरांगों को क्रियाशीलता प्रदान करती हैं।

इस प्रणाली की क्रिया प्रतिनिधि सरकार की भाँति है अर्थात् एक भाग दूसरे का विरोध करता है। शरीर के व्यवस्थित क्रिया-कलापों तथा सक्षम रूप से उपयुक्त क्रियाओं के लिये स्वयंचालित नाड़ी संस्थान के उपविभागों में उचित संबंध रहना अत्यावश्यक है।

मस्तिष्क एवं नाड़ी-प्रणाली की क्षमता

मस्तिष्क एवं नाड़ी संस्थान की क्षमता असीम है। सामान्य जीवन में मनुष्य अपनी इस शक्ति का बहुत कम अंश उपयोग में लाता है। मानसिक विक्षिप्तता की स्थितियों में यह मात्रा अपेक्षाकृत न्यून होती है। यह अनुभव किया गया है कि यदि मस्तिष्क को विभिन्न विधियों से कार्य के लिये उत्प्रेरित किया जाये तो कई नवीन वाहिनियाँ खुल जाती हैं। नाड़ियाँ उन सूखे जल

स्रोतों के समान हैं जो केवल पतली धारा को ही प्रवाहित कर सकती हैं परन्तु प्रयत्न द्वारा इनमें से अधिक प्रवाह किया जाये तो एक दिन वह ऐसी नदी का रूप ग्रहण कर लेती हैं जिसमें जल-प्रवाह की बहुत क्षमता होती है।

योगाभ्यास के अंतर्गत अनेक ऐसे अभ्यास हैं जो ऐसी नाड़ियों को क्रियाशील बनाते हैं जिनकी गणना जीवन में कभी नहीं थी। इस क्रिया से ऐसी नाड़ी-वाहिनियाँ खुल जाती हैं जिनका कभी उपयोग नहीं हुआ। अतः मस्तिष्क एवं नाड़ियों की क्षमता में वृद्धि होती है। योग की यह 'नाड़ी-शक्ति प्रदायिनी' (nerve toning) प्रक्रिया है।

चुनी हुई अभ्यास - क्रमावली

इस खण्ड में योग के ऐसे कार्यक्रमों का समावेश किया गया है जिनका चुनाव व्यक्ति समय, उम्र, अनुभव, तर्क आदि के आधार पर कर सकते हैं। अभ्यासों की उपयुक्तता का आधारभूत तत्व हजारों योगाभ्यासियों का अनुभव है। इन कार्यक्रमों को निर्देशन के रूप में ग्रहण करना चाहिए। सामान्य विवेक का सहारा लेकर इनमें कुछ अभ्यास घटाये या जोड़े जा सकते हैं।

विशेष बीमारी से पीड़ित व्यक्तियों को 'रोगों में योग-अभ्यास' खंड के आधार पर कार्यक्रम का चुनाव करना चाहिए। सभी परिस्थितियों में योग के उच्च अभ्यासियों के लिए यह निर्देश है कि वे प्रशिक्षित योग शिक्षक के सहयोग से आगे बढ़ें। योग शिक्षक स्वयं के अनुभव पर आधारित व्यक्तिगत निर्देश देंगे और ऐसा निर्देशन किसी भी पुस्तक से कभी भी प्राप्त नहीं किया जा सकता।

स्वास्थ्य-प्राप्ति हेतु एवं अशक्त व वयोवृद्धों के लिए

पवनमुक्तासन – भाग १ (अभ्यास ६ से १० तक छोड़कर), एकाग्रतापूर्वक व धीमी गति से।

शिथिलीकरण का आसन (कोई भी)।

लेटकर उदर द्वारा श्वसन (प्राणायाम की प्रस्तावना देखिये)।

उज्जायी प्राणायाम (आरामदायक स्थिति में)।

शीतली एवं शीतकारी प्राणायाम (बैठकर या लेटकर)।

उच्च अभ्यास, विशेषकर योगनिद्रा, अजपाजप और अन्तर्मौन का प्रतिदिन नियमित अभ्यास।

प्रारम्भिक अभ्यासियों के लिए

(क) संक्षिप्त कार्यक्रम (कड़े शरीर वालों के लिए)

पवनमुक्तासन – भाग १, शक्ति बंध के आसन, शवासन।

यौगिक श्वसन – (प्राणायाम की प्रस्तावना देखिये)।

(ख) अपेक्षाकृत विस्तृत कार्यक्रम

पवनमुक्तासन – भाग १ और २।
शक्ति बन्ध के आसन, वज्रासन, मार्जारि आसन, शवासन।

नाड़ी शोधन प्राणायाम (प्रथम एवं द्वितीय अवस्था), शीतली और शीतकारी प्राणायाम।

(ग) उच्च अभ्यास कार्यक्रम

सूर्य नमस्कार।

पवनमुक्तासन – भाग १ और २ (समयानुसार अंग-विशेष के शिथिलीकरण के लिए आवश्यक है)।

वज्रासन, शशांकासन, शशांक भुजंगासन, ताड़ासन, त्रिकोणासन, भुजंगासन, अर्ध शलभासन, सरल धनुरासन, पाद हस्तासन, मेरु वक्रासन, पूर्व हलासन, शवासन।

नाड़ी शोधन प्राणायाम – प्रथम एवं द्वितीय अवस्था, भ्रामरी प्राणायाम।

सामान्य पाठ्यक्रम

(क) संक्षिप्त व नियमित कार्यक्रम (प्रकारान्तर १)

सूर्य नमस्कार।

शशांकासन, उष्ट्रासन, भुजंगासन, शलभासन, धनुरासन, पश्चिमोत्तानासन, अर्ध मत्स्येन्द्रासन, एक पाद प्रणामासन, भूमि पाद मस्तकासन, शवासन।

नाड़ी शोधन प्राणायाम एवं मृदु भस्त्रिका प्राणायाम।

(ख) संक्षिप्त व नियमित कार्यक्रम (प्रकारान्तर २)

सूर्य नमस्कार।

शशांक भुजंगासन, त्रिकोणासन, योग मुद्रा आसन, मत्स्यासन, जानु शिरासन, परिवृत्ति जानुशिरासन, गरुड़ासन, मूर्धासन एवं शवासन।

नाड़ी शोधन प्राणायाम और मृदु भस्त्रिका प्राणायाम।

(ग) अपेक्षाकृत विस्तृत कार्यक्रम (प्रकारान्तर १)

सूर्य नमस्कार।

शशांकासन, सुप्त वज्रासन, ताड़ासन, उत्थित लोलासन, भुजंगासन, शलभासन, धनुरासन, पश्चिमोत्तानासन, कन्धरासन, अर्ध मत्स्येन्द्रासन, सर्वांगासन, हलासन, उष्ट्रासन तथा अंत में शवासन।
नाड़ी शोधन प्राणायाम (उच्च अभ्यास), भस्त्रिका प्राणायाम।

उड्डियान बंध।

योनि मुद्रा।

(घ) अपेक्षाकृत विस्तृत कार्यक्रम (प्रकारान्तर २)

सूर्य नमस्कार।

शशांक भुजंगासन, योग मुद्रा आसन, मत्स्यासन, ग्रीवासन, पश्चिमोत्तानासन, पृष्ठासन, पाद हस्तासन, धनुरासन, हंसासन, सर्वांगासन, हलासन और शीर्ष पादासन।

शवासन।

कार्यक्रम (ग) के अनुसार प्राणायाम, बंध एवं मुद्रा।

(च) व्यस्त व्यक्तियों के लिए संक्षिप्त व सम्पूर्ण कार्यक्रम

सूर्य नमस्कार।

पश्चिमोत्तानासन, भुजंगासन, शलभासन, धनुरासन, अर्ध मत्स्येन्द्रासन, सर्वांगासन, हलासन और मत्स्यासन।

शवासन – उज्जायी प्राणायाम के साथ।

उड्डियान बंध।

(छ) पाँच से तेरह वर्ष तक के बच्चों के लिए कार्यक्रम

सूर्य नमस्कार।

सिंहासन, ताड़ासन, बद्ध पद्मासन, लोलासन, पर्वतासन, चक्रासन, पाद हस्तासन पृष्ठासन, अर्ध मत्स्येन्द्रासन, धनुरासन, भुजंगासन, बक ध्यानासन, नटराज आसन, शवासन।

(ज) एकाग्रता-वृद्धि के इच्छुक व्यक्तियों के लिए कार्यक्रम

यह बताना आवश्यक है कि निम्न अभ्यास शरीर के अंग विशेष या श्वास पर एकाग्रता करते हुए करने चाहिए–

सूर्य नमस्कार (श्वास या चक्रों पर एकाग्रता के साथ)।

पादादिरासन (श्वास पर एकाग्रता), पृष्ठासन, एक पाद प्रणामासन, बक ध्यानासन, अर्ध पद्मपादोत्तानासन, शीर्षासन (तत्पश्चात् वृश्चिकासन)।
शवासन (श्वास पर चित्त की एकाग्रता के साथ)।

नाड़ी शोधन, भस्त्रिका एवं मूर्छा प्राणायाम।

भूचरी, विपरीतकरणी और नवमुखी मुद्रा।

त्राटक एवं उच्च ध्यानाभ्यास।

(झ) व्यस्त गृहिणियों के लिए कार्यक्रम

सूर्य नमस्कार।

पवनमुक्तासन– भाग २, वज्रासन, मार्जारि आसन, शशांक भुजंगासन, व्याघ्रासन, त्रिकोणासन, भुजंगासन, पाद हस्तासन और कंधरासन।

नाड़ी शोधन एवं भ्रामरी प्राणायाम।

(ट) ध्यानाभ्यास के लिए तैयार करने वाला कार्यक्रम

ध्यान के आसनों से पूर्व के अभ्यास।

आनन्द मदिरासन, ध्यान के किसी आसन का विस्तृत रूप, योगमुद्रा आसन। चक्रासन, पश्चिमोत्तानासन, सर्वांगासन, शीर्षासन और ताड़ासन। नाड़ी शोधन, भस्त्रिका, भ्रामरी व मूर्छा प्राणायाम।

मांडूकी मुद्रा, योग मुद्रा, महामुद्रा, महाबेध मुद्रा, नवमुखी मुद्रा एवं प्राण मुद्रा।

समयानुकूल त्राटक एवं ध्यानाभ्यास।

उच्च पाठ्यक्रम

(क) उच्च अभ्यासियों के लिए संक्षिप्त कार्यक्रम (प्रकारान्तर १)

सूर्य नमस्कार।

पर्वतासन, चक्रासन, पश्चिमोत्तानासन, अर्ध मत्स्येन्द्रासन (यदि संभव हो तो पूर्ण मत्स्येन्द्रासन), वशिष्ठासन, कूर्मासन, शीर्षासन एवं ताड़ासन।

शवासन।

नाड़ी शोधन और भस्त्रिका प्राणायाम।

महाबन्ध।

(ख) उच्च अभ्यासियों के लिए संक्षिप्त कार्यक्रम (प्रकारान्तर २)

सूर्य नमस्कार।

योगमुद्रा आसन, पृष्ठासन, पाद हस्तासन, परिवृत्ति जानुशिरासन, बक ध्यानासन, द्वि हस्त भुजंगासन, शीर्षासन (या समानार्थी आसन)।

ताड़ासन व शवासन।

नाड़ी शोधन एवं भस्त्रिका प्राणायाम।

महामुद्रा तथा महाबेध मुद्रा।

(ग) उच्च अभ्यासियों के लिए अपेक्षाकृत उच्च कार्यक्रम

सूर्य नमस्कार।

बद्ध पद्मासन, मत्स्यासन, जानु शिरासन, पाद प्रसार पश्चिमोत्तानासन, पश्चिमोत्तानासन, भुजंगासन, शलभासन, धनुरासन, अर्ध मत्स्येन्द्रासन, (या पूर्ण मत्स्येन्द्रासन), सर्वांगासन, हलासन, चक्रासन, वातायनासन, शीर्षासन (या निरालंब, सालम्ब शीर्षासन आदि), वृश्चिकासन, ताड़ासन, शवासन।

नाड़ी शोधन, भस्त्रिका, कपालभाति प्राणायाम।

महाबंध। महामुद्रा, महाबेध मुद्रा और प्राण मुद्रा।

(घ) प्रवीण अभ्यासियों के लिए विशेष कार्यक्रम

पूर्ण भुजंगासन, पूर्ण शलभासन, पूर्ण धनुरासन, द्वि पाद शिरासन, वृश्चिक-आसन, कूर्मासन, पूर्ण मत्स्येन्द्रासन, हनुमानासन, ब्रह्मचर्यासन, अष्ट वक्रासन, शीर्षासन (या प्रकारांतर), ताड़ासन।

शवासन।

नौलि व पाशिनी मुद्रा।

रोगों में योग-अभ्यास

अपचन : ताजे फल, हरी सब्जियाँ व अधिक जल के सेवन (कम से कम ५ गिलास प्रतिदिन) तथा प्रतिदिन निम्न योगाभ्यास करने से पुराना रोग भी दूर हो जाता है –

सूर्य नमस्कार, पवनमुक्तासन (अभ्यास १७ से २१), सुप्त वज्रासन, शशांकासन, उष्ट्रासन, त्रिकोणासन, ताड़ासन, योग मुद्रा आसन, मत्स्यासन, सामने तथा पीछे झुककर किये जाने वाले आसन (सभी), मेरुदण्ड को मोड़ने वाले आसन, हलासन, द्रुत हलासन, मयूरासन।

भोजनोपरान्त १० मिनट वज्रासन में बैठिये।
उड्डियान बंध, महाबंध, अश्विनी मुद्रा, अग्निसार क्रिया, नौलि, बस्ति।

निर्देशन में शंखप्रक्षालन।

प्रति दिन प्रातः लघु शंखप्रक्षालन किया जा सकता है। योगनिद्रा जैसे अभ्यास करने चाहिए जिनसे मानसिक शान्ति प्राप्त हो।

अल्सर (पेप्टिक और आमाशीय) : स्वयं को शांति प्रदान कीजिये, क्योंकि इसका कारण चिंता से मुक्ति न पाना या शिथिलीकरण में असफलता है।

दिन के किसी भी समय शिथिलीकरण का अभ्यास उत्तम है। शशांकासन तथा प्राणायाम जैसे – नाड़ी शोधन, शीतली, शीतकारी, भ्रामरी व मूर्छा। आकाशी मुद्रा, महामुद्रा, योनि मुद्रा एवं नवमुखी मुद्रा; त्राटक, अजपा जप, योगनिद्रा, अन्तर्मौन व अन्य शिथिलीकरण के अभ्यास।

सरलता से पचने वाले भोज्य पदार्थ जैसे – दूध के बने आहार, नर्म फल, द्रव या अर्द्ध द्रवीय पदार्थ लीजिये।

चाय, कॉफी, शराब, कच्ची तरकारी एवं भारी भोजन वर्जित हैं।

अपस्मार : तनाव एवं परेशानी दूर करने वाले सभी योगाभ्यास लाभप्रद हैं। 'चिन्ता' वंशानुगत होते हुए भी दूर की जा सकती है, यह हमारा अनुभव है।

असामर्थ्य : यह रस की कमी या किसी अंग की अव्यवस्था से नहीं वरन् संवेदनात्मक कारणों से उत्पन्न स्थिति है। रुचिपूर्वक योगाभ्यास करने से लाभ पहुँचता है। यदि कारण बाल्यावस्था का आघात है तो ध्यान का अभ्यास लाभप्रद होगा। इससे मूल कारण ही नष्ट हो जायेगा।

अनिद्रा : सीमा से अधिक क्रियाशीलता तथा शरीर एवं मन को शिथिल करने में असमर्थ होने पर यह स्थिति उत्पन्न होती है। 'चिंता' के लिए वर्णित अभ्यास देखिये। विशेष रूप से १५ मिनट 'त्राटक' एवं १५ मिनट 'योगनिद्रा' निद्रा के पूर्व कीजिये।

अशुद्ध रक्त : 'वृक्क' देखिये। यह रक्त शुद्धि करने वाला अंग है। सूर्य नमस्कार का अभ्यास थकावट आने तक कीजिए।

फल एवं नमकरहित भोजन लीजिये।

यौगिक कार्यक्रम प्रारम्भ करने के पूर्व शंखप्रक्षालन कीजिये।

अधिकतम तनाव : 'रक्तचाप' देखिये।

असाधारण निम्न तनाव : 'रक्तचाप' देखिये।
आँख : नेत्रों के अभ्यास का अध्याय देखिये।

आँत : 'उदर' देखिये।

आँव : शंखप्रक्षालन से दोनों प्रकार की आँव दूर हो जाती है।

अमाशय : 'उदर' देखिये।

अम्लीयता : 'उदर' देखिये। अनेक अभ्यास उपयोगी हो सकते हैं। आहार ग्रहण करने के बाद १० मिनट वज्रासन कीजिये। मानसिक शांति ('चिंता' में देखिये) के साथ नियंत्रित भोजन आवश्यक है।

आघात : 'नाड़ियों में रक्त का जमाव' देखिये।

उप चुल्लिका ग्रन्थि : 'चुल्लिका ग्रंथि' देखिये।

उपवृक्क ग्रन्थियाँ : (सामान्य स्वास्थ्य हेतु) सूर्य नमस्कार, मार्जारि आसन, शशांक भुजंगासन, उष्ट्रासन, त्रिकोणासन, पीछे झुकने वाले आसन – विशेषकर

धनुरासन, भुजंगासन, शलभासन और चक्रासन।

सामने झुकने वाले आसन विशेषतः – पश्चिमोत्तानासन, पाद हस्तासन, अर्ध मत्स्येन्द्रासन, पूर्ण मत्स्येन्द्रासन, हलासन, मेरुदंडासन, निरालंब पश्चिमोत्तानासन, हंसासन, मयूरासन, पाशिनी मुद्रा, द्वि पाद शिरासन; भस्त्रिका प्राणायाम, अग्निसार क्रिया, उड्डियान बंध, नौलि।

उदर : (सामान्य स्वास्थ्य एवं शक्ति प्राप्ति हेतु) उदर रोग के विस्तृत संदर्भ खंड में देखिये।

पवनमुक्तासन (अभ्यास १७ से २१), शक्ति बंध के आसन, सुप्त वज्रासन, शशांकासन, योग मुद्रा आसन, मत्स्यासन, तोलांगुलासन, कोई भी सामने या पीछे झुकने वाला आसन, अर्ध मत्स्येन्द्रासन, हलासन, द्रुत हलासन, मेरुदंडासन, निरालंब पश्चिमोत्तानासन, हंसासन, मयूरासन, ब्रह्मचर्यासन।

अग्निसार क्रिया, उड्डियान बंध, नौलि, शंखप्रक्षालन और कुंजल क्रिया।

उन्माद : 'चिंता' देखिये।

एकाग्रता : सभी योगाभ्यास उचित ढंग से करने चाहिए, विशेषकर सिर के बल किये जाने वाले संतुलन के आसन।

सभी प्राणायाम, विशेषतः नाड़ी शोधन, भस्त्रिका व उज्जायी।

एकाग्रतापूर्वक सभी मुद्राओं के अभ्यास।
'त्राटक' अपूर्व शक्तिशाली है।

ध्यान के लिए एकाग्रता अनिवार्य है तथा ध्यानाभ्यास से एकाग्रता में वृद्धि होती है।

एडिनायड्स ग्रन्थि (वृद्धि होना) : सिंहासन, नेति, उज्जायी प्राणायाम (खेचरी मुद्रा सहित), नेति।

कमर : (सामान्य स्वास्थ्य हेतु) प्रजनन अंगों के लिए दिये अभ्यास।

कमर दर्द : 'पीठ दर्द' देखिये।

कास रोग : दमा का ही कार्यक्रम उपयोगी है।

क्रोध : शशांकासन, योग मुद्रा आसन, पश्चिमोत्तानासन, गर्भासन, कूर्मासन; मूल बंध एवं महाबंध; नाड़ी शोधन, भ्रामरी, शीतली, शीतकारी, कपालभाति व उज्जायी प्राणायाम एवं माण्डूकी, भूचरी, आकाशी, पाशिनी, प्राण मुद्रा, महामुद्रा, योग मुद्रा, महाबेध मुद्रा, योनि मुद्रा एवं नवमुखी मुद्रा।

'ध्यान' एवं शिथिलीकरण के समस्त अभ्यास।

क्लोम ग्रन्थि : (सामान्य स्वास्थ्य) 'मधुमेह' के लिए स्वीकार्य आसन कीजिये।

कृमि : आँत को सभी प्रकार के कृमियों से मुक्त करने के लिए शंखप्रक्षालन लाभप्रद है। 'नौकासन' भी उपयुक्त है।

कंधे : 'हृदय' एवं 'भुजा' देखिये।

सामान्य कड़ेपन में पवनमुक्तासन १५, गोल कंधों में, विशेषकर बच्चों के लिए मकरासन का दीर्घकालीन अभ्यास, सुप्त वज्रासन, उष्ट्रासन, द्विकोणासन, बद्ध पद्मासन, सूर्य नमस्कार, पीछे झुकने वाले सभी आसन।

खाज : सम्पूर्ण शरीर में खुजलाहट के अनेक कारण हैं। रक्त की अशुद्धि प्रधान कारण है। नाड़ीय-तनाव भी प्रमुख कारणों में से एक है।

खुजली : 'खाज' की भाँति ही है।

गर्भाशय : 'जननांग' देखिये।

गर्भावस्था : 'जननांग' देखिये।

गर्भ-विकार : गर्भाशय के कमजोर स्नायुओं के कारण यह रोग होता है। 'जननांग' की व्यवस्था हेतु दिये गये आसन देखिए।

गर्भपात : 'गर्भ - विकार' देखिये।

ग्रीवा : (सामान्य स्वास्थ्य हेतु व दर्द की अवस्था में) पवनमुक्तासन - अभ्यास १६, सुप्त वज्रासन, मत्स्यासन, ग्रीवासन, कंधरासन, शीर्ष पादासन, मेरुदंड को मोड़ने वाले सभी आसन। यदि ग्रीवा अधिक कमजोर न हो तो सिर के बल किये जाने वाले आसनों का अभ्यास किया जा सकता है।

गंजापन : सिर के बल किये जाने वाले आसन, विशेषकर शीर्षासन या उसका कोई प्रकारांतर।

गुदाद्वार की नाड़ी या नस में रक्त की कमी (**hemorrhoids**) : 'बवासीर' देखिये।

गठिया रोग : वृक्क के लिए दिये गये अभ्यास देखिये। मांसाहार मत कीजिये। पर्याप्त जल ग्रहण कीजिये। पवनमुक्तासन - अभ्यास १ से १६ कीजिये।

गला : (खरखराहट तथा रोग - निवारण) पवनमुक्तासन - अभ्यास १६, सिंहासन, सुप्त वज्रासन तथा मत्स्यासन। (अधिक लाभ हेतु इन अभ्यासों के साथ उज्जायी, शीतली व शीतकारी प्राणायाम को किया जा सकता है)। सिर

के बल किये जाने वाले सामान्य आसन। उज्जायी, शीतली, शीतकारी प्राणायाम का अधिकतम अभ्यास। नेति एवं कुंजल।

घबराहट : 'चिंता' देखिये।

चर्म : 'खाज' तथा 'खुजली' देखिये।

चर्बी का जमाव : चर्बी दूर करने के लिए साधारणतः सभी आसन उपयोगी हैं। विशेष लाभप्रद अभ्यास सूर्य नमस्कार, गत्यात्मक पाद हस्तासन, द्रुत हलासन, सिर के बल किये जाने वाले आसन तथा प्राणायाम का उच्च अभ्यास हैं।

यदि मोटापा चुल्लिका ग्रंथि के कारण हो तो 'चुल्लिका ग्रंथि' देखिये। विशेष स्थान पर चर्बी का जमाव हो तो उस अंग से संबंधित पवनमुक्तासन कीजिये। भारी एवं स्टार्चयुक्त भोजन ग्रहण करना और शारीरिक परिश्रम की कमी भी इसका कारण है।

चेहरा : 'सूर्य नमस्कार' द्वारा चमकदार व स्वच्छ रंग प्राप्त किया जा सकता है। साथ ही सर्वांगासन, विपरीतकरणी मुद्रा, हलासन, सिंहासन कीजिए।

उपवास अवश्य कीजिये।

'मुँहासा' देखिये।

सूर्य नमस्कार, सिर के बल होने वाले आसन– विशेषकर सर्वांगासन एवं हलासन, पवनमुक्तासन-अभ्यास १६, मत्स्यासन, सुप्त वज्रासन, योगमुद्रा, पद्म सर्वांगासन, पीछे झुककर किये जाने वाले समस्त आसन, ग्रीवासन एवं शीर्ष पादासन।

सभी प्राणायाम, विशेषकर बन्ध सहित भस्त्रिका, मूर्छा प्राणायाम व जालंधर बन्ध, आकाशी मुद्रा, विपरीतकरणी मुद्रा, महाबेध मुद्रा, पाशिनी मुद्रा।

चुल्लिका ग्रंथि : (वृद्धि) 'चुल्लिका' देखिये। 'अंतःस्रावी ग्रन्थि-प्रणाली' भी देखिये।

चिन्ता : (नाड़ीय तनाव) सूर्य नमस्कार, विपरीतकरणी मुद्रा के कुछ आसन, शीर्षासन, सर्वांगासन, कूर्मासन, शशांकासन, योगमुद्रा आसन, आनंद मदिरासन, पश्चिमोत्तानासन, पाशिनी मुद्रा, भुजंगासन, शलभासन, हलासन, गर्भासन, शवासन।

नाड़ी शोधन, कपालभाति, भस्त्रिका, भ्रामरी, मूर्छा, शीतली व शीतकारी प्राणायाम।

शाम्भवी, मांडूकी, भूचरी, योगमुद्रा, योनि मुद्रा और त्राटक।

चर्मरोग : (dermatitis- स्थान-स्थान पर सूजन) 'खाज' देखिये।

चक्कर आना : संतुलन का कोई आसन। प्रकारान्तर सहित शशांकासन व त्राटक।

छाती (breasts) : (विकास) सूर्य नमस्कार, पवनमुक्तासन-अभ्यास १५, लोलासन, पीछे झुकने वाले सभी आसन, सिर के बल किये जाने वाले आसन, गोमुखासन।

छाती (chest) : (सामान्य स्वास्थ्य एवं शक्ति हेतु) सूर्य नमस्कार, पवनमुक्तासन-अभ्यास १ से ६, खड़े होकर एवं झुककर किये जाने वाले आसन, मत्स्यासन, लोलासन, कुक्कुटासन, पीछे झुककर किये जाने वाले आसन, विशेषतः चक्रासन एवं धनुरासन, बक ध्यानासन, नटराज आसन, वृश्चिकासन, **अष्ट** वक्रासन।

जोड़ों में सूजन (arthritis) : औषधि-क्षेत्र में इसका उपचार 'कार्टिजोन' नामक रस द्वारा किया जाता है। सामान्यतः इस रस का स्राव उपवृक्क ग्रन्थियों से होता है। अतः 'उपवृक्क ग्रंथि' में देखिये।

दर्द होने पर इसमें विशेष अंग का अभ्यास या व्यायाम करना चाहिए। पवनमुक्तासन-अभ्यास १ से १६ विशेष लाभप्रद हैं। इस अभ्यास के पूर्व रक्ताभिसरण क्रिया को उत्तेजित करने के लिए नमक मिले गर्म पानी में हाथ डालकर रखना चाहिए।

बिस्तर पर रहने वाले रोगी को प्रति घंटे कम से कम १० बार दीर्घ उदर श्वसन करना चाहिए। रोग की अवस्था के अनुकूल प्राणायाम करना चाहिए– विशेषतः नाड़ी शोधन।

मालिश द्वारा उपचार किया जा सकता है। शिथिलीकरण की यौगिक विधि एवं ध्यानाभ्यास के माध्यम से 'धनात्मक' मानस का निर्माण करना चाहिए।

झुर्रियाँ : 'चेहरा' शीर्षक देखिये।

जुकाम : (रोकथाम) सूर्य नमस्कार व आसन एवं प्राणायाम का नियमित अभ्यास करना चाहिए।

नेति के साथ सिंहासन विशेष लाभप्रद है। जुकाम के लक्षण कुंजल और नेति द्वारा दूर किये जा सकते हैं। सर्दी की स्थिति में साधारण आसनों का अभ्यास करना चाहिए।

ज्वर : 'उदर' देखिये।

जननांग : (सामान्य स्वास्थ्य हेतु एवं दोष - निवारणार्थ)

स्त्रियों के : 'मासिक धर्म' में देखिये।

सूर्य नमस्कार, पवनमुक्तासन – अभ्यास ७ से १० एवं १७ से २१, शक्ति बंध, शिथिलीकरण के सभी अभ्यास, वज्रासन एवं उसमें होने वाले आसन (विशेषतः शशांकासन, मार्जारि आसन, शशांक भुजंगासन, उष्ट्रासन, व्याघ्रासन), कटि चक्रासन, ताड़ासन, मेरु पृष्ठासन, उत्तानासन, त्रिकोणासन, योगमुद्रा आसन, मत्स्यासन, तोलांगुलासन, पीछे झुककर किये जाने वाले सभी आसन, अर्ध मत्स्येन्द्रासन, सिर के बल किये जाने वाले आसन, गरुड़ासन, वशिष्ठासन, पाद अंगुष्ठासन, धनुराकर्षणासन, हनुमानासन।

ये आसन जनन - क्रिया हेतु स्नायुओं को तैयार करते हैं एवं शक्ति प्रदान करते हैं। ये बच्चे के जन्म के उपरांत गर्भाशय को पुनः व्यवस्थित करते हैं। गर्भधारण के प्रथम तीन मास तक इनका अभ्यास किया जा सकता है। बाद में पवनमुक्तासन के सरल अभ्यास किये जा सकते हैं।

योग निद्रा, अजपाजप, ध्यान आदि शिथिलीकरण के अभ्यास बालक के जन्म के पूर्व एवं पश्चात् लाभप्रद हैं।

पुरुषों के : 'लैंगिक समस्या' के अभ्यास। ब्रह्मचर्यासन एवं मयूरासन। प्रोस्टेट ग्रंथि की समस्या हेतु 'प्रोस्टेट ग्रंथि' देखिये।

स्त्रियों एवं पुरुषों के लिये हितकर : सभी बंध, अग्निसार क्रिया और नौलि। अश्विनी मुद्रा, वज्रोली मुद्रा, विपरीतकरणी मुद्रा, महा मुद्रा, महाबेध मुद्रा, पाशिनी मुद्रा।

विशेष : गर्भधारण काल में उड्डियान बंध, अग्निसार क्रिया एवं नौलि को नहीं करना चाहिये।

लिंग संबंधी अधिकांश दोषों की उत्पत्ति तनाव व संवेदनात्मक अव्यवस्था से होती है। अतः 'चिंता' में देखिये।

टांसिल : (वृद्धि) रोकथाम एवं निवारण हेतु 'गला' देखिये।

डिजीनेस (dizziness) : 'चक्कर आना' देखिये।

डिसपोजीशन : योग जीवन की विपरीत परिस्थितियों में शरीर को शांति एवं आशा प्रदान करने वाला रस स्रावित करता है। 'क्रोध' देखिये।

तनाव एवं दबाव : 'चिंता देखिये।

थकावट : यदि इसका कारण हृदय रोग न होकर शारीरिक एवं मानसिक शक्ति की कमी है तो योगाभ्यास द्वारा उपचार संभव है।

इसके कारण सामान्यत: निम्न हैं–

(१) निराशा, निद्रा में कमी, नाड़ीय-तनाव– 'चिंता' देखिये।

(२) पांडु रोग– यह खंड देखिये।

(३) मधुमेह– संबंधित खंड देखिये।

(४) व्यायाम तथा रक्त-संचार की कमी– सभी योगाभ्यास, विशेषत: सूर्य नमस्कार, भुजंगासन, उष्ट्रासन, चक्रासन, धनुरासन, उड्डियान बंध।

दमा : सूर्य नमस्कार का अभ्यास (धीरे-धीरे)। सभी ऐसे आसन जिनमें उदर एवं हृदय से दीर्घ श्वसन होता हो। सर्वांगासन, सुप्त वज्रासन, मार्जारि आसन, उष्ट्रासन, हस्त उत्तानासन, उत्थित लोलासन, द्विकोणासन, मत्स्यासन, पीछे मुड़ने वाले आसन, पाद हस्तासन एवं बद्ध पद्मासन। एकाग्रता सहित श्वास क्रिया।

सभी परिस्थितियों में सदैव उदर श्वसन।

प्राणायाम की प्रस्तावना देखिये।

नाड़ी शोधन, भस्त्रिका, कपालभाति प्राणायाम आदि।

वस्त्र धौति, कुंजल, शंखप्रक्षालन। रोग के निम्न स्तर पर कुंजल भी तुरंत लाभ पहुँचाता है।

यह मनोवैज्ञानिक रोग है, अत: योग निद्रा, अजपाजप, अंतर्मौन आदि का अभ्यास करना चाहिए जिससे किसी प्रकार की नस की कमजोरी या घबराहट दूर हो जाये।

दीर्घकालीन बदहजमी की शिकायत : 'चिंता' देखिये। प्राय: इसका कारण नाड़ीय-तनाव एवं दबाव होता है।

दुर्बल पाचन संस्थान भी इसका एक कारण है। अशुद्ध, भारी, अनुचित विधि से पकाया भोजन एवं अधिक आहार इसका मुख्य कारण है।

'उदर' में दिये गये अभ्यास देखिये।

प्रतिदिन उपवास एवं कुंजल कीजिए।

योग सत्र के प्रारम्भ में शंखप्रक्षालन कीजिए।

दुर्बलता : (मानसिक) उम्र के साथ आने वाली यह मानसिक दुर्बलता है। इस अवस्था को रोका जा सकता है।

सभी ध्यानाभ्यास कीजिये।

धमनियों का कड़ापन (arteriosclerosis) : साधारण एवं संयमित आहार अनिवार्य है। प्राणी-चर्बी से बचिए जिसमें प्रचुर मात्रा में कोलेस्ट्रॉल नामक उपवृक्कीय कॉर्टेक्स रस होता है। रोगी को धूम्रपान बंद करना चाहिए। सभी अभ्यासों से लाभार्जन किया जा सकता है। योग शिक्षक का निर्देश प्राप्त कीजिए।

धूम्रपान : (रोकना) योगाभ्यासियों को चाहिए कि वे इसका त्याग करें।

यदि न करते हों तो प्रारंभ नहीं करना चाहिए। योगनिद्रा जैसी क्रियाओं से संकल्प शक्ति तीव्र होती है। अवचेतन मन में प्रभाव डालकर वह इस आदत का त्याग करा देती है।

नाड़ी : (सामान्य स्वास्थ्य) सभी आसनों एवं बंधों द्वारा नाड़ियों को स्वास्थ्य-लाभ होता है।
नाड़ी शोधन, भस्त्रिका, कपालभाति प्राणायाम, योगमुद्रा, प्राणमुद्रा, विपरीतकरणी मुद्रा, महाबेध मुद्रा, योनि मुद्रा तथा नवमुखी मुद्रा।

नाड़ी में रक्त का जमाव : 'नाड़ी' एवं 'रक्तचाप' देखिये।

नासिका : (रोग) साइनोसाइटिस, सदैव सर्दी, सामान्य अवरोध, सूजन आदि का निरोध एवं निवारण निम्न अभ्यासों द्वारा किया जा सकता है-

प्राणायाम विशेषकर भस्त्रिका, कपालभाति व नेति। 'जुकाम' देखिये।

निराशा : इस क्षेत्र में योग बहुत सहायक है। 'चिंता' के अंतर्गत वर्णित अभ्यास देखिये।

नींद : 'अनिद्रा' देखिये।

पायरिया एवं मसूढ़ा : सिर के बल किये जाने वाले आसन, विशेषकर सर्वांगासन, विपरीतकरणी मुद्रा। इनसे मुख-प्रदेश को प्रत्यक्षतः रक्त की प्राप्ति होती है।

शीतली व शीतकारी प्राणायाम।

प्रत्येक दो या तीन घंटों के उपरांत प्रतिदिन दाँतों की मालिश अंगुलियों से

कीजिये एवं आधे गिलास पानी में गंध-रस डालकर कुल्ला कीजिये। दाँतों की अच्छी सफाई कीजिये।

प्लीहा : 'उदर' देखिये।

प्लूरसी एवं निमोनिया : 'फेफड़ा' देखिये।

पांडु रोग : आहार में सुधार कीजिये।

सूर्य नमस्कार, भुजंगासन, शलभासन, सर्वांगासन, हलासन, मत्स्यासन, पश्चिमोत्तानासन, शीर्षासन, नाड़ी शोधन, शीतली, शीतकारी, उज्जायी प्राणायाम (खेचरी रहित)।

पीठ दर्द : अनेक कारण हैं। निम्न अभ्यासों से शरीर-विन्यास, नाड़ी तनाव तथा सामान्य कड़ेपन में सुधार किया जा सकता है –

सूर्य नमस्कार, पवनमुक्तासन (अभ्यास ६, १६, २०) सुप्त वज्रासन, शशांकासन, मार्जारि आसन, शशांक भुजंगासन, व्याघ्रासन, कटि चक्रासन, ताड़ासन, उत्थित लोलासन, मेरु पृष्ठासन, द्वि कोणासन, त्रिकोणासन, दोलासन, योग मुद्रा आसन। सभी ऐसे आसन जिनमें सामने एवं पीछे झुकना पड़ता है तथा मेरुदण्ड को मोड़ने वाले आसन।

पीलिया : 'यकृत' देखिये।

प्रदर : 'मासिक धर्म' देखिये।

पुरुषों के लैंगिक अंग : 'जननांग' देखिये।

पेचिश : 'आँव' देखिये।

अभिशोषित न कर सकने पर अतिरिक्त अन्न या विष के निष्कासन की यह स्वाभाविक विधि है। चिन्ता-मुक्त रहिये। एक या दो दिन का उपवास उत्तम होगा। कृमि या आँव के जीवाणु द्वारा यह दीर्घकालीन होता है। इस अवस्था में शंखप्रक्षालन अत्युत्तम है।

इस रोग का कारण दीर्घकालीन बदहजमी, आँत-दुर्बलता एवं अधिक मानसिक कमजोरी भी हो सकती है।

पेप्टिक अल्सर : 'अल्सर' देखिये।

पैर : (नाड़ी एवं स्नायु बल) सूर्य नमस्कार, पवनमुक्तासन १ से १० तथा १७ एवं १८, उदराकर्षणासन, उत्तानासन, शलभासन, धनुरासन, सेतु आसन; शीर्ष पादासन, अर्ध चंद्रासन, सामने झुकने वाले सभी आसन, एक पाद

प्रणामासन, गरुड़ासन, बकासन, वशिष्ठासन, वातायनासन, नटराज आसन १ एवं २, उत्थित हस्त पादांगुष्ठासन, कूर्मासन, मयूरासन, हनुमानासन, एक पाद शिरासन, द्वि पाद शिरासन, द्विपाद कंधरासन।

पैर का पंजा एवं अग्र प्रदेश : पवनमुक्तासन १ से ४, ताड़ासन, एक पाद प्रणामासन, वातायनासन, पादांगुष्ठासन।

प्रोस्टेट ग्रंथि : सामान्य स्वास्थ्य हेतु 'जननांग' देखिये। इसकी वृद्धि में भी वही अभ्यास कीजिये।

मूलबन्ध, महाबन्ध, महामुद्रा, महाबेध मुद्रा और वज्रोली मुद्रा का अभ्यास विशेष रूप से कीजिये।

पोलियो : (बाल-लकवा का उपचार एवं निराकरण) अंतर्राष्ट्रीय योग मित्र मण्डल की सभी शाखाओं में इसके उपचार हेतु नौ माह का सत्र आयोजित किया जाता है। पाठ्यक्रम निर्देश करते हुए हाल ही में इस विषय पर लघु पुस्तिका बिहार योग विद्यालय द्वारा प्रकाशित की गयी है। अभ्यासों के अंतर्गत धनुरासन, भुजंगासन, पद्मासन तथा उसके प्रकारान्तर, कन्धरासन, त्रिकोणासन, शीर्षासन, अश्व संचालनासन, हनुमानासन, वातायनासन, योग-मुद्रा, नाड़ी शोधन प्राणायाम, नासिकाग्र दृष्टि एवं प्राण विद्या सम्मिलित हैं।

पीनियल एवं शीर्षस्थ ग्रन्थि : (सामान्य स्वास्थ्य) सूर्य नमस्कार, सिर के बल किये जाने वाले सभी आसन – विशेषकर शीर्षासन, योगमुद्रा, मत्स्यासन, सुमेरु आसन, प्रणामासन, पाद हस्तासन।

प्राणायाम – विशेषतः भ्रामरी और कपालभाति, शाम्भवी मुद्रा, महामुद्रा, त्राटक, नेति।

पोषण-विकार : 'स्नायु-विकार' देखिये।

फेफड़ा : (सामान्य स्वास्थ्य हेतु एवं दोषों के निवारणार्थ) सूर्य नमस्कार, सुप्त वज्रासन, उष्ट्रासन, हस्त उत्तानासन, उत्थित लोलासन, मत्स्यासन, बद्ध पद्मासन, पीछे मुड़ने वाले सभी आसन, सर्वांगासन।

सभी प्राणायाम। अधिकतम दीर्घ यौगिक श्वसन।

'दमा' देखिये।

फोड़ा : अशुद्ध रक्त इसका कारण है। 'मुँहासा' देखिये।

बहरापन : सिर के बल किये जाने वाले आसन।

कुछ सीमा तक नेति सहायक है।

बदहजमी : 'दीर्घकालीन बदहजमी' देखिये।

बरसिटिस : पवनमुक्तासन – अभ्यास १ से १६ (धीरे-धीरे)।

बवासीर : यदि अपचन का इसके साथ योग है तो सर्वप्रथम अपचन का उपचार कीजिये।

सिर के बल किये जाने वाले आसन रक्त-संचार को सुचारु एवं रुके हुए रक्त को मुक्त करते हैं। लम्बी अवधि तक विपरीतकरणी मुद्रा एवं सर्वांगासन कीजिये। इसके साथ अश्विनी मुद्रा एवं मूल बंध का अभ्यास भी कीजिये।

आँत : आकुंचन लहरी को उत्प्रेरित करने वाले आसन लाभप्रद हैं, जैसे पवनमुक्तासन-अभ्यास १७ से २१, सुप्त वज्रासन, शशांकासन, शशांक भुजंगासन, उष्ट्रासन, मत्स्यासन, पश्चिमोत्तानासन तथा उसके प्रकारान्तर। अपचन के लिए वर्णित सभी अभ्यास कीजिये।

बाल : 'गंजापन' देखिये।

भूख : योगाभ्यास से वृद्धि होती है। विशेष अभ्यास सामने एवं पीछे झुकने वाले आसन, अग्निसार क्रिया, उड्डियान बन्ध, नौलि हैं।

भुजा : पवनमुक्तासन – ११ से १५, शक्ति बन्ध १ से ६, आकर्ण धनुरासन, ललासन, सूर्य नमस्कार, बक ध्यानासन, वशिष्ठासन, नटराज आसन, द्वि हस्त भुजंगासन, सन्तुलन आसन, धनुराकर्षण आसन, गोमुखासन, वृश्चिकासन, मयूरासन।

मधुमेह :

सूर्य नमस्कार, ताड़ासन, योगमुद्रा, शशांकासन, सुप्त वज्रासन, पश्चिमोत्तानासन, भुजंगासन, हलासन, सर्वांगासन, मत्स्यासन, अर्ध मत्स्येन्द्रासन, गोमुखासन, द्वि हस्त भुजंगासन, वातायनासन, शवासन, नाड़ी शोधन, भ्रामरी, भस्त्रिका, उज्जायी प्राणायाम, अजपा जप, योगनिद्रा एवं शंखप्रक्षालन।

नियमबद्ध भोजन कीजिये।

मानसिक अव्यवस्था : 'चिन्ता' देखिये।

मोटापा : 'चर्बी का जमाव' देखिये।

मूर्छा : 'उन्माद' देखिये।

मासिक धर्म : (बन्द होने की स्थिति में) इस स्थिति में अधिकतर शारीरिक एवं मानसिक तनाव उत्पन्न हो जाता है।

अभ्यास : सिर के बल किये जाने वाले सभी आसन – खासकर शीर्षासन।

सूर्य नमस्कार, भुजंगासन, धनुरासन, मत्स्यासन, पश्चिमोत्तानासन, उड्डियान बन्ध, मूल बन्ध, अश्विनी मुद्रा, वज्रोली मुद्रा, महामुद्रा, महावेध मुद्रा। योगनिद्रा, अजपा जप एवं सभी ध्यानाभ्यास।

मासिक धर्म - सम्बन्धी तकलीफ : इसके अन्तर्गत श्वेत द्रव का प्रवाह, पेट दर्द, अधिक या कम रज - प्रवाह सम्मिलित हैं।

वज्रासन, शशांकासन, मार्जारि आसन तथा शवासन में उदर श्वसन द्वारा कष्ट कम किया जा सकता है।

इसमें नियमितता लाने के लिए सूर्य नमस्कार, भुजंगासन, शलभासन, धनुरासन, पश्चिमोत्तानासन, कन्धरासन, शीर्षासन (विशेष रूप से), सर्वांगासन, हलासन, हनुमानासन, सभी बन्ध (विशेषकर मूल बन्ध), अश्विनी मुद्रा, विपरीतकरणी मुद्रा, वज्रोली आदि का अभ्यास करें।

मुँहासा : सूर्य नमस्कार (अधिकतम आवृत्ति), सर्वांगासन, विपरीतकरणी मुद्रा, हलासन, प्राणायाम (सभी), शंखप्रक्षालन तथा नियमबद्ध भोजन। अधिक चाय, मिठाई, चर्बीयुक्त भोजन का त्याग कीजिये।

मेरुदंड : 'स्लिप डिस्क' एवं 'साइटिका' देखिये।

दर्द में एवं स्वास्थ्य हेतु 'पीठ दर्द' देखिये।

मूत्र - प्रणाली : (स्वास्थ्य हेतु एवं दोष निवारणार्थ) 'वृक्क' एवं 'जननांग' के अन्तर्गत वर्णित अभ्यास देखिये।

यकृत : (सामान्य स्वास्थ्य हेतु एवं सम्बन्धित दोषों जैसे पीलिया, निष्क्रियता आदि में)

उदर के सभी व्यायाम, विशेषतः पश्चिमोत्तानासन, मेरुदंडासन, उत्थित मेरुदंडासन, अर्ध पद्म पादोत्तानासन तथा शंखप्रक्षालन।

रक्तचाप :

उच्च दाब – पवनमुक्तासन - अभ्यास १ से १६, आनन्द मदिरासन एवं शिथिलीकरण का कोई भी अभ्यास कीजिये।

सरल प्राणायाम, विशेषतः नाड़ी शोधन (प्रथम एवं द्वितीय अवस्था)।

शीतली, शीतकारी, उज्जायी, भ्रामरी प्राणायाम।

ध्यानाभ्यास।

भारी भोजन व नमक से बचिये।

निम्न दाब– सूर्य नमस्कार एवं अन्य अभ्यास, शक्ति के अनुसार व नियमित रूप से।

सभी प्राणायाम, विशेषतः भस्त्रिका।

सभी बन्ध।

विपरीतकरणी मुद्रा।

लकवा: पोलियो, स्नायु विकार, मानसिक अव्यवस्था शीर्षक देखिये।

विकास: अविकसित बच्चों के लिए– सूर्य नमस्कार, हस्त उत्तानासन, ताड़ासन, त्रिकोणासन, चक्रासन, धनुरासन, पश्चिमोत्तानासन, पाद हस्तासन, अर्ध मत्स्येन्द्रासन, शीर्षासन, सर्वांगासन (विशेष महत्वपूर्ण), हलासन, जालन्धर बंध।

वायु: (आँत से निकास) पवनमुक्तासन- १७ से २१, शशांकासन, सुप्त वज्रासन, शशांक भुजंगासन, कटि चक्रासन, योग मुद्रा आसन, मत्स्यासन, सामने झुकने वाले सभी आसन, हलासन, द्रुत हलासन, हंसासन, मयूरासन, उत्तान पृष्ठासन।

उड्डियान बंध, अग्निसार, नौलि, भस्त्रिका, कपालभाति, तड़ागी मुद्रा। शंखप्रक्षालन, लघु शंखप्रक्षालन।

बस्ति, कुंजल।

भोजनोपरांत १० मिनट तक वज्रासन।

वृक्क: (स्वास्थ्य हेतु एवं दोष निवारण हेतु)

सूर्य नमस्कार, सुप्त वज्रासन, शशांकासन, मार्जारि आसन, शशांक भुजंगासन, व्याघ्रासन, त्रिकोणासन, मत्स्यासन, पीछे मुड़ने के सभी आसन, पश्चिमोत्तानासन, अर्ध मत्स्येन्द्रासन, हलासन, गोमुखासन, उष्ट्रासन, मेरुदंडासन, हंसासन, मयूरासन, कूर्मासन, द्विपाद शिरासन।

अग्निसार क्रिया, उड्डियान बंध, नौलि, भस्त्रिका प्राणायाम।

शंखप्रक्षालन विशेष लाभप्रद है। जल अधिक पीजिये।

अधिक कष्ट की अवस्था में नमक कम खाइये।

वाणी यंत्र : मधुर वाणी के लिए सिंहासन व भ्रामरी, उज्जायी, शीतकारी प्राणायाम कीजिये। 'गला' देखिये।

वात : 'अस्थि सूजन' (arthritis) देखिये। इससे कुछ भिन्नता लिए हुए यह रोग है।

वाणी - विकार : बचपन का दबाव एवं तनाव मूल कारण होता है। 'चिंता' के अभ्यास देखिये।

विशेष अभ्यास नौकासन, संतुलन के सभी आसन, मयूरासन, भ्रामरी प्राणायाम हैं।

यदि कारण जिह्वा या जबड़े का विकार हो तो सिंहासन व शीतली, शीतकारी प्राणायाम लाभप्रद हैं।

व्यक्तित्व : 'डिसपोजीशन' देखिये।

शीर्षस्थ ग्रन्थि विकार : 'उपवृक्क ग्रंथि' देखिये।
शरीर गह्वरों में पतले द्रव का जमाव : 'वृक्क' देखिये।

संक्रामक रोग : योगाभ्यास द्वारा शरीर में रोग के कीटाणुओं से लड़ने की शक्ति आ जाती है।

सिर दर्द : प्राथमिक कारण देर तक गलत शरीर विन्यास में बने रहना है। मानसिक तनाव, चिंता तथा सामान्य कड़ापन अन्य कारण हैं।

पीठ - दर्द से निकट सम्बन्ध है। 'पीठदर्द' के अभ्यास देखिये।

अभ्यास – नाड़ी शोधन प्राणायाम, भ्रामरी, नेति, ५ से १० मिनट तक।

शिथिलीकरण (किसी भी विधि से)। नेत्रों पर तनाव न डालिए।

नेत्रों का अभ्यास १ कीजिये।

कुछ अन्य कारण अपचन, मासिक धर्म की अनियमितता, साइनोसाइटिस आदि हैं, अतः इनसे संबंधित अभ्यास देखिये।

सुस्ती : 'थकावट' देखिये।

स्त्रियों के प्रजनन अंग एवं ग्रंथियाँ : 'जननांग' देखिये।

स्नायु : पवनमुक्तासन से विकास होता है। शरीर के सभी स्नायुओं को शक्ति प्रदान करने के लिए सूर्य नमस्कार लाभप्रद है।

आंतरिक स्नायुओं, हृदय व यकृत का विकास तथा उन्हें शक्ति प्रदान करने के

लिए उनसे संबंधित आसन एवं बंधों के अभ्यास कीजिये।

स्नायु-विकार : नियमित अभ्यास अनिवार्य है। पवनमुक्तासन - अभ्यास १ से १६ कीजिये।

स्मृति : एकाग्रता के सभी अभ्यास।

संधि : सूर्य नमस्कार तथा पवनमुक्तासन – अभ्यास १ से १६।

साइटिका : पवनमुक्तासन – अभ्यास १ से ५, शिथिलीकरण के सभी अभ्यास, मत्स्य-क्रीड़ासन, मकरासन, समस्त पीछे झुकने के अभ्यास।

सामने झुकने के अभ्यास मत कीजिये।

स्लिप डिस्क : सामने झुकने के अभ्यास वर्जित हैं। अद्वासन में शिथिलीकरण, ज्येष्टिकासन, मकरासन (दीर्घकालीन), सोते समय एवं जाग्रतावस्था में यदि रोगी की स्थिति गंभीर हो तो धीरे-धीरे भुजंगासन (विशेष प्रकारांतर स्फिंक्स), मेरु वक्रासन व भू नमनासन लाभप्रद हैं।

हाइड्रोसिल : रोगी की क्षमतानुसार धीरे-धीरे सूर्य नमस्कार का अभ्यास, अधिकतम अवधि तक वज्रासन, सभी आसन जो सिर के बल किये जाते हैं, गरुड़ासन, वातायनासन, ब्रह्मचर्यासन।

मूल-बंध, अश्विनी मुद्रा, विपरीतकरणी मुद्रा, वज्रोली।

ह्रदय में दर्द : शवासन, उज्जायी प्राणायाम, योग-निद्रा, अजपाजप, अंतर्मौन, शिथिलीकरण की कोई प्रक्रिया।

'हे' फीवर : (नासिका एवं नेत्रों में सूजन – एक प्रकार का पराग स्पर्श-दोष) सिंहासन, प्राणायाम (भस्त्रिका, कपालभाति), कुंजल, नेति से निवारण होता है।

हाथ : पवनमुक्तासन – अभ्यास ११, १२, १३ एवं हाथ के सभी व्यायाम।

ह्रदय : 'रक्तचाप' देखिये।

सभी योगाभ्यास से लाभ की प्राप्ति होती है।

हाथी पाँव : जीवाणुओं से बचाव के लिए शरीर को शक्ति प्रदान करने के लिए सभी योगाभ्यास लाभप्रद हैं। आत्मविश्वास से इन अभ्यासों में वृद्धि कीजिये तथा स्वतः उपचार के योग्य बनिये।

क्षय रोग : 'यकृत' के अंतर्गत वर्णित आसन लाभप्रद हैं परन्तु योग शिक्षक से पूर्व निर्देश अवश्य प्राप्त कीजिये।

वर्ण-क्रमानुसार अभ्यास सूची

अन्तर राष्ट्रीय योग मित्र मण्डल

यह एक दातव्य एवं दार्शनिक आंदोलन है। इसका शंखनाद परमहंस सत्यानन्द जी द्वारा योग संस्कृति को विश्वव्यापी बनाने हेतु सन् १९५६ में राजनाँदगाँव में किया गया।

यह सम्बद्ध केन्द्रों द्वारा परमहंस सत्यानन्दजी की शिक्षाओं के प्रचार का एक माध्यम है।

परमहंस निरंजनानन्द जी अन्तर्राष्ट्रीय योग मित्र मण्डल के परमाचार्य हैं।

यह सुव्यवस्थित योग प्रशिक्षण कार्यक्रम एवं मार्गदर्शन उपलब्ध कराता है और सभी सम्बद्ध योग शिक्षकों, केन्द्रों एवं आश्रमों के लिए शिक्षा के स्तर का निर्धारण करता है।

सभी संन्यासी शिष्यों, योग शिक्षकों, आध्यात्मिक जिज्ञासुओं एवं शुभचिन्तकों के लोकोपकारी कार्यों को संघटित एवं समेकित करने के लिए सन् १९९३ के विश्व योग सम्मेलन के समय इसका एक घोषणा पत्र जारी किया गया।

इस घोषणा पत्र के कार्यान्वयन में सहयोग का इच्छुक हर व्यक्ति योग सम्बन्धी दूरगामी परियोजनाओं में सक्रिय रूप से भाग लेकर विश्व के लिए सद्भाव और शान्ति का सन्देशवाहक बन सकता है।

महासचिव

स्वामी सत्यव्रतानन्द	१९५६-१९७१
स्वामी धर्मशक्ति	१९७१ से वर्तमान तक

बिहार योग विद्यालय

यह एक दातव्य एवं शैक्षणिक संस्था है। विश्व मानवता को योग परम्परा से अवगत कराने के लिए परमहंस सत्यानन्द जी द्वारा इस संस्था की स्थापना सन् १९६३ में की गयी।

परमहंस निरंजनानन्द जी इस संस्था के प्रधान संरक्षक हैं।

जन समुदाय को योग की प्राचीन पद्धति की ओर वापस लाने के प्रयासों का केन्द्र है।

शिवानन्द आश्रम के नाम से जाना जाने वाला प्रारम्भिक विद्यालय अब मुंगेर के स्थानीय लोगों के लिए कार्यरत है।

नये आश्रम गंगा दर्शन की स्थापना सन् १९८१ में हुई। यह स्थल थोड़ी दूर पर प्रवाहित होती हुई गंगा की अनुपम छटा से विभूषित है।

यहाँ वर्ष भर स्वास्थ्य रक्षा सत्र, योग साधना, क्रिया योग तथा अन्य विशेष सत्र आयोजित किये जाते हैं।

यह योग सम्मेलनों एवं शिविरों के संचालन तथा व्याख्यान देने हेतु पूरे विश्व को प्रशिक्षित संन्यासी एवं शिक्षक उपलब्ध कराता है।

यहाँ एक समृद्ध पुस्तकालय, वैज्ञानिक अनुसंधान केन्द्र एवं आधुनिक प्रिन्टिंग प्रेस है।

अपनी विशिष्ट संन्यास एवं योग प्रशिक्षण पद्धति तथा महिलाओं एवं विदेशियों को संन्यास में दीक्षित करने के कारण यह एक ख्याति प्राप्त संस्था है।

अध्यक्ष

परमहंस सत्यानन्द	१९६३-१९८३
परमहंस निरंजनानन्द	१९८३-१९९४
स्वामी ज्ञानप्रकाश	१९९४ से वर्तमान तक

शिवानन्द मठ

शिवानन्द मठ एक सामाजिक तथा दातव्य संस्था है। इसकी स्थापना सन् १६८४ में परमहंस सत्यानन्द जी द्वारा अपने गुरु स्वामी शिवानन्द जी की स्मृति में की गयी।

इसका मुख्यालय अब बिहार राज्य के देवघर जिले के रिखिया ग्राम में है। परमहंस निरंजनानन्द जी इस संस्था के प्रधान संरक्षक हैं।

इसका लक्ष्य समाज के शोषित पीड़ित एवं पिछड़े वर्गों, विशेषकर ग्रामीण समुदाय के विकास एवं उत्थान के लिए आवश्यक सुविधायें उपलब्ध कराना है।

संस्था के कार्य हैं-नि:शुल्क छात्रवृत्तियाँ, कपड़े, पालतू पशुओं एवं खाद्य सामग्रियों का वितरण, नलकूपों की खुदाई, जरूरतमन्दों के लिए आवासों का निर्माण, किसानों के खेतों की जुताई एवं सिंचाई के कार्यो में सहायता पहुँचाना।

चिकित्सा सेवा उपलब्ध कराने हेतु एक छोटे चिकित्सालय का निर्माण किया गया है और मवेशियों के उपचार की सुविधा भी उपलब्ध कराई जाती है।

शिवानन्द मठ की गतिविधियों के संचालन हेतु निर्मित तीन मंजिला त्रिभुवन कार्यालय गाँव के लोगो को विश्व की घटनाओं से अवगत कराने के लिए "सेटेलाइट डिश" भी लगाएगा।

सभी सेवायें सार्वभौम रूप से समस्त जातियों एवं धर्मों के लोगों को प्रदान की जाती हैं।

अध्यक्ष

स्वामी अमृतानन्द	१६८४-१६८७
स्वामी हरिप्रेमानन्द	१६८७-१६८६
स्वामी सिद्धेश्वरानन्द	१६८६-१६६१
स्वामी ओंकारानन्द	१६६१ से वर्तमान तक

योग शोध संस्थान

इस वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थान की स्थापना परमहंस सत्यानन्द जी द्वारा मुंगेर में सन् १६८४ में की गयी थी।

परमहंस निरजनानन्द जी इस संस्था के प्रधान संरक्षक हैं।

इस शोध संस्थान का उद्देश्य वैज्ञानिक ढाँचे के अन्तर्गत योग का सही मूल्याँकन प्रस्तुत करना, तथा मानव के भावी विकास के संदर्भ में इसे एक आवश्यक विज्ञान के रूप में प्रतिष्ठित करना है।

स्वास्थ्य के क्षेत्र में योगानुसंधान से सम्बद्ध देश-विदेश के सौ से भी अधिक चिकित्सा शास्त्रियों की एक संगोष्ठी का आयोजन मुंगेर में वर्ष १६८८ तथा १६८६ को किया गया।

श्वसन सम्बन्धी रोगों पर योग के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए वर्तमान में विश्वभर के लगभग १०,००० मरीजों पर एक अन्तरराष्ट्रीय अनुसंधान कार्यक्रम चलाया जा रहा है।

भविष्य की योजनायें हैं–शारीरिक मानसिक स्वास्थ्य एवं आध्यात्मिक उन्नति के लिए योग के कम प्रचलित पक्षों पर साहित्यिक, शास्त्रीय, चिकित्सात्मक एवं वैज्ञानिक अनुसंधान।

अध्यक्ष

स्वामी वज्रपाणि	१६८४-१६८६
स्वामी गुरुकृपा	१६८६-१६६३
स्वामी सूर्यमणि	१६६३ से वर्तमान तक

बिहार योग भारती

बिहार योग भारती की स्थापना योग विज्ञान के उच्च अध्यापन हेतु परमहंस निरंजनानन्द द्वारा सन् १९९४ में एक शैक्षणिक एवं दातव्य संस्था के रूप में की गयी।

यह स्वामी शिवानन्द सरस्वती एवं परमहंस सत्यानन्द जी के स्वप्न का साकार रूप है।

परमहंस निरंजनानन्द जी इस संस्था के कुलाधिपति हैं।

बिहार योग भारती विश्व में योग अध्ययन के क्षेत्र में एम. ए., एम. एस. सी., एम. फिल., पी. एच. डी. एवं डी. लिट्. इत्यादि उपाधियाँ प्रदान करने वाली अपनी तरह की पहली संस्था होगी।

इसमें योगदर्शन, योग मनोविज्ञान एवं व्यावहारिक योग विज्ञान विभाग के माध्यम से आज की आवश्यकतानुसार पूर्ण वैज्ञानिक ढंग से योग शिक्षण एवं प्रशिक्षण दिया जाता है।

वर्तमान में बि. यो. भा. अपने गुरुकुल वातावरण में वार्षिक एवं द्विवार्षिक आवासीय सत्रों का आयोजन करता है, ताकि योग शिक्षण के साथ-साथ विद्यार्थियों को मानवता के प्रति सेवा, समर्पण और करुणा की शिक्षा भी मिले।

कुलपति

स्वामी शंकरानन्द   १९९४ से वर्तमान तक

श्री पंचदशनाम परमहंस अलख बाडा

श्री पंचदशनाम परमहंस अलखबाडा की स्थापना परमहंस सत्यानन्द सरस्वती द्वारा बिहार के देवघर जिले के रिखिया नामक स्थान में सन् १९९० में की गयी।

यह दातव्य एवं शैक्षणिक संस्था है। इसका लक्ष्य संन्यास की उच्चतम परमराओं-वैराग्य, त्याग और तपस्या को बनाए रखना तथा उनका प्रचार प्रसार करना है।

इसकी जीवन शैली वैदिक युग में ऋषि-मुनियों द्वारा अपनायी गयी तपोवन शैली पर आधारित है। अलखबाडा में केवल संन्यासी, वैरागी, तपस्वी और परमहंस प्रवेश पा सकते हैं।

अलखबाडा में योग शिक्षण जैसा कोई कार्यक्रम संचालित नहीं किया जाता, और न किसी धर्म या धार्मिक अवधारणाओं पर प्रवचन ही दिया जाता है।

अलखबाडा के लिए निर्देशित साधना तपस्या और स्वाध्याय या आत्मचिन्तन की वैदिक परम्परा पर आधारित है।

परमहंस सत्यानन्द जी अब यहाँ स्थायी रूप से निवास करने लगे हैं। वे निरन्तर पंचाग्नि साधना एवं अन्य अन्य साधनाओं में लीन रहते हैं। इस प्रकार वे भावी परमहंसों के लिए इस महान् परम्परा को कायम रखने का मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं।

अध्यक्ष

स्वामी धर्मशक्ति   १९९० से वर्तमान तक

INTERNATIONAL YOGA FELLOWSHIP

ISBN:81-85787-52-2